पाक,
धियां
और
तेष्ठित
देयता
नारस
रतीय
प्रन्थ

माणा-
ायुर्वेद,

महामण्डल ने इस ग्रन्थ की विशेषताएं निम्नानुसार दर्शाई हैं—

(१) भस्मप्रकरण में "कृष्ण-गोपाल धर्मार्थ औषधालय" की रसायन शाला में जिस विधि से भस्में बनाई जाती हैं, जो शतशोऽनुभूत हैं, उन्हें दिल खोल कर लिख दिया है। इतना ही नहीं, उनका गुण विवेचन भी विस्तार पूर्वक लिखा है।

(२) कूपीपक्व रसायन अर्थात् मकरध्वज, चन्द्रोदय आदि बनाने की सरल अनुभूत विधियाँ, जैसी इस संग्रह में हैं वैसी किसी भी संस्कृत, हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला आदि भाषा ग्रन्थों में नहीं हैं।

(३) अनुक्रमणिका भी दो प्रकार से दी है यथा-रोगानुसार और औषधियों के नामानुसार। रोगानुसार औषध सूची में विशेषता यह है, कि उपद्रवभेद और वातादि दोष भेदानुसार औषधि भेद दिखाये गये हैं।

कृष्णगोपाल ग्रन्थमाला का २० वाँ रत्न

माधवनिदानम्

(मूलमात्र)

श्री आचार्य माधवकर प्रणीतम्

संस्था की ओर से भेंट

प्रकाशक

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेडा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

प्रथम संस्करण
प्रति २०००
१९५६ ई०

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम्।
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत्॥

❀ ❀ ❀

यस्तु रोगमविज्ञाय कर्माण्यारभते भिषक्।
अप्यौषधविधानज्ञस्तस्य सिद्धिर्यदृच्छया॥

❀ ❀ ❀

यस्तु रोगविशेषज्ञः सर्वभैषज्यकोविदः।
देशकालप्रमाणज्ञस्तस्य सिद्धिरसंशयम्॥

च० सं० सू० २०-२४।२६

मुद्रक—
ठाकुर नाथूसिंह राठौड़
कृष्णगोपाल मुद्रणालय
कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

* निवेदन *

यह बात सभी विद्वान् वैद्य जानते हैं कि चिकित्सा कार्य में निदान ज्ञान की पूर्ण आवश्यकता है। बिना निदान ज्ञान प्राप्त किये यदि चिकित्सा की जाय, तो रोग की शांति बहुधा नहीं होती और कई बार चिकित्सक को अपयश का भागी भी होना पड़ता है।

भगवान आत्रेय कहते हैं कि:—

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम् ।
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥

इस वचन से भगवान् आत्रेय रोगनिदान की आवश्यकता दर्शाई है; किन्तु चरक, सुश्रुत, अष्टांगहृदय आदि संहिता ग्रन्थों में रोगों का निदान एक स्थान पर न देकर प्रकरणवश अनेक स्थानों पर कहीं सूक्ष्म और कहीं विस्तृत रूप में दिया गया है। इस हेतु से छात्र एवं सामान्य वैद्य आयुर्वेदिक निदान में पूर्ण योग्य नहीं हो सकते थे। इस कमी को दूर करने के लिए श्री० आचार्य माधवकर ने वृहत् संहिता ग्रन्थ चरक, सुश्रुत, अष्टांगहृदय आदि से निदानोपयोगी भाग को ग्रहण कर इस "माधव निदान" नामक संग्रह ग्रन्थ की निश्चित क्रमानुसार रचना की।

निदानोपयोगी इस ग्रन्थ को अत्यन्त उपयोगी मान कर अनेक आयुर्वेद के विद्वानों ने संस्कृत और हिन्दी आदि भाषाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार की टीकायें की हैं। एवं इस ग्रन्थ को अनेक परीक्षा समितियों ने भी आयुर्वेदिक पाठ्य-क्रम में सम्मिलित कर इस पुस्तक की उपयोगिता को बढ़ा दिया है।

कुछ समय से कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन ने ज्ञान से परिमार्जित छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना की है, जिससे सस्ते दामों में छात्र एवं सामान्य वैद्य भी लाभ ले सकें। इस उद्देश्य से इस पुस्तक को सर्वोपयोगी मानकर इस संगृहीत ग्रन्थ के मूल भाग का प्रकाशन कराया है।

वर्तमान में जो 'माधवनिदान' मिलता है उसमें वर्णित समस्त पाठ देकर साथ-साथ आधुनिक रोगों का वर्णन जो चरक, सुश्रुत, अष्टांग हृदय में नहीं है। आर्ष ग्रन्थों के पश्चात् बने संगृहीत ग्रन्थों में से ग्रहण कर यथा स्थान देकर पुस्तक को और भी उपयोगी बनाया है।

मूलमात्र माधवनिदान प्रकाशित करने के समय निर्णय सागर प्रेस से प्रकाशित माधवनिदान (मधुकोश और आतङ्कदर्पण व्याख्यासह) और क्षेमराज श्रीकृष्ण दास से प्रकाशित हिंदी टीका सह माधवनिदान का आधार लिया है, इन प्रकाशकों का हम आभार मानते हैं।

आजकल प्रायः आयुर्वेद के छात्र एवं सामान्य वैद्य-समाज रोगों के एलापैथिक नामों से अनभिज्ञ है। चिकित्सा कार्य में कभी-कभी डाक्टरों का मुकाबला होने पर बड़ी कठिनाई होती है, अतः पुस्तक के अन्त भाग में रोगों का डाक्टरी तथा संस्कृत नाम भी दिया गया है। इसमें परिश्रम बहुत करना पड़ा है और पुस्तक के पृष्ठ भी बढ़ गये हैं।

आयुर्वेद और एलोपैथी की परिभाषा का आधार विभिन्न नियमों पर रहा है। इस हेतु से पर्याय शब्द पूर्णांश समान नहीं बन सकता; तथापि रोगों के लक्षण अधिकांश में मिलते जुलते रहने पर उसे ही पर्याय शब्द मान लिया गया है।

उक्त सूचीको तैयार करनेमें सद्गत पं० जादवजी त्रिकमजी आचार्य की सूचीका आधार लियागया है। इसलिए उनके हम आभारी हैं। यद्यपि वह सूची अति संक्षिप्त है, तथापि दूसरी विस्तृत सूची हमें नहीं मिल सकी है। इस तरह साधनों की न्यूनता और बुद्धिमांद्य आदि दोषों से भूलें और न्यूनता रह गई हो, यह संभवित है। इस सम्बन्ध में हम क्षमा प्रार्थी हैं।

विद्वान और अनुभवी चिकित्सकों का कृपा प्रसाद मिलने पर अपूर्णता की पूर्ति नूतन संस्करण में कर ली जायगी। इसके लिए हम उचित प्रयत्न करेंगे।

यदि इस प्रकाशित सूची से विद्यार्थी वर्ग को थोड़ी बहुत सहायता मिलेगी, तो हम हमारा परिश्रम सफल मानेंगे ।

पुस्तक में अधिक अशुद्धि न हो, इस लिए यथा शक्य सम्हाल रखा गया है। फिर भी सामान्य मात्राओं की कुछ अशुद्धि रह गई हैं । एवं कुछ पृष्ठो में मात्राएं टूटने से अशुद्धियां नयी हो गई है । इस सम्बन्ध में हम पाठकों से करबद्ध क्षमा याचना करते हैं ।

पुनश्च

पारिभाषिक शब्द सूची का अधिकांश छप जाने पर श्री० डॉ० भास्कर गोविंद घाणेकर B. Sc; M. B. B. S. आयुर्वेदाचार्य की सुश्रुत संहिता निदान स्थान की टीका मिली । उस ग्रन्थ में अनेक पारिभाषिक शब्द हैं । जिनका उपयोग परिभाषा मिलाने के लिए नये संस्करणमें हो सकेगा ।

पृष्ठ २४१ से २४४ तक का अन्तर्भाव पहले के पृष्ठों में हो जाने से उनको हटा दिया गया है ।

ता० १०-११-५६
(गोपाष्टमी २०१३)
कालेड़ा-कृष्णगोपाल
(अजमेर)

विनीत—
नाथूसिंह वर्मा
उपाध्यक्ष
कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

माधवनिदानान्तर्गत विषयाणामनुक्रमणिका

रोगनामानि		पृष्ठानि

विषयानुक्रमणिका

ज्वरोऽतिसारो ग्रहणी चार्शोऽजीर्णं विसूचिका ।
अलसश्च विलम्बी च क्रिमिरुक् पाण्डुकामलाः ॥ १ ॥
हलीमकं रक्तपित्तं राजयक्ष्मा उरःक्षतम् ।
कासो हिक्का सह श्वासैः स्वरभेदस्त्वरोचकः ॥ २ ॥
छर्दिस्तृष्णा च मूर्च्छाद्या रोगाः पानात्ययादयः ।
दाहोन्मादावपस्मारः कथितोऽथाऽऽनिलामयः ॥ ३ ॥
वातरक्तमूरुस्तम्भ आमवातोऽथ शूलरुक् ।
पक्तिजं शूलमानाह उदावर्त्तोऽथ गुल्मरुक् ॥ ४ ॥
हृद्रोगो मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातस्तथाश्मरी ।
प्रमेहो मधुमेहश्च पिटिकाश्च प्रमेहजाः ॥ ५ ॥
मेदस्तथोदरं शोथो वृद्धिश्च गलगंडकः ।
गण्डमालाऽपची ग्रन्थिरर्बुदं श्लीपदं तथा ॥ ६ ॥
विद्रधिर्व्रणशोथश्च द्वौ व्रणौ भग्ननाडिके ।
भगन्दरोपदंशौ च शूकदोषस्त्वगामयः ॥ ७ ॥
शीतपित्तमुदर्दश्च कोठश्चैवाम्लपित्तकम् ।
विसर्पश्च सविस्फोटः सरोमान्त्यो मसूरिकाः ॥ ८ ॥
क्षुद्राऽऽस्य कर्णनासाऽक्षि शिरः स्त्रीबालकामयाः ।
विषं चेत्ययमुद्दिष्टो रुग्विनिश्चयसंग्रहः ॥ ९ ॥

लोकप्रिय प्रकाशन

यदि तुलनार्थ रोग निदान और रोग परीक्षा एलोपैथिक विचार धारा के अनुरूप विस्तार से जानना चाहते हैं, तो आप इस संस्था से प्रकाशित निम्न ग्रन्थों का अध्ययन करें।

ज्वर विज्ञान अजिल्द	मू० ३) रु०
चिकित्सा तत्त्वप्रदीप प्रथम खण्ड अजि०	मू० ९) रु०
,, ,, द्वितीय ,, ,,	मू० ८) रु०
नेत्ररोग विज्ञान सजिल्द	मू० १५) रु०
सिद्ध परीक्षा पद्धति अजिल्द	मू० ८) रु०

सबका पैकिंग पोस्टेज पृथक् होगा।

व्यवस्थापक

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

॥ ॐ ॥

श्री धन्वन्तरये नमः

माधवनिदानम्

मूल-मात्र

पञ्चनिदानलक्षणम्

प्रणम्य जगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारणम् ।
स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं त्रैलोक्यशरणं शिवम् ॥ १ ॥
नानामुनीनां वचनैरिदानीं,
समासतः सद्भिषजां नियोगात् ।
सोपद्रवारिष्टनिदानलिङ्गो,
निबध्यते रोगविनिश्चयोऽयम् ॥ २ ॥
नानातंत्रविहीनानां भिषजामल्पमेधसाम् ।
सुखं विज्ञातुमातङ्कमयमेव भविष्यति ॥ ३ ॥
निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ।
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पञ्चधा स्मृतम् ॥ ४ ॥
निमित्तहेत्वायतनप्रत्ययोत्थानकारणैः ।
निदानमाहुः पर्यायैः प्राग्रूपं येन लक्ष्यते ॥ ५ ॥
उत्पित्सुरामयो दोषविशेषेणानधिष्ठितः ।
लिङ्गमव्यक्तमल्पत्वाद्व्याधीनां तद्यथायथम् ॥ ६ ॥
तदेव व्यक्ततां यातं रूपमित्यभिधीयते ।
संस्थानं व्यञ्जनं लिङ्गं लक्षणं चिह्नमाकृतिः ॥ ७ ॥

हेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम् ।
औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम् ॥ ८ ॥
विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमिति स्मृतः ।
विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्याभिसंज्ञितः ॥ ९ ॥
यथा दुष्टेन दोषेण यथा चानुविसर्पता ।
निर्वृत्तिरामयस्याऽसौ सम्प्राप्तिर्जातिरागतिः ॥१०॥
संख्याविकल्पप्राधान्यबलकालविशेषतः ।
सा भिद्यते यथाऽत्रैव वक्ष्यन्तेऽष्टौ ज्वरा इति ॥११॥
दोषाणां समवेतानां विकल्पोंऽशांशकल्पना ।
स्वातंत्र्यपारतंत्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत् ॥१२॥
हेत्वादिकात्स्न्यवियवैर्बलाबलविशेषणम् ।
नक्तंदिनर्तुभुक्तांशैर्व्याधिकालो यथामलम् ॥१३॥
इति प्रोक्तो निदानार्थः स व्यासेनोपदेक्ष्यते ॥१४॥
सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः ।
तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाहितसेवनम् ॥१५॥
निदानार्थकरो रोगो रोगस्याप्युपजायते ।
तद्यथा ज्वरसन्तापाद्रक्तपित्तमुदीर्यते ॥१६॥
रक्तपित्ताज्ज्वरस्ताभ्यां शोषश्चाप्युपजायते ।
प्लीहाभिवृद्ध्या जठरं जठराच्छोथ एव च ॥१७॥
अर्शोभ्यो जाठरं दुःखं गुल्मश्चाप्युपजायते ।
(दिवास्वापादिदोषश्च प्रतिश्यायश्च जायते ।)
प्रतिश्यायादथो कासः कासात्संजायते क्षयः ॥१८॥
क्षयो रोगस्य हेतुत्वे शोषस्याप्युपजायते ।
ते पूर्वं केवला रोगाः पश्चाद्धेत्वर्थकारिणः ॥१९॥

कश्चिद्धि रोगो रोगस्य हेतुर्भूत्वा प्रशाम्यति ।
न प्रशाम्यति चाप्यन्यो हेतुत्वं कुरुतेऽपि च ॥
एवं कृच्छ्रतमा नृणां दृश्यन्ते व्याधिसङ्कराः ॥२०॥

तस्माद्यत्नेन सद्वैद्यैरिच्छद्भिः सिद्धिमुद्धताम् ।
ज्ञातव्यो वक्ष्यते योऽयं ज्वरादीनां विनिश्चयः॥२१॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने पञ्चनिदानलक्षणं समाप्तम् ॥१॥

अथ ज्वरनिदानम् ।

(देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली ।
ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा) ॥ १ ॥
दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिःश्वाससम्भवः ।
ज्वरोऽष्टधा पृथग्द्वन्द्वसंघातागन्तुजः स्मृतः ॥ १ ॥
मिथ्याहारविहाराभ्यां दोषाह्यामाशयाश्रयाः ।
बहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥ २ ॥
स्वेदावरोधः संतापः सर्वाङ्गग्रहणं तथा ।
युगपद्यत्र रोगे च स ज्वरो व्यपदिश्यते ॥ ३ ॥
श्रमोऽरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः ।
इच्छाद्वेषौ मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु ॥ ४ ॥
जृम्भाऽङ्गमर्दो गुरुता रोमहर्षोऽरुचिस्तमः ।
अप्रहर्षश्च शीतं च भवत्युत्पत्स्यति ज्वरे ॥ ५ ॥
(सामान्यतो विशेषात्तु जृम्भाऽत्यर्थं समीरणात् ।
पित्तान्नयनयोर्दाहः कफादन्नारुचिर्भवेत् ॥ ६ ॥
रूपैरन्यतराभ्यां तु संसृष्टैर्द्वन्द्वजं विदुः ।
सर्वलिङ्गसमवायः सर्वदोषप्रकोपजे ॥ ७ ॥

वेपथुर्विषमो वेगः कण्ठौष्ठपरिशोषणम् + ।
निद्रानाशः क्षवस्तंभो गात्राणां रौक्ष्यमेव च ॥ ८ ॥
शिरोहृद्गात्ररुग्वक्त्रवैरस्यं गाढविट्कता ।
शूलाध्माने जृम्भणं च भवन्त्यनिलजे ज्वरे ॥ ९ ॥
वेगस्तीक्ष्णोऽतिसारश्च निद्राल्पत्वं तथा वमिः ।
कण्ठोष्ठमुखनासानां पाकः स्वेदश्च जायते ॥१०॥
प्रलापो वक्त्रकटुता मूर्च्छा दाहो मदस्तृषा ।
पीतविण्मूत्रनेत्रत्वं❋ पैत्तिके भ्रम एव च ॥११॥
स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यं मधुरास्यता ।
शुक्लमूत्रपुरीषत्वं स्तम्भस्तृप्तिरथापि च ॥१२॥
(नात्युष्णगात्रता छर्दिरङ्गसादोऽविपाकिता)
गौरवं शीतमुत्क्लेदो रोमहर्षोऽतिनिद्रता ।
[स्रोतोरोधो रुगल्पत्वं प्रसेको लवणास्यता
नात्युष्णगात्रताच्छर्दिर्लालास्रावोऽविपाकता]
प्रतिश्यायोऽरुचिःकासःकफजेऽक्ष्णोश्चशुक्लता॥१३॥
तृष्णा मूर्च्छा भ्रमो दाहः स्वप्ननाशः शिरोरुजा ।
कण्ठास्यशोषो वमथू रोमहर्षोऽरुचिस्तमः ॥१४॥
पर्वभेदश्च जृम्भा च वातपित्तज्वराकृतिः ।
स्तैमित्यं पर्वणां भेदो निद्रा गौरवमेव च ॥ ५॥
शिरोग्रहः प्रतिश्यायः कासः स्वेदाप्रवर्तनम् ।
सन्तापो मध्यवेगश्च वातश्लेष्मज्वराकृतिः ॥१६॥

+ 'मुखशोषणम्' पाठान्तरम्

❋ 'नेत्रत्वक्' पाठान्तरम्

लिप्ततिक्तास्यता तन्द्रा मोहः कासोऽरुचिस्तृषा ।
मुहुर्दाहो मुहुः शीतं श्लेष्मपित्तज्वराकृतिः ॥१७॥
क्षणे दाहः क्षणे शीतमस्थिसन्धिशिरोरुजा ।
सास्रावे कलुषे रक्ते निर्भुग्ने चापि लोचने ॥१८॥
सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कण्ठः शूकैरिवावृतः ।
तन्द्रा मोहः प्रलापश्च कासः श्वासोऽरुचिर्भ्रमः ॥१९॥
परिदग्धा खरस्पर्शा जिह्वा स्रस्ताङ्गता परम् ।
ष्ठीवनं रक्तपित्तस्य कफेनोन्मिश्रितस्य च ॥२०॥
शिरसो लोठनं तृष्णा निद्रानाशो हृदि व्यथा ।
स्वेदमूत्रपुरीषाणां चिराद्दर्शनमल्पशः ॥२१॥
कृशत्वं नातिगात्राणां प्रततं❀ कण्ठकूजनम् ।
कोठानां + श्यावरक्तानां मण्डलानां च दर्शनम् ॥२२॥
मूकत्वं स्रोतसां पाको गुरुत्वमुदरस्य च ।
चिरात्पाकश्च दोषाणां सन्निपातज्वराकृतिः ॥२३॥
(भ्रमः पिपासा दाहश्च गौरवं शिरसोऽतिरुक् ।
वातपित्तोल्बणे विद्याल्लिङ्गं मन्दकफे ज्वरे ॥ १ ॥
शैत्यं कासोऽरुचिस्तन्द्रापिपासादाहहृद्व्यथाः ।
वातश्लेष्मोल्बणे व्याधौ लिङ्गं पित्तावरे × विदुः ॥ २ ॥
छर्दिः शैत्यं मुहुर्दाहस्तृष्णा मोहोऽस्थिवेदना ।
मन्दवाते व्यवस्यन्ति लिङ्गं पित्तकफोल्बणे ॥ ३ ॥
सन्ध्यस्थिशिरसां शूलं प्रलापो गौरवं भ्रमः ।
वातोल्बणे स्याद्द्व्यनुगे तृष्णा कण्ठास्यशुष्कता ॥ ४ ॥

❀ 'भततं' + कोष्ठानां × पित्तानुगे पाठान्तरम् ।

रक्तविण्मूत्रता दाहः स्वेदस्तृष्णा बलक्षयः ।
मूर्च्छा चेति त्रिदोषे स्याल्लिङ्गं पित्ते गरीयसि ॥ ५ ॥
आलस्यारुचिहृल्लासदाहवम्यरतिभ्रमैः ।
कफोल्बणं सन्निपातं तन्द्राकासेन चादिशेत् ॥ ६ ॥
प्रतिश्या छर्दिरालस्यं तन्द्रारुच्यग्निमार्दवम् ।
हीनवाते पित्तमध्ये लिङ्गं श्लेष्माधिके मतम् ॥ ७ ॥
हारिद्रमूत्रनेत्रत्वं दाहस्तृष्णा भ्रमोऽरुचिः ।
हीनवाते मध्यकफे लिङ्गं पित्ताधिके मतम् ॥ ८ ॥
शिरोरुग्वेपथुश्वासप्रलापच्छर्द्यरोचकाः ।
हीनपित्ते मध्यकफे लिङ्गं वाताधिके मतम् ॥ ९ ॥
शीतता गौरवं तन्द्रा प्रलापोऽस्थिशिरोतिरुक् ।
हीनपित्ते वातमध्ये लिङ्गं श्लेष्माधिके विदुः ॥१०॥
वर्चोभेदोऽग्निदौर्बल्यं तृष्णा दाहोऽरुचिर्भ्रमः ।
कफहीने वातमध्ये लिङ्गं पित्ताधिके विदुः ॥११॥
श्वासःकासः प्रतिश्यायो मुखशोषोऽतिपार्श्वरुक् ।
कफहीने पित्तमध्ये लिङ्गं वाताधिके मतम् ॥१२॥
वातपित्ताधिको यस्य सन्निपातः प्रकुप्यति ।
तस्य ज्वरोऽङ्गमर्दस्तृट्तालुशोषप्रमीलकाः ॥१३॥
आध्मानतन्द्रारुचयःश्वासकासभ्रमश्रमाः ।
पित्तश्लेष्माधिको यस्य सन्निपातः प्रकुप्यति ॥१४॥
अन्तर्दाहो बहिः शीत तस्य तन्द्रा च बाधते* ।
तुद्यते दक्षिणं पार्श्वमुरः शीर्षगलग्रहाः ॥१५॥

* 'तन्द्राविवर्धते'

निष्ठीवे रक्तकफपित्तं च तृष्णा कण्डूश्च‡ जायते ।
विड्भेदश्वासहिक्काश्च बाधन्ते सप्रमीलकाः ॥१६॥
विभुफल्गु❀ च तौ नाम्ना सन्निपातावुदाहृतौ ।
श्लेष्मानिलाधिको यस्य सन्निपात: प्रकुप्यति ॥१७॥
तस्य शीतज्वरो निद्रा क्षुत्तृष्णा पार्श्वनिग्रहः ।
शिरोगौरवमालस्यमन्यास्तम्भप्रमीलका: ॥१८॥
उदरं दह्यते + चास्य कटिर्बस्तिश्च दूयते ।
सन्निपात: स विज्ञेयो मकरीति सुदारुण: ॥१९॥
वातोल्बण: सन्निपातो यस्य जन्तो: प्रकुप्यति ।
तस्य तृष्णाज्वरग्लानिपार्श्वरुग्दृष्टिसंक्षया: ॥२०॥
पिण्डिकोद्वेष्टनं दाह ऊरुसादो बलक्षयः ।
सरक्तं चास्य विण्मूत्रं शूलं निद्राविपर्ययः ॥२१॥
निर्भिद्यते गुदं चास्य वस्तिश्च परिकृन्त्यते ।
आयम्यते भिद्यते च हिक्कते विलपत्यपि ।
मूर्च्छति स्फार्यते रौति नाम्ना विस्फुरक: स्मृत:॥२२॥
पित्तोल्बणः सन्निपातो यस्य जन्तो: प्रकुप्यति ॥२३॥
तस्य दाहो ज्वरो घोरो बहिरन्तश्च वर्धते ।
शीतं च सेवमानस्य कुप्यत: कफमारुतौ ॥२४॥
ततश्चैनं प्रधावन्ते हिक्काश्वासप्रमीलकाः ।
विसूचिका पर्वभेद: प्रलापो गौरवं क्लमः ॥२५॥
नाभिपार्श्वरुजा तस्य स्विन्नस्याशु विवर्द्धते ।
स्विद्यमानस्य रक्तं च स्रोतोभ्यः संप्रवर्तते ॥२६॥

---

‡ 'कंठश्च दूयते' ❀ 'विभ्रुफल्गु' + 'तुद्यते'

शूलेन पीड्यमानस्य तृष्णा दाहश्च वर्द्धते ।
असाध्यः सन्निपातोऽयं शीघ्रकारीति कथ्यते ।
नहि जीवत्यहोरात्रमेतेनाविष्टविग्रहः ॥२७॥
कफोल्बणः सन्निपातो यस्य जन्तोः प्रकुप्यति ॥२८॥
तस्य शीतज्वरस्वप्नगौरवालस्यतन्द्रयः ।
छर्दिमूर्च्छातृषादाहतृप्त्यरोचकहृद्ग्रहाः ॥२९॥
ष्ठीवनं मुखमाधुर्यं श्रोत्रवाग् दृष्टिनिग्रहः ।
श्लेष्मणो निग्रहं चास्य यदा प्रकुरुते भिषक् ॥३०॥
तदा तस्य भृशं पित्तं कुर्यात्सोपद्रवं ज्वरम् ।
निगृहीते तु पित्ते च भृशं वायुः प्रकुप्यति ॥३१॥
निराहारस्य सोऽत्यर्थं मेदो मज्जास्थि बाधते ।
अथाऽत्र स्नाति भुंक्ते वा त्रिरात्रं नहि जीवति ।
मेदोगतः सन्निपातः कफफणः स उदाहृतः ॥३२॥

कुम्भीपाकः प्रौर्णुनावः प्रलापी
अन्तर्दाहो दण्डपातोऽन्तकश्च ।
एणीदाहश्चाथ हारिद्रसंज्ञो
भेदा एते सन्निपातज्वरस्य ॥ १ ॥
अजघोषभूतहासौ यन्त्रापीडश्च संन्यासः ।
संशोषी च विशेषास्तस्यैवोक्तास्त्रयोदशान्यत्र ॥ २ ॥
घोणाविवरगलद्बहुशोणासितलोहितं सार्ति ।
विलुठन्मस्तकमभितः कुम्भीपाकेन पीडितं विद्यात् ॥ १ ॥
उत्क्षिप्य यः स्वमङ्गं क्षिपत्यधस्तान्नितान्तमुच्छ्वसिति ।
तं प्रौर्णुनावजुष्टं विचित्रकष्टं विजानीयात् ॥ २॥

स्वेदभ्रमाङ्गमर्दाः कम्पो दवथुर्वमिर्व्यथा कण्ठे ।
गात्रं च गुर्वतीव प्रजापिजुष्टस्य जायते लिङ्गम् ॥ ३ ॥
अन्तर्दाहः शैत्यं बहिः श्वयथुररतिरपि तथा श्वासः ।
अङ्गमपि दग्धकल्पं सोऽन्तर्दाहार्दितः कथितः ॥ ४ ॥
नक्तं दिवा न निद्रामुपैति गृह्णाति मूढधीर्नभसः ।
उत्थाय दण्डपाते भ्रमातुरः सर्वतो भ्रमति ॥ ५ ॥
संपूर्यते शरीरं ग्रन्थिभिरभितस्तथोदरं मरुता ।
श्वासातुरस्य सततं विचेतनस्यान्तकार्त्तस्य ॥ ६ ॥
परिधावतीव गात्रे रुक्पात्रे भुजगपतंगहरिणगणः ।
वेपथुमतः सदाहस्यैणीदाहज्वरार्त्तस्य ॥ ७ ॥
यस्यातिपीतमङ्गं नयने सुतरां मलं ततोऽप्यधिकम् ।
दाहोऽतिशीतता वहिरस्य स हारिद्रको ज्ञेयः ॥ ८ ॥
छगलकशरीरगन्धः स्कन्धरुजावान्निरुद्धगलरन्ध्रः ।
अजघोषसन्निपातादाताम्राक्षः पुमान्भवति ॥ ९ ॥
शब्दादीनधिगच्छति न स्वान्विषयान् यदिन्द्रियग्रामैः ।
हसति प्रलपति परुषं स ज्ञेयो भूतहासार्त्तः ॥१०॥
येन मुहुर्ज्वरवेगाद्यन्त्रेणेवावपीड्यते गात्रम् ।
रक्तं पीतं च वमेद्यन्त्रापीडः स विज्ञेयः ॥११॥
अतिसरति वमति कूजति
गात्राण्यभितश्चिरं नरः क्षिपति ।
संन्याससन्निपाते प्रलपति
भुग्नाक्षिमण्डलो भवति ॥१२॥
मेचकवपुरतिमेचकलोचनयुगलो मलोत्सर्गात् ।
संशोषिणि सितपिटकामण्डलयुक्तो ज्वरो भवति ॥१३॥

उत्पत्ति एवं सम्प्राप्ति

अम्लस्निग्धोष्णतीक्ष्णैः कटुमधुरसुरातापसेवाकषायैः
कामक्रोधातिरूक्षैर्गुरुतरपिशिताहारनीहारशीतैः।
शोकव्यायामचिंताग्रहगणवनितात्यन्तसङ्गप्रसङ्गैः
प्रायः कुप्यन्ति पुंसां मधुसमयशरद्वर्षणे सन्निपाताः॥ १

आमो ह्याहारदोषात्प्रथममुपचितो
हंति वह्निं शरीरे;
श्लेष्मत्वं याति भुक्तं सकलमपि ततो-
ऽसौ कफो वायुदुष्टः।
स्रोतांस्यापूर्य्य रुंध्यादनिलमथ मरु-
त्कोपयेत्पित्तमन्तः;
संमूर्च्छ्यान्योन्यमेते प्रबलमिति नृणां
कुर्वते सन्निपातम्॥ २॥

संधिकश्चान्तकश्चैव रुग्दाहश्चित्तविभ्रमः।
शीतांगस्तंद्रिकः प्रोक्तः कण्ठकुब्जश्च कर्णकः॥ ३॥
विख्यातो भुग्ननेत्रश्च रक्तष्ठीवी प्रलापकः।
जिह्वकश्चेत्यभिन्यासः सन्निपातास्त्रयोदश॥ ४॥
संधिके वासराः सप्त चान्तके दश वासराः।
रुग्दाहे विंशतिर्ज्ञेया वह्न्यष्टौ चित्तविभ्रमे॥ ५॥
पक्षमेकं तु शीताङ्गे तन्द्रिके पञ्चविंशतिः।
विज्ञेया वासराश्चैव कण्ठकुब्जे त्रयोदश॥ ६॥
कर्णके च त्रयो मासा भुग्ननेत्रे दिनाष्टकम्।
रक्तष्ठीवी दशाहानि चतुर्दश प्रलापके॥ ७॥

जिह्वके षोडशाहानि कलाऽभिन्यासलक्षणे ।
परमायुरिति प्रोक्तं म्रियते तत्क्षणादपि ॥ ८ ॥
सन्धिकस्तन्द्रिकश्चैव कर्णकः कण्ठकुब्जकः ।
जिह्वकश्चित्तविभ्रंशः षट् साध्याः सप्त मारकाः॥ ९ ॥
दोषे विवृद्धे नष्टेऽग्नौ सर्वसम्पूर्णलक्षणः ।
सन्निपातज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा ॥१०॥
मृत्युना सह योद्धव्यं सन्निपातं चिकित्सता ।
यस्तु तत्र भवेज्जेता स जेताऽऽमयसंकुले ॥ ११ ॥
सन्निपातार्णवे मग्नं योऽभ्युद्धरति मानवम् ।
कस्तेन न कृतो धर्मः कां च पूजां न सोऽर्हति ॥१२॥

सन्निपात लक्षणानि

पूर्वरूपकृतशूलसम्भवं
शोषवातबहुवेदनान्वितम् ।
श्लेष्मतापबलहानिजागरं
सन्निपातमिति सन्धिकं वदेत् ॥ १ ॥

दाहं करोति परितापनमातनोति
मोहं ददाति विदधाति शिरःप्रकम्पम् ।
हिक्कां करोति कसनं च समाजुहोति
जानीहि तं विबुधवर्जितमन्तकाख्यम् ॥ २ ॥

प्रलापपरितापनप्रबलमोहमान्द्यभ्रमः
परिभ्रमणवेदनाव्यथितकण्ठमन्याहनुः ।
निरन्तरतृषाकरश्वसनकासहिक्काकुलः
स कष्टतरसाधनो भवति हन्त रुग्दाहकः ॥ ३ ॥

यदि कथमपि पुंसां जायते कायपीड़ा
भ्रममदपरितापो मोहवैकल्यभावः ।
विकलनयनहासो गीतनृत्यप्रलापी
ह्यभिदधति असाध्यं केऽपि चित्तभ्रमाख्यम् ॥ ४ ॥
हिमसदृशशरीरो वेपथुः श्वासहिक्का
शिथिलितसकलाङ्गः खिन्ननादोऽप्रतापः ।
क्लमथुदवथुकासच्छर्द्यतीसारयुक्त-
स्त्वरितमरणहेतुः शीतगात्रप्रभावात् ॥ ५ ॥
प्रभूतातंद्रार्तिज्वरकफपिपासाकुलतरो
भवेत् श्यामा जिह्वा पृथुलकठिना कण्टकवृता ।
अतीसारः श्वासः क्लमथुपरितापः श्रुतिरुजो
भृशं कण्ठे जाड्यं शयनमनिशं तन्द्रिकगदे ॥ ६ ॥
शिरोऽर्तिकण्ठग्रहदाहमोह-
कंपज्वरा रक्तसमीरणार्त्तिः ।
हनुग्रहस्तापविलापमूर्च्छाः
स्यात्कण्ठकुब्जः खलु कष्टसाध्यः ॥ ७ ॥
प्रलापः श्रुतिह्रासकण्ठग्रहाङ्ग-
व्यथाश्वासकासप्रसेकप्रभावम् ।
ज्वरं तापकर्णान्तयोर्गल्लपीडा
बुधाः कर्णकं कष्टसाध्यं वदन्ति ॥ ८ ॥
ज्वरबलापचयः स्मृतिशून्यता
श्वसनभुग्नविलोचनमोहितः ।
प्रलपनभ्रमकंपनशोकवां-
स्त्यजति जीवितमाशु स भुग्नदृक् ॥ ९ ॥

रक्तष्ठीवी ज्वरवमितृषामोहशूलातिसारा
हिक्काध्मानभ्रमणदवथुश्वाससंज्ञाप्रणाशाः ।
श्यामा रक्ता भवति रसना मण्डलोत्थानरूपा
रक्तष्ठीवी निगदित इह प्राणहन्ता प्रसिद्धः ॥१०॥

कम्पप्रलापपरितापनशीर्षपीडा-
प्रौढप्रभावपवमानपरोऽन्यचिन्ता ।
प्रज्ञाप्रणाशविकलप्रचुरप्रवादः
क्षिप्रं प्रयाति पितृपालपदं प्रलापी ॥ ११ ॥

श्वसनकासपरितापविह्वलः
कठिनकण्टकपरीतजिह्वकः ।
बधिरमूकबलहानिलक्षणो
भवति कष्टतरसाध्यजिह्वकः ॥१२॥

दोषत्रयस्निग्धमुखत्वनिद्रा-
वैकल्यनिश्चेष्टनकष्टवाग्मी ।
बलप्रणाशः श्वसनादिनिग्रहो-
ऽभिन्यास उक्तो ननु मृत्युकल्पः ॥१३॥

सन्निपातोपद्रव

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः ।
शोथः संजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥१४॥

ज्वरस्य पूर्वं ज्वरमध्यतो वा
ज्वरान्ततो वा श्रुतिमूलशोथः ।
क्रमादसाध्यः खलु कष्टसाध्यः
सुखेन साध्यो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥१५॥

सद्यस्त्रिपंचसप्ताहाद्दशाहाद्द्वादशादपि ।
एकविंशद्दिनैः शुद्धः सन्निपाती सुजीवति ॥१६॥
दोषे विबद्धे नष्टेऽग्नौ सर्वसम्पूर्ण लक्षणः ।
सन्निपाते ज्वरोऽसाध्यः, कृच्छ्र साध्यस्ततोऽन्यथा ॥२४॥
(सप्तमे दिवसे प्राप्ते दशमे द्वादशेऽपि वा ।
पुनर्घोरतरो भूत्वा प्रशमं याति हन्ति वा) ॥१॥
सप्तमी द्विगुणा चैवनवम्येकादशी तथा ।
एषा त्रिदोषमर्यादा मोक्षाय च वधाय च ॥२॥
सन्निपात ज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः ।
शोथ संजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥२५॥
(त्रयः प्रकुपिता दोषा उरः स्रोतोऽनुगामिनः ।
आमाभिवृद्ध्या प्रथिता बुद्धीन्द्रियमनोगताः ॥१॥
जनयन्ति महाघोरमभिन्यासं ज्वरं दृढम् ।
श्रुतोनेत्रे प्रसुप्तिः स्यान्न चेष्टांकांचिदीहते ॥२॥
न च दृष्टिर्भवेतस्य समर्थो रूप दर्शने ।
न घ्राणं न च संस्पर्श शब्दं वा नैव बुध्यते ॥३॥
शिरो लोठयतेऽभीक्ष्णमाहारं नाभिनन्दति ।
कूजति तुद्यते चैव परिवर्तनमीहते ॥४॥
अल्पं प्रभाषते किंचिदभिन्यासः स उच्यते ।
प्रत्याख्यातः स भूयिष्ठः कश्चिदेवात्र सिध्यति ॥५॥
पित्तकफानिलवृद्ध्या
दशदिवसद्वादशाहसप्ताहात् ।
हन्ति विमुञ्चति पुरुषं
त्रिदोषजो धातुमलपाकात् ॥१॥

निद्राबलौजोरुचिवीर्यनाशो
हृद्वेदना गौरवताल्पचेष्टा ।
विष्टंभता यस्य किलारतिः स्यात्
स धातुपाकी मुनिभिः प्रदिष्टः ॥ २ ॥
दोषप्रकृतिवत्कृत्य लघुता ज्वरदेहयोः ।
इन्द्रियाणां च वैमल्यं दोषाणां पाकलक्षणम् ॥ ३ ॥
अभिघाताभिचाराभ्यामभिशापाभिषङ्गतः ।
आगन्तुर्जायते दोषैर्यथास्वं तं विभावयेत् ॥२६॥
श्यावास्यता विषकृते‡ दाहोऽतीसार एव च ।
भक्तारुचिः पिपासा च तोदश्च सह मूर्च्छया ॥२७॥
ओषधीगन्धजे मूर्च्छा शिरोरुग्वमथुः क्षवः ।
कामजे चित्तविभ्रंशस्तन्द्रालऽऽस्यमभोजनम् ॥२८॥
(हृदये वेदना चास्य गात्रं च परिशुष्यति)
भयात्प्रलापः शोकाच्च भवेत्कोपाच्च वेपथुः ।
अभिचाराभिशापाभ्यां मोहस्तृष्णा च जायते ॥२९॥
भूताभिषङ्गादुद्वेगो हास्यरोदनकम्पनम् ।
कामशोकभयाद्वायुः, क्रोधात्पित्तं, त्रयो मलाः ॥३०॥
भूताभिषङ्गात्कुप्यन्ति भूतसामान्य लक्षणाः ।
दोषोऽल्पोऽहित संभूतो ज्वरोत्सृष्टस्य वा पुनः ॥३१॥
धातुमन्यतमं प्राप्य करोति विषमज्वरम्
(सन्ततः सततोऽन्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकौ ।)
संततं रसरक्तस्थः, सोऽन्येद्युः पिशिताश्रितः ॥३२॥

‡ 'तथातीसार' पाठान्तरम

मेदोगतस्तृतीयेऽह्नि त्वस्थिमज्जगतः पुनः।
कुर्याच्चतुर्थकं घोरमन्तकं रोगसंकरम् ॥३३॥
(स्रोतोभिर्विसृता दोषा गुरवो रस वाहिभिः।
सर्वदेहानुगाः स्तब्धा ज्वरं कुर्वन्ति संततम् ॥)
सप्ताहं वा दशाहं वा द्वादशाहमथापि वा।
संतत्या योऽविसर्गी स्यात्संततः स निगद्यते ॥३४॥
अहोरात्रे सततको द्वौ कालावनुवर्त्तते।
अन्येद्युष्कस्त्वहोरात्रमेककालं प्रवर्त्तते ॥३५॥
तृतीयकस्तृतीयेऽह्नि, चतुर्थेऽह्नि चतुर्थकः।
केचिद्भूताभिषंगोत्थं ब्रुवते विषमज्वरम् ॥३६॥
कफपित्तात्त्रिकग्राही पृष्ठाद्वातकफात्मकः।
वातपित्ताच्छिरोग्राही त्रिविधः स्यात्तृतीयकः ॥३७॥
चतुर्थको दर्शयति प्रभावं द्विविधं ज्वरः।
जङ्घाभ्यां श्लैष्मिकः पूर्वं शिरसोऽनिलसंभवः ॥३८॥
विषमज्वर एवान्यश्चतुर्थकविपर्ययः।
स मध्ये ज्वरयत्यह्नी ह्यादावन्ते विमुञ्चति ॥३९॥
नित्यं मन्दज्वरो रूक्षः शूनकस्तेन सीदति।
स्तब्धाङ्गः श्लेष्मभूयिष्ठो नरो वातबलासकी ॥४०॥
प्रलिम्पन्निव गात्राणि धर्मेण गौरवेण च।
मन्दज्वरविलेपी च सशीतः स्यात्प्रलेपकः ॥४१॥
विदग्धेऽन्नरसे देहे श्लेष्मपित्ते व्यवस्थिते।
तेनार्धे शीतलं देहेचार्धेचोष्णं प्रजायते ॥४२॥
काये दुष्टं यदा पित्तं श्लेष्मा चान्ते व्यवस्थितः।
तेनोष्णत्वं शरीरस्य शीतत्वं हस्तपादयोः ॥४३॥

कार्ये श्लेष्मा यदा दुष्टः पित्तं चान्ते व्यवस्थितम् ।
शीतत्वं तेन गात्राणामुष्णत्वं हस्तपादयोः ॥४४॥
त्वक्स्थौ श्लेष्मानिलौ शीतमादौ जनयतो ज्वरे ।
तयोः प्रशान्तयोः पित्तमन्ते दाहं करोति च ॥४५॥
करोत्यादौ तथा पित्तं त्वक्स्थं दाहमतीव च ।
तस्मिन्प्रशान्ते त्वितरौ कुरुतः शीतमन्ततः ॥४६॥
द्वावेतौ दाहशीतादिज्वरौ संसर्गजौ स्मृतौ ।
दाहपूर्वस्तयोः कष्टः कृच्छ्रसाध्यतमश्च सः ॥४७॥
गुरुता हृदयोत्क्लेशः सदनं छर्द्यरोचकौ ।
रसस्थे तु ज्वरे लिङ्गं दैन्यं चास्योपजायते ॥४८॥
रक्तनिष्ठीवनं दाहो मोहश्छर्दनविभ्रमौ ।
प्रलापः पिडका तृष्णा रक्तप्राप्ते ज्वरे नृणाम् ॥४९॥
पिण्डिकोद्वेष्टनं तृष्णा सृष्टमूत्रपुरीषता ।
ऊष्माऽन्तर्दाहविक्षेपौ ग्लानिः स्यान्मांसगे ज्वरे ॥५०॥
भृशं स्वेदस्तृषा मूर्च्छा प्रलापश्छर्दिरेव च ।
दौर्गन्ध्यारोचकौ ग्लानिर्मेदःस्थे चासहिष्णुता ॥५१॥
भेदोऽस्थ्नां कूजनं श्वासो विरेकश्छर्दिरेव च ।
विक्षेपणं च गात्राणामेतदस्थिगते ज्वरे ॥५२॥
तमः प्रवेशनं हिक्का कासः शैत्यं वमिस्तथा ।
अन्तर्दाहो महाश्वासो मर्मच्छेदश्च मज्जगे ॥५३॥
मरणं प्राप्नुयात्तत्र शुक्रस्थानगते ज्वरे ।
शेफसः स्तब्धता मोक्षः शुक्रस्य च विशेषतः ॥५४॥
(रस रक्ताश्रितः साध्योमांसमेदोगतश्च यः ।
अस्थिमज्जगतः कृच्छ्रेशुक्रस्थस्तु न सिध्यति) ॥१॥

वर्षाशरद्वसन्तेषु वाताद्यैः प्राकृतः क्रमात् ।
वैकृतोऽन्यः स दुःसाध्यः प्राकृतश्चानिलोद्भवः ॥५५॥
वर्षासु मारुतो दुष्टः पित्तश्लेष्मान्वितो ज्वरम् ।
कुर्यात्पित्तं च शरदि तस्य चानुबलः (लं) कफः ॥५६॥
तत्प्रकृत्या विसर्गाच्च तत्र नानशनाद्भयम् ।
कफो वसन्ते तमपि वातपित्तं भवेदनु ॥५७॥
काले यथास्वं सर्वेषां प्रवृत्तिर्वृद्धिरेव वा ।
निदानोक्तानुपशयो विपरीतोपशायिता ॥५८॥
अन्तर्दाहोऽधिकस्तृष्णा प्रलापः श्वसनं भ्रमः ।
सन्ध्यस्थिशूलमस्वेदो दोषवर्चोविनिग्रहः ॥५९॥
अन्तर्वेगस्य लिङ्गानि ज्वरस्यैतानि लक्षयेत् ।
सन्तापोऽभ्यधिको बाह्यस्तृष्णादीनां च मार्दवम् ॥६०॥
बहिर्वेगस्य लिङ्गानि सुखसाध्यत्वमेव च ।
लालाप्रसेकहृल्लासहृदयाशुद्ध्यरोचकाः ॥६१॥
तन्द्रालस्याविपाकास्यवैरस्यं गुरुगात्रता ।
क्षुन्नाशो बहुमूत्रत्वं स्तब्धता बलवाञ्ज्वरः ॥६२॥
आमज्वरस्य लिङ्गानि न दद्यात्तत्र भेषजम् ।
भेषजं ह्यामदोषस्य भूयो ज्वलयति* ज्वरम् ॥६३॥
(शोधनं शमनीयं च करोति विषमज्वरम् ।
श्वासो मूर्च्छाऽरुचिस्तृष्णा छर्द्यतीसारविड्ग्रहः ॥१॥
हिक्का श्वासोऽङ्गदाहश्च ज्वरस्योपद्रवा दश)॥
ज्वरवेगोऽधिकस्तृष्णा प्रलापः श्वसनं भ्रमः ।

---

* 'जनयति' पाठान्तर

मलप्रवृत्तिरुत्क्लेशः पच्यमानस्य लक्षणम् ॥६४॥
क्षुत्क्षामता लघुत्वं च गात्राणां ज्वरमार्दवम् ।
दोषप्रवृत्तिरष्टाहो❀ निरामज्वरलक्षणम् ॥६५॥
(त्रिः सप्ताहे व्यतीते तु ज्वरो यस्तनुतां गतः ।
प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते) ॥ १ ॥
बलवत्स्वल्पदोषेषु ज्वरः साध्योऽनुपद्रवः ।
हेतुभिर्बहुभिर्जातो बलिभिर्बहुलक्षणः ॥६६॥
ज्वरः प्राणान्तकृद्यश्च शीघ्रमिन्द्रियनाशनः ।
ज्वरःक्षीणस्य शूनस्य गम्भीरो दैर्घरात्रिकः ॥६७॥
असाध्यो बलवान् यश्च केशसीमन्तकृज्ज्वरः ।
गम्भीरस्तु ज्वरो ज्ञेयो ह्यन्तर्दाहेन तृष्णया ॥६८॥
आनद्धत्वेन चात्यर्थं श्वासकासोद्गमेन च ।
आरम्भाद्विषमो यस्तु यश्च वा दैर्घरात्रिकः ॥६९॥
क्षीणस्य चातिरूक्षस्य गम्भीरो यस्य हन्ति तम् ।
विसंज्ञस्ताम्यते यस्तु शेते निपतितोऽपि वा ॥७०॥
शीतार्दितोऽन्तरुष्णश्च ज्वरेण म्रियते नरः ।
यो हृष्टरोमा रक्ताक्षो हृदि संघातशूलवान् ॥७१॥
वक्त्रेण चैवोच्छ्वसिति तं ज्वरो हन्ति मानवम् ।
हिक्काश्वासतृषायुक्तं मूढं विभ्रान्तलोचनम् ॥७२॥
संततोच्छ्वासिनं क्षीणं नरं क्षपयति ज्वरः ।
हतप्रभेन्द्रियं क्षीणमरोचकनिपीडितम् ॥७३॥
गम्भीरतीक्ष्णवेगार्त्तं ज्वरितं परिवर्जयेत् ।

❀ 'दोषप्रवृत्तिरुत्साहो' इत्यातङ्कदर्पणसंमतः पाठः

दाहः स्वेदो भ्रमस्तृष्णा कम्पो विड्भिदसंज्ञिता ।
कूजनं चास्यवैगन्ध्यमाकृतिर्ज्वरमोक्षणे ॥७४॥
स्वेदो लघुत्वं शिरसः कण्डूः पाको मुखस्य च ।
क्षवथुश्चान्नकांक्षा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥७५॥
(देहो लघुर्व्यपगतक्लमर्मोहतापः
पाको मुखे करणसौष्ठवमव्यथत्वम् ।
स्वेदः क्षवःप्रकृतियोगिमनोऽन्नलिप्सा ।
कण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि) ॥ १ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने ज्वरनिदानं
समाप्तम् ॥ २ ॥

अथातीसारनिदानम् ।

गुर्वतिस्निग्ध*रूक्षोष्णद्रवस्थूलातिशीतलैः ।
विरुद्धाध्यशनाजीर्णविषमैश्चापि भोजनैः ॥ १ ॥
स्नेहाद्यैरतियुक्तैश्च मिथ्यायुक्तैर्विषैर्भयैः ।
शोकादुष्टाम्बुमद्यातिपानैः सात्म्यर्तुपर्ययैः ॥ २ ॥
जलाभिरमणैर्वेगविघातैः क्रिमिदोषतः ।
नृणां भवत्यतीसारो लक्षणं तस्य वक्ष्यते ॥ ३ ॥
संशम्यापां धातुरग्निं प्रवृद्धः
+ शकृन्मिश्रो वायुनाऽधः प्रणुन्नः ।
सरत्यतीवातिसारं तमाहु-
र्व्याधिं घोरं षड्विधं तं वदन्ति ।
एकैकशः सर्वशश्चापि दोषैः
शोकेनान्यः षष्ठ आमेन चोक्तः ॥ ४ ॥

---

*'तीक्ष्णोष्ण' पाठान्तर +'वर्चोमिश्रो' पाठान्तर

हृन्नाभिपायूदरकुक्षितोद-
गात्रावसादानिलसन्निरोधाः ।
विट्सङ्ग आध्मानमथाविपाको
भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥ ५ ॥

अरुणं फेनिलं रूक्षमल्पमल्पं मुहुर्मुहुः ।
शकृदामं सरुक्शब्दं मारुतेनातिसार्यते ॥ ६ ॥

पित्तात्पीतं नीलमालोहितं वा
तृष्णामूर्च्छादाहपाकोपपन्नम् ।
शुक्लं सान्द्रं श्लेष्मणा श्लेष्मयुक्तं
विस्रं शीतं हृष्टरोमा मनुष्यः ॥ ७ ॥

वराहस्नेहमांसाम्बुसदृशं सर्वरूपिणम् ।
कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विद्याद्दोषत्रयोद्भवम् ॥ ८ ॥

तैस्तैर्भावैः शोचतोऽल्पाशनस्य
बाष्पोष्मा वै वह्निमाविश्य जन्तोः ।
कोष्ठं गत्वा क्षोभयेत्तस्य रक्तं
तच्चाधस्तात्काकणन्तीप्रकाशम् ॥ ९ ॥

निर्गच्छेद्वै विड्विमिश्रं ह्यविड्वा
निर्गन्धं वा गन्धवद्वाऽतिसारः ।
शोकोत्पन्नो दुश्चिकित्स्योऽतिमात्रं
रोगो वैद्यैः कष्ट एष प्रदिष्टः ॥१०॥

अन्नाजीर्णात्प्रद्रुताः क्षोभयन्तः
कोष्ठं दोषा धातुसङ्घान्मलांश्च ।
नानावर्णं नैकशः सारयन्ति
शूलोपेतं षष्ठमेनं वदन्ति ॥११॥

संसृष्टमेभिर्दोषैस्तु न्यस्तमप्स्ववसीदति ।
पुरीषं भृशदुर्गन्धि पिच्छिलं चामसंज्ञितम् ॥१२॥
एतान्येव तु लिङ्गानि विपरीतानि यस्य वै ।
लाघवं च विशेषेण तस्य पक्वं विनिर्दिशेत् ॥१३॥
पक्वंजाम्बवसङ्काशं यकृत्पिण्डनिभं तनु ।
घृततैलवसामज्जवेशवारपयोदधि ॥१४॥
मांसधावनतोयाभं कृष्णं नीलारुणप्रभम् ।
मेचकं स्निग्ध कर्बूरं चन्द्रकोपगतं घनम् ॥१५॥
कुणपं मस्तुलुङ्गाभं × सुगन्धिं ÷ कुथितं बहु ।
तृष्णादाहतमः ‡ श्वासहिक्कापार्श्वास्थिशूलिनम् ॥१६॥
संमूर्च्छारतिसंमोहयुक्तं पक्वबलीगुदम् ।
प्रलापयुक्तं च भिषग् वर्जयेदतिसारिणम् ॥१७॥
असंवृतगुदं क्षीणं दूराध्मातमुपद्रुतम् ।
गुदे पक्वे गतोष्माणमतिसारकिणं त्यजेत् ॥१८॥
(शोथं शूलं ज्वरं तृष्णां श्वासकासमरोचकम् ।
छर्दिं मूर्च्छां च हिक्कां च दृष्ट्वाऽतीसारिणं त्यजेत् ॥१॥)
श्वासशूलपिपासार्त्तं क्षीणं ज्वरनिपीडितम् ।
विशेषेण नरं वृद्धमतीसारो विनाशयेत् ॥१९॥
पित्तकृन्ति यदात्यर्थं द्रव्याण्यश्नाति पैत्तिके ।
तदोपजायतेऽभीक्ष्णं रक्तातीसार उल्बणः ॥२०॥
वायुः प्रवृद्धो निचितं बलासं
नुदत्यधस्तादहिताशनस्य ।

× मातु लुङ्गाभं ÷ दुर्गन्धं ‡ तृषादाहारुचि

प्रवाहतोऽल्पं बहुशो मलाक्तं
प्रवाहिकां तां प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥२१॥
प्रवाहिका वातकृता सशूला
पित्तात्सदाहा सकफा कफाच्च ।
सशोणिता शोणितसम्भवा च
ताः स्नेहरूक्षप्रभवा मतास्तु ।
तासामतीसारवदादिशेच्च
लिङ्गं क्रमं चामविपक्वतां च ॥२२॥
यस्योच्चारं विना मूत्रं सम्यग्वायुश्च गच्छति ।
दीप्ताग्नेर्लघुकोष्ठस्य स्थितस्तस्योदरामयः ॥२३॥
ज्वरातीसारयोरुक्तं निदानं यत्पृथक् पृथक् ।
तस्यज्वरातिसारस्य तेन नात्रोदितं पुनः ॥ १ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽतीसार-
निदानं समाप्तम् ॥३॥

अथ ग्रहणीरोग निदानम् ।

अतीसारे निवृत्तेऽपि मन्दाग्नेरहिताशिनः ।
भूयः संदूषितो वह्निर्ग्रहणीमभिदूषयेत् ॥ १ ॥
एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमूर्च्छितैः ।
सा दुष्टा बहुशो भुक्तमाममेव विमुञ्चति ॥ २ ॥
पक्वं वा सरुजं पूति मुहुर्बद्धं मुहुर्द्रवम् ।
ग्रहणीरोगमाहुस्तमायुर्वेदविदो जनाः ॥ ३ ॥
पूर्वरूपं तु तस्येदं तृष्णाऽऽलस्यं बलक्षयः ।
विदाहोऽन्नस्य पाकश्च चिरात्कायस्य गौरवम् ॥ ४ ॥

कटुतिक्तकषायातिरूक्षसंदुष्टभोजनैः ।
प्रमितानशनात्यध्ववेगनिग्रहमैथुनैः ॥ ५ ॥
मारुतः कुपितो वह्निं संछाद्य कुरुते गदान् ।
तस्यान्नं पच्यते दुःखं शुक्तपाकं खराङ्गता ॥ ६ ॥
कंठास्यशोषोऽक्षुत्तृष्णा तिमिरं कर्णयोः स्वनः ।
पार्श्वोरुवंक्षणग्रीवारुगभीक्ष्णं विसूचिका ॥ ७ ॥
हृत्पीडाकार्श्यदौर्बल्यं वैरस्यं परिकर्तिका ।
गृद्धिः सर्वरसानां च मनसः सदनं* तथा ॥ ८ ॥
जीर्णे जीर्यति चाध्मानं भुक्ते स्वास्थ्यमुपैति च ।
स वातगुल्महृद्रोगप्लीहाशङ्की च मानवः ॥ ९ ॥
चिराद्दुःखं द्रवं शुष्कं तन्वामं शब्दफेनवत् ।
पुनः पुनः सृजेद्वर्चः कासश्वासार्दितोऽनिलात् ॥१०॥
कट्वजीर्णविदाह्यम्लक्षाराद्यैः पित्तमुल्बणम् ।
आप्लावयेद्धन्त्यनलं जलं तप्तमिवानलम् ॥११॥
सोऽजीर्णं नीलपीताभं पीताभः सार्यते द्रवम् ।
पूत्यम्लोद्गारहृत्कण्ठदाहारुचितृडर्दितः ॥१२॥
गुर्वतिस्निग्धशीतादिभोजनादतिभोजनात् ।
भुक्तमात्रस्य च स्वप्नाद्धन्त्यग्निं कुपितः कफः ॥१३॥
तस्यान्नं पच्यते दुःखं हृल्लासच्छर्द्यरोचकाः ।
आस्योपदेहमाधुर्यकासष्ठीवनपीनसाः ॥१४॥
हृदयं मन्यते स्त्यानमुदरं स्तिमितं गुरु ।

* 'स्पन्दनम्' पाठान्तर

दुष्टो मधुर उद्गारः सदनं स्त्रीष्वहर्षणम् ॥१५॥
भिन्नामश्लेष्मसंसृष्टगुरुवर्चःप्रवर्तनम् ।
अकृशस्यापि दौर्बल्यमालस्यं च कफात्मके ॥१६॥
पृथग्वातादिनिर्दिष्टहेतुलिङ्गसमागमे ।
त्रिदोषं निर्दिशेदेवं तेषां वक्ष्यामि भेषजम् ॥१७॥
(अन्त्रकूजनमालस्यं दौर्बल्यं सदनं तथा ।
द्रवं शीतं घनं स्निग्धं सकटीवेदनं शकृत् ॥ १ ॥
आमं बहु सपैच्छिल्यं सशब्दं मन्दवेदनम् ।
पक्षान्मासाद्दशाहाद्वा नित्यं वाऽप्यथ मुञ्चति ॥ २ ॥
दिवा प्रकोपो भवति रात्रौ शान्ति व्रजेच्च सा ।
दुर्विज्ञेया दुश्चिकित्स्या चिरकालानुबन्धिनी॥ ३ ॥
सा भवेदामवातेन संग्रहग्रहणी मता ।
स्वपतः पार्श्वयोः शूलं गलज्जलघटीध्वनिः ।
तं वदन्ति घटीयन्त्रमसाध्यं ग्रहणीगदम् ॥ ४ ॥)
दोषं सामं निरामं च विद्यादत्रातिसारवत् ॥१८॥
लिङ्गैरसाध्यो ग्रहणीविकारो
यैस्तैरतीसारगदो न सिध्येत् ।
वृद्धस्य नूनं ग्रहणीविकारो
हत्वा तनूं नैव निवर्तते च ॥१९॥
(बालके ग्रहणी साध्या यूनि कृच्छ्रा समीरिता ।
वृद्धे त्वसाध्या विज्ञेया मत धन्वन्तरेरिदम् ॥ १ ॥)
इति श्रीमाधवकर विरचिते माधवनिदाने ग्रहणीनिदानं
समाप्तम् ॥ ४ ॥

अथार्शोनिदानम् ।

पृथग्दोषैः समस्तैश्च शोणितात्सहजानि च ।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि विद्याद्गुदवलित्रये ॥ १ ॥
दोषास्त्वङ्मांसमेदांसि संदूष्य विविधाकृतीन् ।
मांसाङ्कुरानपानादौ कुर्वन्त्यर्शांसि ताञ्जगुः ॥ २ ॥
कषायकटुतिक्तानि रूक्षशीतलघूनि च ।
प्रमिताल्पाशनं तीक्ष्णं मद्यं मैथुनसेवनम् ॥ ३ ॥
लंघनं देशकालौ च शीतौ व्यायाम कर्म च ।
शोको वातातपस्पर्शो हेतुर्वातार्शसां मतः ॥ ४ ॥
कट्वम्ललवणोष्णानि व्यायामाग्न्यातपप्रभाः × ।
देशकालावशिशिरौ क्रोधो मद्यमसूयनम् ॥ ५ ॥
विदाहि तीक्ष्णमुष्णं च सर्वं पानान्नभेषजम् ।
पित्तोल्बणानां विज्ञेयः प्रकोपे हेतुरर्शसाम् ॥ ६ ॥
मधुरस्निग्धशीतानि लवणाम्लगुरूणि च ।
अव्यायामो दिवास्वप्नः शय्यासनसुखे रतिः ॥ ७ ॥
प्राग्वातसेवा शीतौ च देशकालावचिन्तनम् ।
श्लैष्मिकाणां समुद्दिष्टमेतत्कारणमर्शसाम् ॥ ८ ॥
हेतुलक्षणसंसर्गाद्विद्याद्द्वन्द्वोल्बणानि च ।
सर्वो हेतुस्त्रिदोषाणां सहजैर्लक्षणं समम् ॥ ९ ॥
गुदाङ्कुरा बह्वनिलाः शुष्काश्चिमचिमान्विताः ।
म्लानाः श्यावारुणाः स्तब्धा विशदाः परुषाः खराः ॥१०॥

× 'श्रमाः' पाठान्तर

मिथोविसदृशा वक्रास्तीक्ष्णा विस्फुटिताननाः ।
बिम्बीखर्जूरकर्कन्धूकार्पासीफलसन्निभाः ॥११॥
केचित्कदम्बपुष्पाभाः केचित्सिद्धार्थकोपमाः ।
शिरःपार्श्वांसकट्यूरुवंक्षणाद्यधिकव्यथाः ॥१२॥
क्षवथूद्गारविष्टंभहृद्ग्रहारोचकप्रदाः ।
कासश्वासाग्निवैषम्यकर्णनादभ्रमावहाः ॥१३॥
तैरार्त्तो ग्रथितं स्तोकं सशब्दं सप्रवाहिकम् ।
रुक्फेनपिच्छानुगतं विबद्धमुपवेश्यते ॥१४॥
कृष्णत्वङ्नखविण्मूत्रनेत्रवक्त्रश्च जायते ।
गुल्मप्लीहोदराष्ठीलासंभवस्तत एव च ॥१५॥
पित्तोत्तरा नीलमुखा रक्तपीतासितप्रभाः ।
तन्वस्रस्राविणो विस्रास्तनवो मृदवः श्लथाः ॥१६॥
शुकजिह्वायकृत्खण्डजलौकोवक्त्रसन्निभाः ।
दाहपाकज्वरस्वेदतृण्मूर्च्छाऽरुचिमोहदाः ॥१७॥
सोष्माणो द्रवनीलोष्णपीतरक्तामवर्चसः ।
यवमध्या हरित्पीतहारिद्रत्वङ्नखादयः ॥१८॥
श्लेष्मोल्बणा महामूला घना मन्दरुजः सिताः ।
उत्सन्नोपचितस्निग्धस्तब्धवृत्तगुरुस्थिराः ॥१९॥
पिच्छिलाः स्तिमिताः श्लक्ष्णाःकण्ड्वाढ्याः स्पर्शनप्रियाः।
करीरपनसास्थ्याभास्तथा गोस्तनसन्निभाः ॥२०॥
वंक्षणानाहिनः पायुबस्तिनाभिविकर्षिणः ।
सश्वासकासहृल्लासप्रसेकारुचिपीनसाः ॥२१॥
मेहकृच्छ्रशिरोजाड्यशिशिरज्वरकारिणः ।
क्लैब्याग्निमार्दवच्छर्दिरामप्रायविकारदाः ॥२२॥

वसाभसकफप्रायपुरीषाः सप्रवाहिकाः ।
न स्रवन्ति न भिद्यन्ते पाण्डुस्निग्धत्वगादयः ॥२३॥
सर्वैः सर्वात्मकान्याहुर्लक्षणैः सहजानि च ।
रक्तोल्बणा गुदेकीलाः पित्ताकृतिसमन्विताः॥२४॥
वटप्ररोहसदृशा गुञ्जाविद्रुमसन्निभाः ।
तेऽत्यर्थं दुष्टमुष्णं च गाढविट्कप्रपीडिताः ॥२५॥
स्रवन्ति सहसा रक्तं तस्य चातिप्रवृत्तितः ।
भेकाभः पीड्यते दुःखैः शोणितक्षयसंभवैः ॥२६॥
हीनवर्णबलोत्साहो हतौजाः कलुषेन्द्रियः ।
विट् श्यावं कठिनं रूक्षमधोवायुर्न वर्त्तते ॥२७॥
तनु चारुणवर्णं च फेनिलं चासृगर्शसाम् ।
कट्यूरुगुदशूलं च दौर्बल्यं यदि चाधिकम् ॥ २८॥
तत्रानुबन्धो वातस्य हेतुर्यदि च रूक्षणम् ।
शिथिलं श्वेतपीतं च विट् स्निग्धं गुरु शीतलम् ॥२९॥
यद्यर्शसो घनं चासृक् तन्तुमत्पाण्डु पिच्छिलम्।
गुदं सपिच्छं स्तिमितं गुरु स्निग्धं च कारणम् ।
श्लेष्मानुबन्धो विज्ञेयस्तत्र रक्तार्शसां बुधैः ॥३०॥
विष्टम्भोऽन्नस्य दौर्बल्यं कुक्षेराटोप एव च ।
कार्श्यमुद्गारबाहुल्यं सक्थिसादोऽल्पविट्कता ॥३१॥
ग्रहणीदोषपांड्वर्त्तेराशङ्का चोदरस्य च ।
पूर्वरूपाणि निर्दिष्टान्यर्शसामभिवृद्धये ॥३२॥
पञ्चात्मा मारुतः पित्तं कफो गुदवलित्रयम् ।
सर्वे एव प्रकुप्यन्ति गुदजानां समुद्भवे ॥३३॥
तस्मादर्शांसि दुःखानि बहुव्याधिकराणि च ।

सर्वदेहोपतापीनि प्रायः कृच्छ्रतमानि च ॥३४॥
बाह्यायां तु वलौ जातान्येकदोषोल्बणानि च ।
अर्शांसि सुखसाध्यानि न चिरोत्पतितानि च ॥३५॥
द्वंद्वजानि द्वितीयायां वलौ यान्याश्रितानि च ।
कृच्छ्रसाध्यानि तान्याहुः परिसंवत्सराणि च ॥३६॥

सहजानि त्रिदोषाणि यानि चाभ्यन्तरां वलिम् ।
जायन्तेऽर्शांसि संश्रित्य तान्यसाध्यानि निर्दिशेत् ॥३७॥
शेषत्वादायुषस्तानि चतुष्पादसमन्विते ।
याप्यन्ते दीप्तकायाग्नेः प्रत्याख्येयान्यतोऽन्यथा ॥३८॥

हस्ते पादे मुखे नाभ्यां गुदे वृषणयोस्तथा ।
शोथो हृत्पार्श्वशूलं च यस्यासाध्योऽर्शसो हि सः ॥३९॥
हृत्पार्श्वशूलं संमोहश्छर्दिरङ्गस्य रुग्ज्वरः ।
तृष्णा गुदस्य पाकश्च निहन्युर्गुदजातुरम् ॥४०॥

तृष्णारोचकशूलार्तमतिप्रस्रुतशोणितम् ।
शोथातिसारसंयुक्तमर्शांसि क्षपयन्ति हि ॥४१॥
मेढ्रादिष्वपि वक्ष्यन्ते यथास्वं, नाभिजानि च ।
गण्डूपदास्यरूपाणि पिच्छिलानि मृदूनि च ॥४२॥

व्यानो गृहीत्वा श्लेष्माणं करोत्यर्शस्त्वचो बहिः ।
कीलोपमं स्थिरखरं चर्मकीलं तु तद्विदुः ॥४३॥
वातेन तोदपारुष्यं पित्तादसितवक्त्रता ।
श्लेष्मणा स्निग्धता चास्य ग्रथितत्वं सवर्णता ॥४४॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने ऽर्शोनिदानं समाप्तम् ॥५॥

अथाग्निमान्द्याजीर्णविसूचिकालसकविलम्बिका-निदानम् ।

मन्दस्तीक्ष्णोऽथ विषमः समश्चेति चतुर्विधः ।
कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः॥ १ ॥
विषमो वातजान् रोगान् तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान् ।
करोत्यग्निस्तथा मन्दो विकारान् कफसंभवान् ॥ २ ॥
समा समाग्नेरशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते ।
स्वल्पाऽपि नैव मन्दाग्नेर्विषमाग्नेस्तु देहिनः ॥ ३ ॥
कदाचित्पच्यते सम्यक्कदाचिन्न विपच्यते ।
मात्राऽतिमात्राऽप्यशिता सुखं यस्य विपच्यते ॥
तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यात्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ४ ॥
(नरे क्षीणकफे पित्तं कुपितं मारुतानुगम् ।
स्वोष्मणा पावकस्थाने बलमग्नेः प्रयच्छति ॥ १ ॥
तदा लब्धबलो देहं विरुजेन्× सानिलोऽनलः ।
अभिभूय पचत्यन्नं तैक्ष्ण्यादाशु मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥
पक्त्वाऽन्नं स ततो धातूञ्छोणितादीन्पचत्यपि ।
ततो दौर्बल्यमातङ्कान् मृत्युं चोपनयेन्नरम् ॥ ३ ॥
भुक्तेऽन्ने लभते शान्तिं जीर्णमात्रे प्रताम्यति ।
तृट्कासदाहमूर्च्छाःस्युर्व्याधयोऽत्यग्निसंभवाः ॥४॥)
आमं विदग्धं विष्टब्धं कफपित्तानिलैस्त्रिभिः ।
अजीर्णं केचिदिच्छन्ति चतुर्थं रसशेषतः ॥ ५ ॥
अजीर्णं पञ्चमं केचिन्निर्दोषं दिनपाकि च ।
वदन्ति षष्ठं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम् ॥ ६ ॥

× 'रूक्षं यत् सानिलोऽनलः' पाठान्तर

(भुक्त्वा पादशतं गत्वा वामपार्श्वेतु संविशेत्।
शब्दरूपरसस्पर्शगन्धांश्च मनसः प्रियान् ॥
भुक्त्वानुपसेवेत तेनान्नं साधु तिष्ठति ॥ १ ॥)
अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाच्च
सन्धारणात् स्वप्नविपर्ययाच्च ।
कालेऽपि सात्म्यं लघु चापि भुक्त-
मन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥ ७ ॥
ईर्ष्याभयक्रोधपरिप्लुतेन लुब्धेन रुग्दैन्यनिपीडितेन ।
प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक्परिपाकमेति ॥ ८ ॥
मात्रयाऽप्यभ्यवहृतं पथ्यं चान्नं न जीर्यति ।
चिन्ताशोकभयक्रोधदुःखशय्याप्रजागरैः ॥ ९ ॥
तत्रामे गुरुतोत्क्लेदः शोथोगण्डाक्षिकूटगः ।
उद्गारश्च यथाभुक्तमविदग्धः प्रवर्त्तते ॥१०॥
विदग्धे भ्रमतृण्मूर्च्छाः पित्ताच्च विविधा रुजः ।
उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ॥११॥
विष्टब्धे शूलमाध्मानं विविधा वातवेदनाः ।
मलवाताप्रवृत्तिश्च स्तम्भो मोहोऽङ्गपीडनम् ॥१२॥
रसशेषेऽन्नविद्वेषो हृदयाशुद्धिगौरवे ।
मूर्च्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः ।
उपद्रवा भवन्त्येते मरणं चाप्यजीर्णतः ॥१३॥
अनात्मवन्तः पशुवद् भुञ्जते येऽप्रमाणतः ।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्राप्नुवन्ति हि ॥१४॥
अजीर्णमामं विष्टब्धं विदग्धं च यदीरितम् ।
विसूच्यलसकौ तस्माद्भवेच्चापि विलम्बिका ॥१५॥

सूचीभिरिव गात्राणि तुदन् संतिष्ठतेऽनिलः ।
यत्राजीर्णेन सा वैद्यैर्विषूचीति निगद्यते ॥१६॥
न तां परिमिताहारा लभन्ते विदितागमाः ।
मूढास्तामजितात्मानो लभन्तेऽशनलोलुपाः ॥१७॥
मूर्च्छाऽतिसारो वमथुः पिपासा
शूलो भ्रमोद्वेष्टनजृम्भदाहाः ।
वैवर्ण्यकंपौ हृदये रुजश्च
भवन्ति तस्यां शिरसश्च भेदः ॥१८॥
कुक्षिरानह्यतेऽत्यर्थं प्रताम्येत्परिकूजति ।
निरुद्धो मारुतश्चैव कुक्षावुपरि धावति ॥१९॥
वातवर्चोनिरोधश्च यस्यात्यर्थं भवेदपि ।
तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्गारौ च यस्य तु ॥२०॥
दुष्टं तु भुक्तं कफमारुताभ्यां
प्रवर्तते नोर्ध्वमधश्च यस्य ।
विलम्बिकां तां भृशदुश्चिकित्स्या-
माचक्षते शास्त्रविदः पुराणाः ॥२१॥
यत्रस्थमामं विरुजेत्तमेव देशं विशेषेण विकारजातैः ।
दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणैरामसमुद्भवैश्च ॥२२॥
यः श्यावदन्तौष्ठनखोऽल्पसंज्ञो
वम्यर्दितोऽभ्यन्तरयातनेत्रः ।
क्षामस्वरः सर्वविमुक्तसन्धि-
र्यायान्नरः सोऽपुनरागमाय ॥२३॥
उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः ।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम् ॥२४॥

निद्रानाशोऽरतिः कम्पो मूत्राघातो विसंज्ञता।
अमी ह्युपद्रवा घोरा विसूच्यां पञ्च दारुणाः ॥२५॥
प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णं जायते नृणाम्।
तन्मूलो रोगसंघातस्तद्विनाशाद्विनश्यति ॥२६॥
ग्लानिगौरवविष्टम्भभ्रममारुतमूढताः।
विबन्धो वा प्रवृत्तिर्वा सामान्याजीर्णलक्षणम्॥२७॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽग्निमान्द्या-जीर्णविसूचिकालसकविलम्बिकानिदानं समाप्तम् ॥६॥

अथ क्रिमिनिदानम्।

क्रिमयस्तु द्विधा प्रोक्ता बाह्याभ्यन्तरभेदतः।
बहिर्मलकफासृग्विड्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः ॥ १ ॥
नामतो विंशतिविधा बाह्यास्तत्र मलोद्भवाः।
तिलप्रमाणसंस्थानवर्णाः केशाम्बराश्रयाः ॥ २ ॥
बहुपादाश्च सूक्ष्माश्च यूका लिक्षाश्च नामतः।
द्विधा ते कोठपिडकाकण्डूगण्डान्प्रकुर्वते ॥ ३ ॥
अजीर्णभोजी मधुराम्लनित्यो
द्रवप्रियः पिष्टगुडोपभोक्ता।
व्यायामवर्जी च दिवाशयानो
विरुद्धभुक्संलभते क्रिमींस्तु ॥ ४ ॥
माषपिष्टान्नलवणगुडशाकैः पुरीषजाः।
मांसमत्स्यगुडक्षीरदधिशुक्तैः कफोद्भवाः ॥ ५ ॥
विरुद्धाजीर्णशाकाद्यैः शोणितोत्था भवन्ति हि।
ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः सदनं भ्रमः ॥ ६ ॥

भक्तद्वेषोऽतिसारश्च संजातक्रिमिलक्षणम् ।
कफादामाशये जाता वृद्धाः सर्पन्ति सर्वतः ॥ ७॥
पृथुब्रध्ननिभाः केचित्केचिद्गण्डूपदोपमाः ।
रूढधान्याङ्कुराकारास्तनुदीर्घास्तथाऽणवः ॥ ८ ॥
श्वेतास्ताम्रावभासाश्च नामतः सप्तधा तु ते ।
अन्त्रादा उदरावेष्टा हृदयादा महागुदाः ॥ ९ ॥
चुरवो दर्भकुसुमाः सुगन्धास्ते च कुर्वते ।
हृल्लासमास्यस्रवणमविपाकमरोचकम् ॥१०॥
मूर्च्छाच्छर्दिज्वरानाहकार्श्यक्षवथु × पीनसान् ।
रक्तवाहिशिरास्थानरक्तजा जन्तवोऽणवः ॥११॥
अपादा वृत्तताम्राश्च सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः ।
केशादा रोमविध्वंसा रोमद्वीपा उदुम्बराः ।
षट् ते कुष्ठैककर्माणः सहसौरसमातरः ॥१२॥
पक्वाशये पुरीषोत्था जायन्तेऽधोविसर्पिणः ।
प्रवृद्धाः स्युर्भवेयुश्च ते यदाऽमाशयोन्मुखाः ॥१३॥
तदाऽस्योद्गारनिःश्वासा विड्गन्धानुविधायिनः ।
पृथुवृत्ततनुस्थूलाः श्यावपीतसितासिताः ॥१४॥
ते पञ्च नाम्ना क्रिमयः ककेरुकमकेरुकाः ।
सौसुरादाः + सशूलाख्या लेलिहा जनयन्ति हि ॥१५॥
विड्भेदशूलविष्टम्भकार्श्यपारुष्यपाण्डुताः ।

✽ महारुजः × 'तृषानाह कार्श्यश्वयथु'

+ 'सौसुरादामलूनाश्च'

रोमहर्षोऽग्निसदनं गुदकण्डूर्विमार्गगाः ॥१९॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने क्रिमिनिदानं समाप्तम् ॥ ७ ॥

अथ पाण्डुरोगकामलाकुम्भकामलाहलीमक-निदानम् ।

पाण्डुरोगाः स्मृताः पञ्च वातपित्तकफैस्त्रयः ।
चतुर्थः सन्निपातेन पञ्चमो भक्षणान्मृदः ॥ १ ॥

व्यायाममम्लं * लवणानि मद्यं
मृदं दिवास्वप्नमतीव तीक्ष्णम् ।
निषेवमाणस्य प्रदूष्य रक्तं
दोषास्त्वचं पाण्डुरतां नयन्ति ॥ २ ॥

त्वक्स्फोटनष्ठीवनगात्रसाद-
मृद्भक्षणप्रेक्षणकूटशोथाः ।
विण्मूत्रपीतत्वमथाविपाको
भविष्यतस्तस्य पुरः सराणि ॥ ३ ॥

त्वङ्मूत्रनयनादीनां रूक्षकृष्णारुणाभता ।
वातपाण्ड्वामये तोदकम्पानाहभ्रमादयः ॥ ४ ॥
पीतमूत्रशकृन्नेत्रो दाहतृष्णाज्वरान्वितः ।
भिन्नविट्कोऽतिपीताभः पित्तपाण्ड्वामयी नरः ॥ ५ ॥
कफप्रसेकश्वयथुतन्द्रालस्यातिगौरवैः ।
पाण्डुरोगी कफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥ ६ ॥

---

* 'व्यवायमम्लं' इति पाठाभिप्रायेण ।

ज्वरारोचकहृल्लासच्छर्दितृष्णाक्लमान्वितः ।
पाण्डुरोगी त्रिभिर्दोषैस्त्याज्यः क्षीणो हतेन्द्रियः॥ ७ ॥
मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमो मलः ।
कषाया मारुतं पित्तमूषरा मधुरा कफम् ॥ ८ ॥
कोपयेन्मृद्रसादींश्च रौक्ष्याद् भुक्तं च रूक्षयेत् ।
पूरयत्यविपक्वैव स्रोतांसि निरुणद्ध्यपि ॥ ९ ॥
इन्द्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा ।
पाण्डुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनम् ॥१०॥
शूनाक्षिकूटगण्डभ्रूः शूनपान्नाभिमेहनः ।
क्रिमिकोष्ठोऽतीसार्येत मलं सासृक्कफान्वितम्॥ ११॥
पाण्डुरोगश्चिरोत्पन्नः खरीभूतो न सिद्धयति ।
कालप्रकर्षाच्छूनानां × यो वा पीतानि पश्यति॥ १२॥
बद्धाल्पविट् सहरितं सकफं योऽतिसार्यते ।
दीनः श्वेतातिदिग्धाङ्गश्छर्दिमूर्च्छातृडर्दितः ॥ १३॥
स नास्त्यसृक्क्षयाद्यश्च पाण्डुःश्वेतत्वमाप्नुयात् ।
पाण्डुदन्तनखो यस्तु पाण्डुनेत्रश्च यो भवेत् ।
पाण्डुसङ्घातदर्शी च पाण्डुरोगी विनश्यति ॥ १४॥
अंतेषु शूनं परिहीणमध्यं
म्लानं तथाऽन्तेषु च मध्यशूनम् ।
गुदे च शेफस्यथ मुष्कयोश्च
शूनं प्रताम्यन्तमसंज्ञकल्पम् ।
विवर्जयेत्पाण्डुकिनं यशोऽर्थी
तथाऽतिसारज्वरपीडितं च ॥ १५॥

× 'कालप्रकर्षाच्छूनाङ्गो' पाठान्तर ।

(अन्ते शूनः कृशो मध्ये ऽन्यथा च गुदशेफसि।
शूनो ज्वरातिसारार्तोमृतकल्पस्तु पालकी ॥ १ ॥)
पाण्डुरोगी तु योऽत्यर्थं पित्तलानि निषेवते।
तस्य पित्तमसृङ्मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते ॥१६॥
हारिद्रनेत्रः स भृशं हारिद्रत्वङ्नखाननः।
रक्तपीतशकृन्मूत्रो भेकवर्णो हतेन्द्रियः ॥१७॥
दाहाविपाकदौर्बल्यसदनारुचिकर्षितः।
कामला बहुपित्तैषा कोष्ठशाखाश्रया मता ॥१८॥
कालान्तरात्खरीभूता कृच्छ्रा स्यात्कुम्भकामला।
कृष्णपीतशकृन्मूत्रो भृशं शूनश्च मानवः ॥१९॥
सरक्ताक्षिमुखच्छर्दिविण्मूत्रो यश्च ताम्यति।
दाहारुचितृडानाहतन्द्रामोहसमन्वितः ॥२०॥
नष्टाग्निसंज्ञः क्षिप्रं हि कामलावान्विपद्यते।
छर्द्यरोचकहृल्लासज्वरक्लमनिपीडितः ॥२१॥
नश्यति श्वासकासार्तो विड्भेदी कुम्भकामली।
यदा तु पाण्डोर्वर्णः स्याद्धरितः श्यावपीतकः ॥२२॥
बलोत्साहक्षयस्तन्द्रा मन्दाग्नित्वं मृदुज्वरः।
स्त्रीष्वहर्षोऽङ्गमर्दश्च दाहस्तृष्णाऽरुचिर्भ्रमः।
हलीमकं तदा तस्य विद्यादनिलपित्ततः ॥२३॥
(सन्तापो भिन्नवर्चस्त्वं बहिरन्तश्च पीतता।
पाण्डुता नेत्रयोर्यस्य पानकीलक्षणं भवेत् ॥१॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने पाण्डुरोग-
कामलाकुम्भकामलाहलीमकनिदानं समाप्तम् ॥८॥

अथ रक्तपित्तनिदानम् ।

घर्मव्यायामशोकाध्वव्यवायैरतिसेवितैः ।
तीक्ष्णोष्णक्षारलवणैरम्लैः कटुभिरेव च ॥ १ ॥
पित्तं विदग्धं स्वगुणैर्विदहत्याशु शोणितम् ।
ततःप्रवर्त्तते रक्तमूर्ध्वं चाधो द्विधाऽपि वा ॥ २ ॥
ऊर्ध्वं नासाक्षिकर्णास्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः ।
कुपितं रोमकूपैश्च समस्तैस्तत्प्रवर्तते ॥ ३ ॥
सदनं शीतकामित्वं कण्ठधूमायनं वमिः ।
लोहगन्धिश्च निःश्वासो भवत्यस्मिन् भविष्यति ॥ ४ ॥
सान्द्रं सपाण्डु सस्नेहं पिच्छिलं च कफान्वितम् ।
श्यावारुणं सफेनं च तनु रूक्षं च वातिकम् ॥ ५ ॥
रक्तपित्तं कषायाभं कृष्णं गोमूत्रसंनिभम् ।
मेचकागारधूमाभमञ्जनाभं च पैत्तिकम् ॥ ६ ॥
संसृष्टलिङ्गं संसर्गात्त्रिलिङ्गं सान्निपातिकम् ।
ऊर्ध्वगं कफसंसृष्टमधोगं पवनानुगम् ।
द्विमार्गं कफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्त्तते ॥ ७ ॥
ऊर्ध्वं साध्यमधो याप्यमसाध्यं युगपद्गतम् ।
एकमार्गं बलवतो नातिवेगं नवोत्थितम् ॥ ८ ॥
रक्तपित्तं सुखे काले साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ।
एकदोषानुगं साध्यं द्विदोषं याप्यमुच्यते ॥ ९ ॥
यत्त्रिदोषमसाध्यं स्यान्मन्दाग्नेरतिवेगवत् ।
व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यानश्नतश्च यत् ॥१०॥
दौर्बल्यश्वासकासज्वरवमथुमदाः
पाण्डुता दाहमूर्च्छा,

भुक्ते घोरो विदाहस्त्वधृतिरपिसदा
हृद्यतुल्या च पीडा ।
तृष्णा कोष्ठस्य भेदः शिरसि च तपनं
पूतिनिष्ठीवनत्वं,
भक्तद्वेषाविपाकौ विकृतिरपि भवे-
द्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥११॥
मांसप्रक्षालनाभं कुथितमिव च यत्
कर्दमाम्भोनिभं वा,
मेदः पूयास्रकल्पं यकृदिव यदि वा
पक्वजम्बूफलाभम् ।
यत्कृष्णं यच्च नीलं भृशमतिकुणपं
यत्र चोक्ता विकारा-
स्तद्वर्ज्यं रक्तपित्तं सुरपतिधनुषा
यच्च तुल्यं विभाति ॥१२॥
येन चोपहतो रक्तं रक्तपित्तेन मानवः ।
पश्येद् दृश्यं वियच्चापि तच्चासाध्यमसंशयम् ॥१३॥
लोहितं छर्दयेद्यस्तु बहुशो लोहितेक्षणः ।
लोहितोद्गारदर्शी च म्रियते रक्तपैत्तिकः ॥१४॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने रक्तपित्तनिदानं
समाप्तम् ॥ ९ ॥

अथ राजयक्ष्मक्षतक्षीणनिदानम् ।

वेगरोधात् क्षयाच्चैव साहसाद्विषमाशनात् ।
त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतुचतुष्टयात् ॥ १ ॥

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु ।
अतिव्यवायिनो वाऽपि क्षीणे रेतस्यनन्तराः ॥
क्षीयन्ते धातवः सर्वे ततः शुष्यति मानवः ॥ २ ॥
श्वासाङ्गसादकफसंस्रवतालुशोष-
वम्यग्निसादमदपीनसकासनिद्राः ।
शोषे भविष्यति भवन्ति स चापि जन्तुः
शुक्लेक्षणो भवति मांसपरो रिरंसुः ॥ ३ ॥
स्वप्नेषु काकशुकशल्लकिनीलकण्ठा
गृध्रास्तथैव कपयः कृकलासकाश्च ।
तं वाहयन्ति स नदीर्विजलाश्च पश्ये-
च्छुष्कांस्तरून्पवनधूमदवार्दितांश्च ॥ ४ ॥
अंसपार्श्वाभितापश्च संतापः करपादयोः ।
ज्वरः सर्वाङ्गगश्चेति लक्षणं राजयक्ष्मणः ॥ ५ ॥
(भक्त द्वेषो ज्वरः श्वासः कासः शोणितदर्शनम् ।
स्वरभेदश्च जायेत षड्रूपं राज यक्ष्मणि ॥ १ ॥)
स्वरभेदोऽनिलाच्छूलं संकोचश्चांसपार्श्वयोः ।
ज्वरो दाहोऽतिसारश्च पित्ताद्रक्तस्य चागमः ॥ ६ ॥
शिरसः परिपूर्णत्वमभक्तच्छन्द एव च ।
कासः कण्ठस्य चोद्ध्वंसो विज्ञेयः कफकोपतः ॥ ७ ।
एकादशभिरेभिर्वा षड्भिर्वाऽपि समन्वितम् ।
कासातीसारपार्श्वार्तिस्वरभेदारुचिज्वरैः ॥८॥
त्रिभिर्वा पीडितं लिङ्गैः कासश्वासासृगामयैः ।
जह्याच्छोषार्दितं जन्तुमिच्छन्सुविमलं* यशः ॥ ९ ॥

* 'विपुल'

सर्वैरर्धैस्त्रिभिर्वाऽपि लिङ्गैर्मांस बलक्षये ।
युक्तो वर्ज्यश्चिकित्स्यस्तु सर्वरूपोऽप्यतोऽन्यथा॥१०॥
महाशनं क्षीयमाणमतीसारनिपीडितम् ।
शूनमुष्कोदरं चैव यक्ष्मिणं परिवर्जयेत् ॥११॥
शुक्लाक्षमन्नद्वेष्टारमूर्ध्वश्वासनिपीडितम् ।
कृच्छ्रेण बहुमेहन्तं यक्ष्मा हन्तीह मानवम् ॥१२॥
ज्वरानुबन्धरहितं बलवन्तं क्रियासहम् ।
उपक्रमेदात्मवन्तं दीप्ताग्निमकृशं नरम् ॥१३॥
व्यवायशोकवार्द्धक्यव्यायामाध्वप्रशोषितान् ।
व्रणोरःक्षतसंज्ञौ च शोषिणौ लक्षणैः शृणु ॥१४॥
व्यवायशोषी शुक्रस्य क्षयलिङ्गैरुपद्रुतः ।
पाण्डुदेहो यथापूर्वं क्षीयन्ते चास्य धातवः ॥१५॥
प्रध्यानशीलः स्रस्ताङ्गः शोकशोष्यपि तादृशः ।
जराशोषी कृशो मन्दवीर्यबुद्धिबलेन्द्रियः ॥१६॥
कंपनोऽरुचिमान् भिन्नकांस्यपात्रहतस्वरः ।
ष्ठीवति श्लेष्मणा हीनं गौरवारतिपीडितः* ॥१७॥
संप्रस्रुतास्यनासाक्षिः शुष्करूक्षमलच्छविः ।
अध्वशोषी च स्रस्ताङ्गः संभृष्टपरुषच्छविः ॥१८॥
प्रसुप्तगात्रावयवः शुष्कक्लोमगलाननः ।
व्यायामशोषी भूयिष्ठमेभिरेव समन्वितः ।
लिङ्गैरुरः क्षतकृतैः संयुक्तश्च क्षतं विना ॥१९॥
रक्तक्षयाद्वेदनाभिस्तथैवाहारयन्त्रणात् ।

---

* 'गौरवारुचिपीडितः' इतिपाठाभिप्रायेण

व्रणितस्य भवेच्छोषः स चासाध्यतमो मतः ॥२०॥
धनुषाऽऽयस्यतोऽत्यर्थं भारमुद्वहतो गुरुम् ।
युध्यमानस्य बलिभिः पततो विषमोच्चतः ॥२१॥
वृषं हयं वा धावन्तं दम्यं वाऽन्यं निगृह्णतः ।
शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान् क्षिपतो निघ्नतः परान्॥२२॥
अधीयानस्य वाऽत्युच्चैर्दूरं वा व्रजतो द्रुतम् ।
महानदीर्वा तरतो हयैर्वा सह धावतः ॥२३॥
सहसोत्पततो दूरं तूर्णं वाऽपि प्रनृत्यतः ।
तथाऽन्यैः कर्मभिः क्रूरैर्भृशमभ्याहतस्य वा ॥२४॥
विक्षते वक्षसि व्याधिर्बलवान् समुदीर्यते ।
स्त्रीषु चातिप्रसक्तस्य रूक्षाल्पप्रमिताशिनः ॥२५॥
उरो विभज्यतेऽत्यर्थं भिद्यतेऽथ विरुज्यते ।
प्रपीड्यते ततः पार्श्वे शुष्यत्यङ्गं प्रवेपते ॥२६॥
क्रमाद्वीर्यं बलं वर्णो रुचिरग्निश्च हीयते ।
ज्वरो व्यथा मनोदैन्यं विड्भेदाग्निवधावपि ॥२७॥
दुष्टः श्यावः सुदुर्गन्धः पीतो विग्रथितो बहुः ।
कासमानस्य चाभीक्ष्णं कफः सासृक् प्रवर्त्तते ॥२८॥
स क्षती क्षीयतेऽत्यर्थं तथा शुक्रौजसोःक्षयात् ।
अव्यक्तं लक्षणं तस्य पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥२९॥
उरोरुक्शोणितच्छर्दिः कासो वैशेषिकः क्षते + ।
क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटीग्रहः ॥३०॥
अल्पलिङ्गस्य दीप्ताग्नेः साध्यो बलवतो नवः ।

+ 'कफे' पाठान्तर ।

परिसंवत्सरो याप्यः सर्वलिङ्गं तु वर्जयेत् ॥३१॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने राजयक्ष्म-
क्षतक्षीणनिदानं समाप्तम् ॥ १० ॥

अथ कासनिदानम् ।

धूमोपघाताद्रजसस्तथैव
व्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च ।
विमार्गगत्वाच्च हि भोजनस्य
वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव ॥ १ ॥

प्राणो ह्युदानानुगतः प्रदुष्टः
स भिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः ÷ ।
निरेति वक्त्रात्सहसा सदोषो
मनीषिभिः कास इति प्रदिष्टः ॥ २ ॥

पञ्च कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः ।
क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम् ॥ ३ ॥

पूर्वरूपं भवेत्तेषां शूकपूर्णगलास्यता ।
कण्ठे कण्डूश्च भोज्यानामवरोधश्च जायते ॥ ४ ॥

हृच्छङ्खमूर्धोदरपार्श्वशूली
क्षामाननः क्षीणबलस्वरौजाः ।
प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन
भिन्नस्वरः कासति शुष्कमेव ॥ ५ ॥

उरोविदाहज्वरवक्त्रशोषै-
रभ्यर्दितस्तिक्तमुखस्तृषार्तः ।

÷ 'सं भिन्नकांस्यस्वरतुल्यघोषः'

पित्तेन पीतानि वमेत्कटूनि
कासेत्सपाण्डुः परिदह्यमानः ॥ ६ ॥
प्रलिप्यमानेन मुखेन सीदन्-
शिरोरुजार्तः कफपूर्णदेहः ।
अभक्तरुग्गौरवकण्डुयुक्तः
कासेद्भृशं सान्द्रकफः कफेन ॥ ७ ॥
अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजविग्रहैः* ।
रूक्षस्योरः क्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमाचरेत् ॥ ८ ॥
स पूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवेत्सशोणितम् ।
कण्ठेन रुजताऽत्यर्थं विरुग्णेनेव चोरसा ॥ ९ ॥
सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना ।
दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना ॥ १० ॥
पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैस्वर्यपीडितः ।
पारावत इवाकूजन् कासवेगात्क्षतोद्भवात् ॥ ११ ॥
विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात् ।
घृणिनां शोचतां नृणां व्यापन्नेऽग्नौ त्रयो मलाः ।
कुपिताः क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ॥ १२ ॥
स गात्रशूलज्वरदाहमोहान्
प्राणक्षयं चोपलभेत कासी ।
शुष्यन्विनिष्ठीवति दुर्बलस्तु
प्रक्षीणमांसो रुधिरं सपूयम् ।
तं सर्वलिङ्गं भृशदुश्चिकित्स्यं
चिकित्सितज्ञाः क्षयजं वदन्ति ॥ १३ ॥

---

* 'निग्रहैः' पाठान्तर

इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः ।
साध्यो बलवतां वा स्याद्याप्यस्त्वेव क्षतोत्थितः॥१४॥
नवौ कदाचित्सिध्येतामपि पादगुणान्वितौ ।
स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः ।
त्रीन्पूर्वान्साधयेत्साध्यान् पथ्यैर्याप्यांस्तु यापयेत् ॥१५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने कासनिदानं समाप्तम् ॥ ११ ॥

अथ हिक्काश्वासनिदानम् ।

विदाहिगुरुविष्टम्भिरूक्षाभिष्यन्दिभोजनैः ।
शीतपानाशनस्थानरजोधूमातपानिलैः × ॥ १ ॥
व्यायामकर्मभाराध्ववेगाघातापतर्पणैः ।
हिक्का श्वासश्च कासश्च नृणां समुपजायते ॥ २ ॥
मुहुर्मुहुर्वायुरुदेति सस्वनो
यकृत्प्लिहान्त्राणि मुखादिवाक्षिपन् ।
स घोषवानाशु हिनस्त्यसून् यत-
स्ततस्तु हिक्केत्यभिधीयते बुधैः ॥ ३ ॥
अन्नजां यमलां क्षुद्रां गम्भीरां महतीं तथा ।
वायुः कफेनानुगतः पञ्च हिक्काः करोति हि ॥ ४ ॥
कण्ठोरसोर्गुरुत्वं च वदनस्य कषायता ।
हिक्कानां पूर्वरूपाणि कुक्षेराटोप एव च ॥ ५ ॥
पानान्नैरतिसंयुक्तैः सहसा पीडितोऽनिलः ।
हिक्कयत्यूर्ध्वगो भूत्वा तां विद्यादन्नजां भिषक् ॥ ६ ॥

× 'शीतपानाशन स्नान रजोधूमातपानिलैः'

चिरेण यमलैर्वेगैर्या हिक्का संप्रवर्तते ।
कंपयन्ती शिरोग्रीवं यमलां तां विनिर्दिशेत् ॥ ७ ॥
प्रकृष्टकालैर्या वेगैर्मन्दैः समभिवर्तते ।
क्षुद्रिका नाम सा हिक्का जत्रुमूलात्प्रधाविता ॥ ८ ॥

नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गम्भीरनादिनी ।
अनेकोपद्रववती गम्भीरा नाम सा स्मृता ॥ ९ ॥
मर्माण्युत्पीडयन्तीव सततं या प्रवर्तते ।
महाहिक्केति सा ज्ञेया सर्वगात्रविकम्पिनी ॥१०॥

आयम्यते हिक्कतो यस्य देहो
दृष्टिश्चोर्ध्वं नाम्यते यस्य नित्यम् ।
क्षीणोऽन्नद्विट् क्षौति यश्चातिमात्रं
तौ द्वौ चान्त्यौ वर्जयेद्धिक्कमानौ ॥११॥

अतिसञ्चितदोषस्य भक्तच्छेदकृशस्य च ।
व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यातिव्यवायिनः ॥१२॥
आसां या सा समुत्पन्ना हिक्का हन्त्याशु जीवितम् ।
यमिका च प्रलापार्तिमोहतृष्णासमन्विता ॥१३॥

अक्षीणश्चाप्यदीनश्च स्थिरधात्विन्द्रियश्च यः ।
तस्य साधयितुं शक्या यमिका हन्त्यतोऽन्यथा ॥१४॥
महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैस्तु पञ्चधा ।
भिद्यते स महाव्याधिः श्वास एको विशेषतः ॥१५॥

(वाताधिको भवेत् क्षुद्रस्तमकस्तु कफोद्भवः ।
कफवाताधिकश्चैव संसृष्टश्छिन्नसंज्ञकः ।
श्वासो मारुतसंसृष्टो महानूर्ध्वस्ततो मतः ॥ १ ॥)

प्राग्रूपं तस्य हृत्पीडा शूलमाध्मानमेव च ।
आनाहो वक्त्रवैरस्यं शंखनिस्तोद एव च ॥१६॥
यदा स्रोतांसि संरुध्य मारुतः कफपूर्वकः ।
विष्वग्व्रजति संरुद्धस्तदा श्वासान् करोति सः ॥१७॥
उद्धूयमानवातो यः शब्दवद्दुःखितो नरः ।
उच्चैः श्वसिति संरुद्धो मत्तर्षभ इवानिशम् ॥१८॥
प्रनष्टज्ञानविज्ञानस्तथा विभ्रान्तलोचनः ।
विवृताक्ष्याननो बद्धमूत्रवर्चा विशीर्णवाक् ॥१९॥
दीनः प्रश्वसितं चास्य दूराद्विज्ञायते भृशम् ।
महाश्वासोपसृष्टस्तु क्षिप्रमेव विपद्यते ॥२०॥
ऊर्ध्वं श्वसिति यो दीर्घं न च प्रत्याहरत्यधः ।
श्लेष्मावृतमुखस्रोताः क्रुद्धगन्धवहार्दितः ॥२१॥
ऊर्ध्वदृष्टिर्विपश्यंस्तु विभ्रांताक्ष इतस्ततः ।
प्रमुह्यन्वेदनार्तश्च शुष्कास्योऽरतिपीडितः ॥२२॥
ऊर्ध्वश्वासे प्रकुपिते ह्यधः श्वासो निरुध्यते ।
मुह्यतस्ताम्यतश्चोर्ध्वं श्वासस्तस्यैव हन्त्यसून् ॥२३॥
यस्तु श्वसिति विच्छिन्नं सर्वप्राणेन पीडितः ।
न वा श्वसिति दुःखार्तो मर्मच्छेदरुगर्दितः ॥२४॥
आनाहस्वेदमूर्च्छार्तो दह्यमानेन बस्तिना ।
विप्लुताक्षः परिक्षीणः श्वसन् रक्तैकलोचनः ॥२५॥
विचेताः परिशुष्कास्यो विवर्णः प्रलपन्नरः ।
छिन्नश्वासेन विच्छिन्नः स शीघ्रं विजहात्यसून् ॥२६॥
प्रतिलोमं यदा वायुः स्रोतांसि प्रतिपद्यते ।
ग्रीवां शिरश्च संगृह्य श्लेष्माणं समुदीर्य च ॥२७॥

करोति पीनसं तेन रुद्धो घुर्घुरकं तथा ।
अतीव तीव्रवेगं च श्वासं प्राणप्रपीडकम् ॥२८॥
प्रताम्यति स वेगेन तृष्यते सन्निरुद्धयते ।
प्रमोहं कासमानश्च स गच्छति मुहुर्मुहुः ॥२९॥
श्लेष्मण्यमुच्यमाने तु भृशं भवति दुःखितः ।
तस्यैव च विमोक्षान्ते मुहूर्त्तं लभते सुखम् ॥३०॥
तथाऽस्योद्ध्वंसते कण्ठः कृच्छ्राच्छक्नोति भाषितुम् ।
न चापि लभते निद्रां शयानः श्वासपीडितः ॥३१॥
पार्श्वे तस्यावगृह्णाति शयानस्य समीरणः ।
आसीनो लभते सौख्यमुष्णं चैवाभिनन्दति ॥३२॥
उच्छ्रिताक्षो ललाटेन स्विद्यता भृशमार्त्तिमान् ।
विशुष्कास्यो मुहुः श्वासो मुहुश्चैवावधम्यते ॥३३॥
मेघाम्बुशीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्धते ।
स याप्यस्तमकः श्वासः साध्यो वा स्यान्नवोत्थितः ॥३४॥
ज्वरमूर्च्छापरीतस्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् ।
उदावर्तरजोजीर्णक्लिन्नकायनिरोधजः ॥३५॥
तमसा वर्धतेऽत्यर्थं शीतैश्चाशु प्रशाम्यति ।
मज्जतस्तमसीवास्य विद्यात्संतमकं तु तम् ॥३६॥
रूक्षायासोद्भवःकोष्ठे क्षुद्रो वात उदीरयन् ।
क्षुद्रश्वासो न सोऽत्यर्थं दुःखेनाङ्गप्रबाधकः ॥३७॥
हिनस्ति न स गात्राणि न च दुःखो यथेतरे ।
न च भोजनपानानां निरुणद्ध्युचितां गतिम् ॥३८॥
नेन्द्रियाणां व्यथां नापि काञ्चिदापादयेद्रुजम् ।
स साध्य उक्तो बलिनः सर्वे चाव्यक्तलक्षणाः ॥३९॥

क्षुद्रः साध्यो मतस्तेषां तमकः क्षुद्र उच्यते ।
त्रयः श्वासा न सिध्यन्ति तमको दुर्बलस्य च ॥४०॥
कामं प्राणहरा रोगा बहवो न तु ते तथा ।
यथा श्वासश्च हिक्का च हरतः प्राणमाशु च ॥४१॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने हिक्काश्वास-
निदानं समाप्तम् ॥ १२ ॥

अथ स्वरभेदनिदानम् ।

अत्युच्चभाषणविषाध्ययनाभिघात-
संदूषणैः प्रकुपिताः पवनादयस्तु ।
स्रोतःसु ते स्वरवहेषु गताः प्रतिष्ठां
हन्युः स्वरं भवति चापि हि षड्विधः सः ॥१॥
(वातादिभिः पृथक् सर्वैर्मेदसा च क्षयेण च ।)
वातेन कृष्णनयनाननमूत्रवर्चा
भिन्नं शनैर्वदति गर्दभवत्खरं च ।
पित्तेन पीतनयनाननमूत्रवर्चा
ब्रूयाद्गलेन स च दाहसमन्वितेन ॥ २ ॥
ब्रूयात्कफेन सततं कफरुद्धकण्ठः
स्वल्पं शनैर्वदति चापि दिवा विशेषात् ।
सर्वात्मके भवति सर्वविकारसंपत्
तं चाप्यसाध्यमृषयः स्वरभेदमाहुः ॥ ३ ॥
धूप्येत वाक्क्षयकृते क्षयमाप्नुयाच्च
वागेष चापि हतवाक्परिवर्जनीयः ।

अन्तर्गतस्वरमलक्ष्यपदं चिरेण
　　मेदोन्वयाद्वदति दिग्धगलस्तृषार्त्तः ॥ ४ ॥
क्षीणस्य वृद्धस्य कृशस्य वाऽपि
　　चिरोत्थितो यश्च सहोपजातः ।
मेदस्विनः सर्वसमुद्भवश्च
　　स्वरामयो यो न स सिद्धिमेति ॥ ५ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने स्वरभेदनिदानं समाप्तम् ॥ १३ ॥

अथारोचकनिदानम् ।

वातादिभिः शोकभयातिलोभ-
　　क्रोधैर्मनोघ्नाशनरूपगन्धैः ।
अरोचकाः स्युः, परिहृष्टदन्तः
　　कषायवक्त्रश्च मतोऽनिलेन ॥ १ ॥
कट्वम्लमुष्णं विरसं च पूति
　　पित्तेन विद्याल्लवणं च वक्त्रम् ।
माधुर्यपैच्छिल्यगुरुत्वशैत्य-
　　विबद्धसंबद्धयुतं कफेन ॥ २ ॥
अरोचके शोकभयातिलोभ-
　　क्रोधाद्यहृद्याशुचिगन्धजे स्यात् ।
स्वाभाविकं चास्यमथारुचिश्च
　　त्रिदोषजे नैकरसं भवेत्तु ॥ ३ ॥
हृच्छूलपीडनयुतंपवनेनपित्ता-

तृड्दाहचोषबहुलं, सकफप्रसेकम्।
श्लेष्मात्मकं, बहुरुजं बहुभिश्च विद्या-
द्वैगुण्यमोहजडताभिरथापरं च ॥ ४ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽरोचकनिदानं समाप्तम् ॥ १४ ॥

अथ छर्दिनिदानम् ।

दुष्टैर्दोषैः पृथक्सर्वैर्बीभत्सालोचनादिभिः ।
छर्दयःपञ्च विज्ञेयास्तासां लक्षणमुच्यते ॥ १ ॥
अतिद्रवैरतिस्निग्धैरहृद्यैर्लवणैरति ।
अकाले चातिमात्रैश्च तथाऽसात्म्यैश्चभोजनैः॥ २ ॥
श्रमाद्भयात्तथोद्वेगादजीर्णात्क्रिमिदोषतः ।
नार्याश्चापन्नसत्त्वायास्तथाऽतिद्रुतमश्नतः ॥ ३ ॥
बीभत्सैर्हेतुभिश्चान्यैर्द्रुतमुत्क्लेशितो बलात् ।
छादयन्नाननं वेगैरर्दयन्नङ्गभञ्जनैः ॥
निरुच्यते छर्दिरिति दोषो वक्त्रं प्रधावितः ॥ ४ ॥
हृल्लासोद्गाररोधौ च प्रसेको लवणस्तनुः ।
द्वेषोऽन्नपाने च भृशं वमीनां पूर्वलक्षणम् ॥ ५ ॥
हृत्पार्श्वपीडा मुखशोषशीर्ष-
नाभ्यर्तिकासस्वरभेदतोदैः ।
उद्गारशब्दप्रबलं सफेनं
विच्छिन्नकृष्णं तनुकं कषायम् ।
कृच्छ्रेण चाल्पं महता च वेगे-
नार्तोऽनिलाच्छर्दयतीह दुःखम् ॥६॥

मूर्च्छापिपासामुखशोषमूर्ध-
तात्वक्षिसन्तापतमोभ्रमार्तः ।
पीतं भृशोष्णं हरितं सतिक्तं
धूम्रं च पित्तेन वमेत्सदाहम् ॥ ७ ॥
तन्द्रास्यमाधुर्यकफप्रसेक-
सन्तोषनिद्रारुचिगौरवार्तः ।
स्निग्धं घनं स्वादु कफाद्विशुद्धं
सरोमहर्षोऽल्परुजं वमेत्तु ॥ ८ ॥
शूलाविपाकारुचिदाहतृष्णा-
श्वासप्रमोहप्रबला प्रसक्तम् ।
छर्दिस्त्रिदोषाल्लवणाम्लनील-
सांद्रोष्णरक्तं वमतां नृणां स्यात् ॥ ९ ॥
विट्स्वेदमूत्राम्बुवहानि वायुः
स्रोतांसि संरुध्य यदोर्ध्वमेति ।
उत्सन्नदोषस्य समाचितं तं
दोषं समुद्धूय नरस्य कोष्ठात् ॥१०॥
विण्मूत्रयोस्तत्समगन्धवर्णं
तृट्श्वासहिक्कार्तियुतं प्रसक्तम् + ।
प्रच्छर्दयेद्दुष्टमिहातिवेगा-
त्तयाऽर्दितश्चाशु विनाशमेति ॥११॥
बीभत्सजा दौर्हृदजाऽऽमजा च
ह्यसात्म्यजा च क्रिमिजा च या हि ।

+ 'तृट्श्वासकासार्तियुतं प्रसक्तं'

सा पञ्चमी तां च विभावयेच्च
　　　　दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥१२॥
शूलहृल्लासबहुला क्रिमिजा च विशेषतः ।
क्रिमिहृद्रोगतुल्येन लक्षणेन च लक्षिता ॥१३॥
क्षीणस्य या छर्दिरतिप्रसक्ता
　　　　सोपद्रवा शोणितपूययुक्ता ।
सचन्द्रिकां तां प्रवदेदसाध्यां,
　　　　साध्यां चिकित्सेन्निरुपद्रवां च ॥१४॥
(कासश्वासोऽज्वरो हिक्का तृष्णा वैचित्त्यमेव च ।
हृद्रोगस्तमकश्चैव ज्ञेयाश्छर्देरुपद्रवाः ॥१५॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने छर्दिनिदानं समाप्तम् ॥१५॥

अथ तृष्णानिदानम् ।

भयश्रमाभ्यां बलसंक्षयाद्वा
　　　　ह्यूर्ध्वं चितं पित्तविवर्धनैश्च ।
पित्तं सवातं कुपितं नराणां
　　　　तालुप्रपन्नं जनयेत्पिपासाम् ।
स्रोतःस्वपांवाहिषु दूषितेषु
　　　　दोषैश्च तृट् संभवतीह जन्तोः ॥ १ ॥
तिस्रः स्मृतास्ताः क्षतजा चतुर्थी
　　　　क्षयात्तथा ह्यामसमुद्भवा च ।
भक्तोद्भवा सप्तमिकेति तासां
　　　　निबोध लिङ्गान्यनुपूर्वशस्तु ॥ २ ॥

क्षामास्यता मारुतसंभवायां
तोदस्तथा शंखशिरःसु चापि।
स्रोतोनिरोधो विरसं च वक्त्रं
शीताभिरद्भिश्च विवृद्धिमेति॥ ३॥
मूर्च्छान्नविद्वेषविलापदाहा
रक्तेक्षणत्वं प्रततश्च शोषः।
शीताभिनन्दा मुखतिक्तता च
पित्तात्मिकायां परिदूयनं च॥ ४॥
बाष्पावरोधात्कफसंवृतेऽग्नौ
तृष्णाबलासेन भवेत्तथा तु।
निद्रा गुरुत्वं मधुरास्यता च
तृष्णार्दितः शुष्यति चातिमात्रम्॥ ५॥
क्षतस्य रुक्शोणित निर्गमाभ्यां
तृष्णा चतुर्थी क्षतजा मता तु।
रसक्षयाद्या क्षयसंभवा सा
तयाऽभिभूतश्च निशादिनेषु॥ ६॥
पेपीयतेऽम्भः स सुखं न याति
तां सन्निपातादिति केचिदाहुः।
रसक्षयोक्तानि च लक्षणानि
तस्यामशेषेण भिषग्व्यवस्येत्॥ ७॥
त्रिदोषलिङ्गाऽऽमसमुद्भवा च
हृच्छूलनिष्ठीवनसादकर्त्री।
स्निग्धं तथाऽम्लं लवणं च भुक्तं
गुर्वन्नमेवाशु तृषां करोति॥ ८॥

दीनस्वरः प्रताम्यन् दीनः संशुष्कवक्त्रगलतालुः ।
भवति खलु योपसर्गात्तृष्णा सा शोषिणी कष्टा ॥९॥
ज्वरमोहक्षयकासश्वासाद्युपसृष्टदेहानाम् ।
सर्वास्त्वतिप्रसक्ता रोगकृशानां वमिप्रयुक्तानाम् ।
घोरोपद्रवयुक्तास्तृष्णा मरणाय विज्ञेयाः ॥१०॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने तृष्णानिदानं समाप्तम् ॥१६॥

अथ मूर्च्छाभ्रमनिद्रातन्द्रासंन्यासनिदानम् ।

क्षीणस्य बहुदोषस्य विरुद्धाहारसेविनः ।
वेगाघातादभिघाताद्धीनसत्त्वस्य वा पुनः ॥ १ ॥
करणायतनेषूग्रा बाह्येष्वाभ्यन्तरेषु च ।
निविशन्ते यदा दोषास्तदा मूर्च्छन्ति मानवाः ॥ २ ॥
संज्ञावहासु नाडीषु पिहितास्वनिलादिभिः ।
तमोऽभ्युपैति सहसा सुखदुःखव्यपोहकृत् ॥ ३ ॥
सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत् ।
मोहो मूर्च्छेति तामाहुः षड्विधा सा प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥
वातादिभिः शोणितेन मद्येन च विषेण च ।
षट्स्वप्येतासु पित्तं तु प्रभुत्वेनावतिष्ठते ॥ ५ ॥
हृत्पीडा जृम्भणं ग्लानिः संज्ञादौर्बल्यमेव च ।
सर्वासां पूर्वरूपाणि, यथास्वं ता विभावयेत् ॥ ६ ॥
नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमथवाऽरुणम् ।
पश्यंस्तमः प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते ॥ ७ ॥
वेपथुश्चाङ्गमर्दश्च प्रपीडा हृदयस्य च ।
कार्श्यं श्यावाऽरुणा च्छाया मूर्च्छाये वातसंभवे ॥ ८ ॥

रक्तं हरितवर्णं वा वियत्पीतमथापि वा ।
पश्यंस्तमः प्रविशति सस्वेदश्च प्रबुध्यते ॥ ९ ॥
(सपिपासः ससन्तापो रक्तपीताकुलेक्षणः ।)
(जातमात्रे पतति च शीघ्रं च प्रतिबुध्यते)
संभिन्नवर्चाः पीताभो मूर्च्छाये पित्तसंभवे ॥१०॥
मेघसंकाशमाकाशमावृतं वा तमोघनैः ।
पश्यंस्तमः प्रविशति चिराच्च प्रतिबुध्यते ॥११॥
गुरुभिः प्रावृतैरङ्गैर्यथैवार्द्रेण चर्मणा ।
सप्रसेकः सहृल्लासो मूर्च्छाये कफसंभवे ॥१२॥
सर्वाकृतिः सन्निपातादपस्मार इवागतः ।
स जन्तुं पातयत्याशु विना बीभत्सचेष्टितैः ॥१३॥
पृथिव्यापस्तमोरूपं रक्तगन्धस्तदन्वयः ।
तस्माद्रक्तस्य गन्धेन मूर्च्छन्ति भुवि मानवाः ॥१४॥
द्रव्यस्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदभिमुह्यति ।
गुणास्तीव्रतरत्वेन स्थितास्तु विषमद्ययोः ॥१५॥
त एव तस्मात्ताभ्यां तु मोहौ स्यातां यथेरितौ ।
स्तब्धाङ्गदृष्टिस्त्वसृजा गूढोच्छ्वासश्च मूर्च्छितः ॥१६॥
मद्येन विलपंश्शेते नष्टविभ्रान्तमानसः ।
गात्राणि विक्षिपन्भूमौ जरां यावन्न याति तत् ॥१७॥
वेपथुस्वप्नतृष्णाः स्युस्तमश्च विषमूर्च्छिते ।
वेदितव्यं तीव्रतरं यथास्वं विषलक्षणैः ॥१८॥
मूर्च्छा पित्ततमःप्राया रजःपित्तानिलाद्भ्रमः ।
तमोवातकफात्तन्द्रा निद्रा श्लेष्मतमोभवा ॥१९॥
(चक्रवद्भ्रमतो गात्रं भूमौ पतति सर्वदा ।
भ्रमरोग इति ज्ञेयो रजः पित्तानिलात्मकः ॥ १ ॥)

इन्द्रियार्थेष्वसंवित्तिर्गौरवं जृम्भणं क्लमः ।
निद्रार्तस्येव यस्येहा तस्य तन्द्रां विनिर्दिशेत् ॥२०॥

दोषेषु मदमूर्च्छाया कृतवेगेषु देहिनाम् ।
स्वयमेवोपशाम्यन्ति संन्यासो नौषधैर्विना ॥२१॥

वाग्देहमनसां चेष्टामाक्षिप्यातिबला मलाः ।
संन्यस्यन्त्यबलं जन्तुं प्राणायतनमाश्रिताः ॥२२॥

स ना संन्याससंन्यस्तः काष्ठीभूतो मृतोपमः ।
प्राणैर्विमुच्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्यःफलां क्रियाम् ॥२३॥

इति माधवकरविरचिते माधवनिदाने मूर्छाभ्रमनिद्रा-
तन्द्रासंन्यास निदानं समाप्तम्ः ॥१७॥

अथ पानात्ययपरमदपानाजीर्णपानविभ्रम निदानम्

ये विषस्य गुणाः प्रोक्तास्तेऽपि मद्ये प्रतिष्ठिताः ।
तेन मिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रो मदात्ययः ॥ १ ॥

किन्तु मद्यं स्वभावेन यथैवान्नं तथा स्मृतम् ।
अयुक्तियुक्तं रोगाय युक्तियुक्तं यथाऽमृतम् ॥ २ ॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्त्या हिनस्त्यसून् ।
विषं प्राणहरं तच्च युक्तियुक्तं रसायनम् ॥ ३ ॥

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् ।
प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतोपमम् ॥ ४ ॥

स्निग्धैस्तदन्नैर्मांसैश्च भक्ष्यैश्च सह सेवितम् ।
भवेदायुः प्रकर्षाय बलायोपचयाय च ॥ ॥ ५ ॥

काम्यता मनसस्तुष्टिस्तेजो विक्रम एव च ।
विधिवत्सेव्यमाने तु मद्ये संनिहिता गुणाः ॥ ६ ॥

बुद्धिस्मृतिप्रीतिकरः सुखश्च
पानान्ननिद्रारतिवर्द्धनश्च ।

संपाठगीतस्वरवर्धनश्च
प्रोक्तोऽतिरम्यः प्रथमो मदो हि ॥ ७ ॥
अव्यक्तबुद्धिस्मृतिवाग्विचेष्टः
सोन्मत्तलीलाकृतिरप्रशान्तः ।
आलस्यनिद्राभिहतो मुहुश्च
मध्येन मत्तः पुरुषो मदेन ॥ ८ ॥
गच्छेदगम्यांश्च गुरूंश्च मन्येत्
खादेदभक्ष्याणि च नष्टसंज्ञः ।
ब्रूयाच्च गुह्यानि हृदि स्थितानि
मदे तृतीये पुरुषोऽस्वतन्त्रः ॥ ९ ॥
चतुर्थे तु मदे मूढो भग्नदार्विव निष्क्रियः ।
कार्याकार्यविभागज्ञो मृतादप्यपरो मृतः ॥१०॥
को मदं तादृशं गच्छेदुन्मादमिव चापरम् ।
बहुदोषमिवामूढः कान्तारं स्ववशः कृती ॥११॥
निर्भक्तमेकान्तत एव मद्यं
निषेव्यमाणं मनुजेन नित्यम् ।
आपादयेत्कष्टतमान्विकारा-
नापादयेच्चापि शरीरभेदम् ॥१२॥
क्रुद्धेन भीतेन पिपासितेन
शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन ।
व्यायामभाराध्वपरिक्षतेन
वेगावरोधाभिहतेन चापि ॥१३॥
अत्यम्बुभक्षावततोदरेण
साजीर्णभुक्तेन तथाऽबलेन ।

उष्णाभितप्तेन च सेव्यमानं
करोति मद्यं विविधान्विकारान् ॥१४॥
पानात्ययं परमदं पानाजीर्णमथापि वा।
पानविभ्रममुग्रं च तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥१५॥
हिक्काश्वासशिरःकम्पपार्श्वशूलप्रजागरैः ।
विद्याद्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययम् ॥१६॥
तृष्णादाहज्वरस्वेदमोहातीसारविभ्रमैः ।
विद्याद्धरितवर्णस्य पित्तप्रायं मदात्ययम् ॥१७॥
छर्द्यरोचकहृल्लासतन्द्रास्तैमित्यगौरवैः ।
विद्याच्छीतपरीतस्य कफप्रायं मदात्ययम् ।
ज्ञेयस्त्रिदोषजश्चापि सर्वलिङ्गैर्मदात्ययः ॥१८॥
श्लेष्मोच्छ्रयोऽङ्गगुरुता विरसास्यता च
विण्मूत्रसक्तिरथ तन्द्रिररोचकश्च ।
लिङ्गं परस्य च मदस्य वदन्ति तज्ज्ञा
स्तृष्णा रुजा शिरसि सन्धिषु चापि भेदः ॥१९॥
आध्मानमुग्रमथ चोद्गिरणं विदाहः
पानेऽजरां समुपगच्छति लक्षणानि ।
हृद्गात्रतोदकफसंस्रवकण्ठधूमा
मूर्च्छावमिज्वरशिरोरुजनप्रदाहाः ॥२०॥
द्वेषः सुरान्नविकृतेष्वपि तेषु तेषु
तं पानविभ्रममुशंत्यखिलेन धीराः ॥
हीनोत्तरौष्ठमतिशीतममन्ददाहं
तैलप्रभास्यमपि पानहतं त्यजेत्तु ॥२१॥
जिह्वौष्ठदन्तमसितं त्वथवाऽपि नीलं

पीते च यस्य नयने रुधिरप्रभे वा।
हिक्काज्वरौ वमुथवेपथुपार्श्वशूलाः
कासभ्रमावपि च पानहतं भजन्ते ॥२२॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने पानात्ययपर-
मदपानाजीर्णपानविभ्रमनिदानं समाप्तम् ॥१८॥

अथ दाहनिदानम्।

त्वचं प्राप्तः स पानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः।
दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजम् ॥ १ ॥
कृत्स्नदेहानुगं रक्तमुद्रिक्तं दहति ध्रुवम्।
स उष्यते तृष्यते च ताम्राभस्ताम्रलोचनः ॥ २ ॥
लोहगन्धाङ्गवदनो वह्निनेवावकीर्यते।
पित्तज्वरसमः पित्तात्स चाप्यस्य विधिः स्मृतः ॥ ३ ॥
तृष्णानिरोधादब्धातौ क्षीणे तेजः समुद्धतम्।
सबाह्याभ्यन्तरं देहं प्रदहेन्मन्दचेतसः ॥ ४ ॥
संशुष्कगलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृष्य वेपते।
असृजः पूर्णकोष्ठस्य दाहोऽन्यः स्यात्सुदुस्तरः॥ ५ ॥
धातुक्षयोक्तो यो दाहस्तेन मूर्च्छातृडर्दितः।
क्षामस्वरः क्रियाहीनः स सीदेद्भृशपीडितः ॥ ६ ॥
(क्षतजेनाश्नतश्चान्नं शोचतो वाऽप्यनेकधा।
तेनाङ्गं दह्यतेऽत्यर्थं तृष्णादाह प्रलापवान्* ॥ १ ॥
मर्माभिघातजोऽप्यस्ति सोऽसाध्यः सप्तमो मतः।

---

* "तृष्णा मूर्च्छा प्रलापवान्"

सर्व एव च वर्ज्याः स्युः शीतगात्रस्य देहिनः ॥ ७ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने दाहनिदानं समाप्तम् ॥१९॥

अथोन्मादनिदानम् ।

मदयन्त्युद्गता दोषा यस्मादुन्मार्गमागताः* ।
मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्तितः ॥ १ ॥
एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमूर्च्छितैः ।
मानसेन च दुःखेन स च पञ्चविधो मतः ॥ २ ॥
विषाद्भवति षष्ठश्च यथास्वं तत्र भेषजम् ।
स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां बिभर्ति च ॥ ३ ॥
विरुद्धदुष्टाशुचिभोजनानि
प्रधर्षणं देवगुरुद्विजानाम् ।
उन्मादहेतुर्भयहर्षपूर्वो
मनोऽभिघातो विषमाश्च चेष्टाः ॥ ४ ॥
तैरल्पसत्त्वस्य मलाः प्रदुष्टा
बुद्धेर्निवासं हृदयं प्रदूष्य ।
स्रोतांस्यधिष्ठाय मनोवहानि
प्रमोहयन्त्याशु नरस्य चेतः ॥ ५ ॥
धीविभ्रमः सत्त्वपरिप्लवश्च
पर्याकुला दृष्टिरधीरता च ।
अबद्धवाक्त्वं हृदयं च शून्यं
सामान्यमुन्मादगदस्य लिङ्गम् ॥ ६ ॥

* 'उन्मार्गमाश्रिताः'

रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातु-
क्षयोपवासैरनिलोऽतिवृद्धः ।
चिन्तादिदुष्टं हृदयं प्रदूष्य
बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहन्ति शीघ्रम् ॥ ७ ॥
अस्थानहासस्मितनृत्यगीत-
वागङ्गविक्षेपणरोदनानि ।
पारुष्यकार्श्यारुणवर्णताश्च
जीर्णे बलं चानिलजस्य रूपम् ॥ ८ ॥
अजीर्णकट्वम्लविदाह्यशीतै-
र्भोज्यैश्चितं पित्तमुदीर्णवेगम् ।
उन्मादमत्युग्रमनात्मकस्य
हृदि स्थितं पूर्ववदाशु कुर्यात् ॥ ९ ॥
अमर्षसंरंभविनग्नभावाः
सन्तर्जनातिद्रवणौष्ण्यरोषाः ।
प्रच्छायशीतान्नजलाभिलाषः
पीता च भाः पित्तकृतस्य लिङ्गम् ॥१०॥
संपूरणैर्मन्दविचेष्टितस्य
सोष्मा कफो मर्मणि संप्रदुष्टः ।
बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहत्य चित्तं
प्रमोहयन्संजनयेद्विकारम् ॥११॥
वाक्चेष्टितं मन्दमरोचकश्च
नारीविविक्तप्रियताऽतिनिद्रा ।
छर्दिश्च लाला च बलं च भुक्ते
नखादिशौक्ल्यं च कफात्मके स्यात् ॥१२॥
यः सन्निपातप्रभवोऽतिघोरः

सर्वः समस्तैःस च हेतुभिः स्यात् ।
सर्वाणि रूपाणि बिभर्ति तादृग्
विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः ॥१३॥
चोरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यै-
र्वित्रासितस्य धनबान्धवसंक्षयाद्वा ।
गाढं क्षते मनसि च प्रियया रिरंसो-
र्जायेत चोत्कटतमो मनसो विकारः ॥१४॥
चित्रं ब्रवीति च मनोऽनुगतं विसंज्ञो
गायत्यथो हसति रोदिति चापि मूढः ।
रक्तेक्षणो हतबलेन्द्रियभाः सुदीनः
श्यावाननो विषकृतेऽथ भवेद्विसंज्ञः ॥१५॥
अवाञ्ची वाऽप्युदञ्ची वा क्षीणमांसबलो नरः ।
जागरूको ह्यसन्देहमुन्मादेन विनश्यति ॥१६॥
अमर्त्यवाग्विक्रमवीर्यचेष्टो
ज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ।
उन्मादकालोऽनियतश्च यस्य
भूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम् ॥१७॥
सन्तुष्टः शुचिरतिदिव्यमाल्यगन्धो
निस्तन्द्रीरवितथसंस्कृतप्रभाषी ।
तेजस्वी स्थिरनयनो वरप्रदाता
ब्रह्मण्यो भवति नरः स देवजुष्टः ॥१८॥
संस्वेदी द्विजगुरुदेवदोषवक्ता
जिह्माक्षो विगतभयो विमार्गदृष्टिः ।
सन्तुष्टो न भवति चान्नपानजातै-

दुष्टात्मा भवति स देवशत्रुजुष्टः ॥१९॥
हृष्टात्मा ÷ पुलिनवनान्तरोपसेवी
स्वाचारः प्रियपरिगीतगन्धमाल्यः।
नृत्यन्वै प्रहसति चारु चाल्पशब्दं
गन्धर्वग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥२०॥
ताम्राक्षः प्रियतनुरक्तवस्त्रधारी
गम्भीरो द्रुतगतिरल्पवाक् सहिष्णुः।
तेजस्वी वदति च किं ददामि कस्मै
यो यक्षग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥२१॥
प्रेतानां स दिशति संस्तरेषु पिण्डान्
शान्तात्मा जलमपि चापसव्यवस्त्रः※।
मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकाम-
स्तद्भक्तो भवति पितृग्रहाभिजुष्टः ॥२२॥
यस्तूर्व्यां प्रसरति सर्पवत्कदाचित्-
सृक्कण्यौ विलिहति जिह्वया तथैव।
क्रोधालुर्गुडमधुदुग्धपायसेप्सु-
र्ज्ञातव्यो भवति भुजङ्गमेन जुष्टः ॥२३॥
मांसासृग्विविधसुराविकारलिप्सु-
र्निर्लज्जो भृशमतिनिष्ठुरोऽति शूरः।
क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविहारी
शौचद्विड् भवति च राक्षसैर्गृहीतः ॥२४॥
उद्ध्वस्तः कृशपरुषोऽचिरप्रलापी
दुर्गन्धोभृशमशुचिस्तथाऽतिलोलः।

÷ "दुष्टात्मा" ※ "श्रान्तात्मा जलमपिचापसव्य हस्तः"

बह्वाशी विजनवनान्तरोपसेवी
व्याचेष्टन्भ्रमति रुदन्पिशाचजुष्टः ॥२५॥
(देवविप्रगुरुद्वेषी वेदवेदाङ्गविच्छुचिः ।
आशुपीडाकरोऽहिंस्रो ब्रह्मराक्षससेवितः ॥ १ ॥
महापराक्रमो यश्च दिव्यं ज्ञानं च भाषते ।
उन्मादकालानैश्चित्यो भूतोन्मादी स उच्यते ॥ २ ॥
स्थूलाक्षो द्रुतमटनः स फेनलेही
निद्रालुः पतति च कम्पते च यो हि ।
यश्चाद्रिद्विरदनगादिविच्युतः स्यात्
सोऽसाध्यो भवति तथा त्रयोदशाब्दे ॥२६॥
देवग्रहाः पौर्णमास्यामसुराः सन्ध्ययोरपि ।
गन्धर्वाःप्रायशोऽष्टम्यां यक्षाश्च प्रतिपद्यथ ॥२७॥
पित्र्याःकृष्णक्षये हिंस्युः पञ्चम्यामपि चोरगाः ।
रक्षांसि रात्रौ पैशाचाश्चतुर्दश्यां विशन्ति हि ॥२८॥
दर्पणादीन् यथा छाया शीतोष्णं प्राणिनो यथा ।
स्वमणिं भास्करार्चिश्च यथा देहं च देहधृक् ।
विशन्ति च न दृश्यन्ते ग्रहास्तद्वच्छरीरिणः ॥२९॥
प्रविश्याशु शरीरं हि पीडां कुर्वन्ति दुःसहाम् ॥३०॥
(तपांसि तीव्राणि तथैव दानं
व्रतानि धर्मो नियमश्च सत्यम् ।
गुणास्तथाऽष्टावपि तेषु नित्या
व्यस्ताः समस्ताश्च यथाप्रभावम् ॥३१॥
न ते मनुष्यैः सह संविशन्ति
न वा मनुष्यान् क्वचिदाविशन्ति ।
ये त्वाविशन्तीति वदन्ति मोहात्

तेभूतविद्याविषयादपोह्याः ॥३२॥
तेषां ग्रहाणां परिचारका ये
कोटीसहस्रायुतपद्मसंख्याः ।
असृग्वसामांसभुजः सुभीमा
निशाविहाराश्च तथाऽऽविशंति ॥३३॥
इतिश्री माधवकरविरचिते माधवनिदाने उन्मादनिदानं
समाप्तम् ॥२०॥

अथापस्मारनिदानम्

(स्मृतिर्भूतार्थविज्ञानमपस्तत्परिवर्जने ।
अपस्मार इति प्रोक्तस्ततोऽयं व्याधिरन्तकृत् ॥ १ ॥
चिंताशोकादिभिर्दोषाः क्रुद्धा हृत्स्रोतसि स्थिताः ।
कृत्वा स्मृतेरपध्वंसमपस्मारं प्रकुर्वते ॥ २ ॥
मिथ्यायोगीन्द्रियार्थानां कर्मणामभिसेवनात् ।
विरुद्धमलिनाहारविहारकुपितैर्मलैः ॥ ३ ॥
वेगनिग्रहशीलानामहिताशुचिभोजिनाम् ।
रजस्तमोभिभूतानां गच्छतां च रजस्वलाम् ॥ ४ ॥
तथा कामभयोद्वेगक्रोधशोकादिभिर्भृशम् ।
चेतस्यभिहते पुसांमपस्मारोऽभिजायते ॥ ५ ॥)
तमःप्रवेशः संरम्भो दोषोद्रेकहतस्मृतेः ।
अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः ॥ १ ॥
हृत्कम्पः शून्यता स्वेदो ध्यानं मूर्च्छा प्रमूढता ।
निद्रानाशश्च तस्मिंश्च भविष्यति भवत्यथ ॥ २ ॥
कम्पते प्रदशेद्दन्तान्फेनोद्वामी श्वसित्यपि ।
परुषारुणकृष्णानि पश्येद्रूपाणि चानिलात् ॥ ३ ॥

पीतफेनाङ्गवक्त्राक्षः पीतासृग्रूपदर्शकः ।
सतृष्णोष्णानलव्याप्तलोकदर्शी च पैत्तिकः ॥ ४ ॥
शुक्लफेनाङ्गवक्त्राक्षः शीतहृष्टाङ्गजो गुरुः ।
पश्येच्छुक्लानि रूपाणि श्लैष्मिको मुच्यते चिरात् ॥५॥
सर्वैरेतैः समस्तैश्च लिंगैर्ज्ञेयस्त्रिदोषजः ।
अपस्मारः स चासाध्यो यः क्षीणस्यानवश्च यः ॥ ६ ॥
प्रस्फुरन्तं सुबहुशः क्षीणं प्रचलितभ्रुवम् ।
नेत्राभ्यां च विकुर्वाणमपस्मारो विनाशयेत् ॥ ७ ॥
पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः ।
अपस्माराय कुर्वन्ति वेगं किंचिदथान्तरम् ॥ ८ ॥
देवे वर्षत्यपि यथा भूमौ बीजानि कानिचित् ।
शरदि प्रतिरोहन्ति तथा व्याधिसमुच्छ्रयाः ॥ ९ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽपस्मार निदानं समाप्तम् ॥२१॥

अथ वातव्याधिनिदानम् ।

रूक्षशीताल्पलघ्वन्नव्यवायातिप्रजागरैः ।
विषमादुपचाराच्च दोषासृक्स्रवणादपि ॥ १ ॥
लङ्घनप्लवनात्यध्वव्यायामातिविचेष्टितैः ।
धातूनां संक्षयाच्चिन्ताशोकरोगातिकर्षणात् ॥ २ ॥
वेगसंधारणादामादभिघातादभोजनात् ।
मर्माबाधाद्गजोष्ट्राश्वशीघ्रयानापतंसनात् ॥ ३ ॥
देहे स्रोतांसि रिक्तानि पूरयित्वाऽनिलो बली ।
करोति विविधान्व्याधीन्सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रयान् ॥ ४ ॥

अव्यक्तं लक्षणं तेषां पूर्वरूपमिति स्मृतम् ।
आत्मरूपं तु यद्व्यक्तमपायो लघुता पुनः ॥ ५ ॥
संकोचः पर्वणां स्तम्भो भङ्गोऽस्थ्नां पर्वणामपि ।
रोमहर्षः प्रलापश्च पाणिपृष्ठशिरोग्रहः ॥ ६ ॥
खाञ्ज्यपाङ्गुल्यकुब्जत्वं शोथोऽङ्गानामनिद्रता ।
गर्भशुक्ररजोनाशः स्पंदनं गात्रसुप्तता ॥ ७ ॥
शिरोनासाक्षिजत्रूणां ग्रीवायाश्चापि हुण्डनम् ।
भेदस्तोदोऽर्तिराक्षेपो मुहुश्चायास एव च ॥ ८ ॥
एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोऽनिलः ।
हेतुस्थानविशेषाच्च भवेद्रोगविशेषकृत् ॥ ९ ॥
तत्र कोष्ठाश्रिते दुष्टे निग्रहो मूत्रवर्चसोः ।
ब्रध्नहृद्रोगगुल्मार्शः पार्श्वशूलं च मारुते ॥१०॥
सर्वाङ्गकुपिते वाते गात्रस्फुरणभञ्जनम् ।
वेदनाभिः परीताश्च स्फुटन्तीवास्य सन्धयः ॥११॥
ग्रहो विण्मूत्रवातानां शूलाध्मानाश्मशर्कराः ।
जंघोरुत्रिकपात्पृष्ठरोगशोषौ गुदे स्थिते ॥१२॥
रुक्पार्श्वोदरहृन्नाभेस्तृष्णोद्गारविषूचिकाः ।
कासः कण्ठास्यशोषश्च श्वासश्चामाशयस्थिते ॥१३॥
पक्वाशयस्थोऽन्त्रकूजं शूलाटोपौ करोति च ।
कृच्छ्रमूत्रपुरीषत्वमानाहं त्रिकवेदनाम् ॥१४॥
श्रोत्रादिष्विन्द्रियवधं कुर्याद्दुष्टसमीरणः ।
त्वग्रूक्षा स्फुटिता सुप्ता कृशा कृष्णा च तुद्यते ।
आतन्यते सरागा च पर्वरुक्त्वग्गतेऽनिले ॥१५॥
रुजस्तीव्राः ससन्तापा वैवर्ण्यं कृशताऽरुचिः ।

गात्रे चारूंषि भुक्तस्य स्तंभश्चासृग्गतेऽनिले ॥१६॥
गुर्वङ्गं तुद्यतेऽत्यर्थं दण्डमुष्टिहतं यथा।
सरुक् श्रमितमत्यर्थं मांसमेदोगतेऽनिले ॥१७॥
मेदोऽस्थिपर्वणां सन्धिशूलं मांसबलक्षयः।
अस्वप्नः संतता रुक् च मज्जास्थिकुपितेऽनिले ॥१८॥
क्षिप्रं मुञ्चति बध्नाति शुक्रं गर्भमथापि वा।
विकृतिं जनयेच्चापि शुक्रस्थः कुपितोऽनिलः ॥१९॥
कुर्यात्सिरागतः शूलं सिराकुञ्चनपूरणम्।
स बाह्याभ्यन्तरायामं खल्लीं कौब्ज्यमथापि वा ॥२०॥
सर्वाङ्गैकाङ्गरोगांश्च कुर्यात्स्नायुगतोऽनिलः।
हन्ति संधिगतः सन्धीञ्छूलाटोपौ करोति च ॥२१॥
(प्राणोदानौ समानश्चव्यानश्चापान एव च।
स्थानस्था मारुताः पञ्च यापयन्ति शरीरिणम् ॥)
प्राणे पित्तावृते छर्दिर्दाहश्चैवोपजायते।
दौर्बल्यं सदनं तन्द्रा वैरस्यं च कफावृते ॥२२॥
उदाने पित्तयुक्ते तु दाहो मूर्च्छा भ्रमः क्लमः।
अस्वेदहर्षौ मन्दोऽग्निः शीतता च कफावृते ॥२३॥
स्वेददाहौष्ण्यमूर्च्छाः स्युः समाने पित्तसंवृते।
कफेन सक्ते विण्मूत्रे गात्रहर्षश्च जायते ॥२४॥
अपाने पित्तयुक्ते तु दाहौष्ण्यं रक्तमूत्रता।
अधःकाये गुरुत्वं च शीतता च कफावृते ॥२५॥
व्याने पित्तावृते दाहो गात्रविक्षेपणं क्लमः।
स्तंभनो दंडकश्चापि शूलशोथौ कफावृते ॥२६॥
यदा तु धमनीः सर्वाः कुपितोऽभ्येति मारुतः।

तदाऽऽक्षिपत्याशु मुहुर्मुहुर्देहं मुहुश्चरः ॥२७॥
मुहुर्मुहुश्चाक्षेपणादाक्षेपक इति स्मृतः ।
क्रुद्धः स्वैः कोपनैर्वायुः स्थानादूर्ध्वं प्रपद्यते ॥२८॥
पीडयन् हृदयं गत्वा शिरःशंखौ च पीडयन् ।
धनुर्वन्नमयेद्गात्राण्याक्षिपेन्मोहयेत्तदा ॥२९॥
स कृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापि स्तब्धाक्षोऽथ निमीलकः ।
कपोत इव कूजेच्च निःसंज्ञः सोऽपतंत्रकः ॥३०॥
दृष्टिं संस्तभ्य संज्ञां च हत्वा कण्ठेन कूजति ।
हृदि मुक्ते नरः स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः ॥३१॥
वायुना दारुणं प्राहुरेके तदपतानकम् ।
कफान्वितो भृशं वायुस्तास्वेव यदि तिष्ठति ॥३२॥
दण्डवत्स्तंभयेद्देहं स तु दण्डापतानकः ।
धनुस्तुल्यं नमेद्यस्तु स धनुःस्तम्भसंज्ञकः ॥३३॥
अङ्गुलीगुल्फजठरहृद्वक्षोगलसंश्रितः ।
स्नायुप्रतानमनिलो यदाऽऽक्षिपति वेगवान् ॥३४॥
विष्टब्धाक्षः स्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफं वमन् ।
अभ्यन्तरं धनुरिव यदा नमति मानवम् ॥३५॥
तदाऽस्याभ्यन्तरायामं कुरुते मारुतो बली ।
बाह्यस्नायुप्रतानस्थो बाह्यायामं करोति च ॥३६॥
तमसाध्यं बुधाः प्राहुर्वक्षःकट्यूरुभञ्जनम् ।
कफपित्तान्वितो वायुर्वायुरेव च केवलः ॥३७॥
कुर्यादाक्षेपकं त्वन्यं चतुर्थमभिघातजम् ।
गर्भपातनिमित्तश्च शोणितातिस्रवाच्च यः ॥३८॥
अभिघातनिमित्तश्च न सिद्ध्यत्यपतानकः ।

गृहीत्वाऽर्धं तनोर्वायुः सिराः स्नायूर्विशोष्य च ॥३९॥
पक्षमन्यतरं हन्ति सन्धिबन्धान्विमोक्षयन् ।
कृत्स्नोऽर्द्धकायस्तस्य स्यादकर्मण्यो विचेतनः ॥४०॥
एकाङ्गरोगं तं केचिदन्ये पक्षवधं विदुः ।
सर्वाङ्गरोगस्तद्वच्च सर्वकायाश्रितेऽनिले ॥४१॥
दाहसंतापमूर्च्छाः स्युर्वायौ पित्तसमन्विते ।
शैत्यशोथगुरुत्वानि तस्मिन्नेव कफान्विते ॥४२॥
शुद्धवातहतं पक्षं कृच्छ्रसाध्यतमं विदुः ।
साध्यमन्येन संयुक्तमसाध्यं क्षयहेतुकम् ॥४३॥
(गर्भिणीसूतिकाबालवृद्धक्षीणेष्वसृक्स्रुतौ ।
पक्षाघातं परिहरेद्वेदनारहितो यदि ॥ १ ॥)
उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थं खादतः कठिनानि वा ।
हसतो जृम्भतो वाऽपि भाराद्विषमशायिनः ॥४४॥
शिरोनासौष्ठचिबुकललाटेक्षणसन्धिगः ।
अर्दयत्यनिलो वक्त्रमर्दितं जनयत्यतः ।
वक्रीभवति वक्त्रार्धं ग्रीवा चाप्यपवर्तते ॥४५॥
शिरश्चलति वाक्सङ्गो नेत्रादीनां च वैकृतम् ।
ग्रीवाचिबुकदन्तानां तस्मिन् पार्श्वे च वेदना ॥४६॥
(यस्याग्रजो रोमहर्षो वेपथुर्नेत्रमाविलम् ।
वायुरूर्ध्वं त्वचि स्वापस्तोदो मन्याहनुग्रहः) ॥
तमर्दितमिति प्राहुर्व्याधिं व्याधिविचक्षणाः ।
क्षीणस्यानिमिषाक्षस्य प्रसक्ताव्यक्तभाषिणः ॥४७॥
न सिध्यत्यर्दितं गाढं त्रिवर्षं वेपनस्य च ।
गते वेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्वाक्षेपकादिषु ॥४८॥

जिह्वानिर्लेखनाच्छुष्कभक्षणादभिघाततः ।
कुपितो हनुमूलस्थः स्रंसयित्वाऽनिलो हनुम् ॥४९॥
करोति विवृतास्यत्वमथवा संवृतास्यताम् ।
हनुग्रहः स तेन स्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम् ॥५०॥
दिवास्वप्नासमस्थानविवृतोर्ध्वनिरीक्षणैः* ।
मन्यास्तम्भं प्रकुरुते स एव श्लेष्मणाऽऽवृतः ॥५१॥
वाग्वाहिनीसिरासंस्थो जिह्वां स्तम्भयतेऽनिलः ।
जिह्वास्तम्भः स तेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥५२॥
रक्तमाश्रित्य पवनः कुर्यान्मूर्धधराः सिराः ।
रूक्षाः सवेदनाः कृष्णाः सोऽसाध्यः स्यात्सिराग्रहः ॥५३॥
स्फिक्पूर्वा कटिपृष्ठोरुजानुजङ्घापदं क्रमात् ।
गृध्रसी स्तंभरुक्तोदैर्गृह्णाति स्पन्दते मुहुः ॥५४॥
(वाताद्वातकफात्तन्द्रागौरवारोचकान्विता ।)
[वातजायां भवेत्तोदो देहस्यापि प्रवक्रता ।
जानुकट्यूरुसंधीनां स्फुरणं स्तब्धता भृशम् ॥५५॥
वातश्लेष्मोद्भवायां तु निमित्तं वह्निमार्दवम् ।
तन्द्रा मुखप्रसेकश्च भक्तद्वेषस्तथैव च ॥५६॥]
तलं प्रत्यङ्गुलीनां याः कण्डरा बाहुपृष्ठतः ॥५७॥
बाह्वोः कर्मक्षयकरी विश्वाची चेति सोच्यते ।
वातशोणितजः शोथो जानुमध्ये महारुजः ॥५८॥
ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षस्तु स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ।
वायुः कट्याश्रितः सक्थ्नः कण्डरामाक्षिपेद्यदा ॥५९॥
खञ्जस्तदा भवेज्जन्तुः पङ्गुः सक्थ्नोर्द्वयोर्वधात् ।

* "विकृतोर्ध्वनिरीक्षणैः"

प्रक्रामन् वेपते यस्तु खञ्जन्निव च गच्छति ॥६०॥
कलायखञ्जं तं विद्यान्मुक्तसन्धिप्रबन्धनम् ।
रुक्पादे विषमन्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ॥६१॥
वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकण्टकम् ।
पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक्सहितोऽनिलः ॥६२॥
विशेषतश्चङ्क्रमतः पाददाहं तमादिशेत् ।
हृष्येते चरणौ यस्य भवेतां चापि सुप्तकौ ॥६३॥
पादहर्षः स विज्ञेयः कफवातप्रकोपतः ।
अंसदेशस्थितो वायुः शोषयेदंसबन्धनम् ॥६४॥
सिराश्चाकुंच्य तत्रस्थो जनयेदवबाहुकम् ।
आवृत्य वायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः ॥६५॥
नरान्करोत्यक्रियकान्मूकमिन्मिनगद्गदान् ।
अधो या वेदना याति वर्चोमूत्राशयोत्थिता ॥६६॥
भिन्दतीव गुदोपस्थं सा तूनी नाम नामतः ।
गुदोपस्थोत्थिता या तु प्रतिलोमं प्रधाविता ॥६७॥
वेगैः पक्वाशयं याति प्रतितूनीति सोच्यते ।
साटोपमत्युग्ररुजमाध्मातमुदरं भृशम् ॥६८॥
आध्मानमिति तं विद्याद्घोरं वातनिरोधजम् ।
विमुक्तपार्श्वहृदयं तदेवामाशयोत्थितम् ॥६९॥
प्रत्याध्मानं विजानीयात्कफव्याकुलितानिलम् ।
नाभेरधस्तात्संजातः सञ्चारी यदि वाऽचलः ॥७०॥
अष्ठीलावद्घनो ग्रन्थिरूर्ध्वमायत उन्नतः ।
वाताष्ठीलां विजानीयाद्बहिर्मार्गावरोधिनीम् ॥७१॥

एतामेव रुजोपेतां वातविण्मूत्ररोधिनीम् ।
प्रत्यष्ठीलामिति वदेज्जठरे तिर्यगुत्थिताम् ॥७२॥
मारुतेऽनुगुणे बस्तौ मूत्रं सम्यक्प्रवर्तते ।
विकारा विविधाश्चात्र प्रतिलोमे भवन्ति च ॥७३॥
सर्वाङ्गकम्पः शिरसो वायुर्वेपथुसंज्ञकः ।
खल्ली तु पादजङ्घोरुकरमूलावमोटनी ॥७४॥
(अधः प्रतिहतो वायुः श्लेष्मणा मारुतेन वा ।
(करोत्युद्गारबाहुल्यमूर्ध्ववातः स उच्यते ॥७५॥)
भुक्तेऽप्यभुक्ते सुप्ते वा यस्योद्गारः प्रजायते ।
सततं घोषवांश्चाति ह्यूर्ध्ववातं तमादिशेत् ॥ १ ॥
स्वहेतुकुपिताद्वातादसंबद्धनिरर्थकम् ।
वचनं यन्नरो ब्रूते स प्रलापः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥
भुञ्जानस्य नरस्यान्नं मधुरप्रभृतीन्रसान् ।
रसज्ञो यन्न जानाति रसाज्ञानं तदुच्यते ॥ ३ ॥)
स्थाननामानुरूपैश्च लिङ्गैः शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्गे पित्ताद्यैरुपलक्षयेत् ॥७६॥
हनुस्तंभार्दिताक्षेपपक्षाघातापतानकाः ।
कालेन महतावात यत्नात्सिध्यन्ति वा नवा ॥७७॥
नरान्बलवतस्त्वेतान्साधयेन्निरुपद्रवान् ।
विसर्पदाहरुक्संगमूर्च्छारुच्यग्निमार्दवैः ॥७८॥
क्षीणमांसबलं वाता घ्नन्ति पक्षवधादयः ।
शूनं सुप्तत्वचं भग्नं कम्पाध्मानिपीडितम् ।
रुजार्तिमन्तं च नरं वातव्याधिर्विनाशयेत् ॥७९॥

❀ 'मूर्ध्ववातं प्रचक्षते' इत्यत्राधिकं केचित् पठन्ति'।

अव्याहतगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतिस्थितः ।
वायुःस्यात्सोऽधिकं जीवेद्वीतरोगः समाःशतम् ।८०।

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने वातव्याधि-
निदानं समाप्तम् ॥२२॥

अथ वातरक्तनिदानम् ।

लवणाम्लकटुक्षारस्निग्धोष्णाजीर्णभोजनैः ।
क्लिन्नशुष्काम्बुजानूपमांसपिण्याकमूलकैः ॥ १ ॥
कुलत्थमाषनिष्पावशाकादिपललेक्षुभिः ।
दध्यारनालसौवीरशुक्ततक्रसुरासवैः ॥ २ ॥
विरुद्धाध्यशनक्रोधदिवास्वप्नप्रजागरैः ।
प्रायशः सुकुमाराणां मिथ्याहारविहारिणाम् ।
स्थूलानां सुखिनां चापि कुप्यते वातशोणितम् ॥ ३ ॥
हस्त्यश्वोष्ट्रैर्गच्छतश्चाश्नतश्च
विदाह्यन्नं स विदाहोऽशनस्य ।
कृत्स्नं रक्तं विदहत्याशु तच्च
स्रस्तं दुष्टं पादयोश्चीयते तु ।
तत्संपृक्तं वायुना दूषितेन
तत्प्राबल्यादुच्यते वातरक्तम् ॥ ४ ॥
स्वेदोऽत्यर्थं नवा कार्ण्यं स्पर्शाज्ञत्वं क्षतेऽतिरुक् ।
सन्धिशैथिल्यमालस्यं सदनं पिडकोद्गमः ॥ ५ ॥
जानुजङ्घोरुकट्यंसहस्तपादाङ्गसन्धिषु ।
निस्तोदः स्फुरणं भेदो गुरुत्वं सुप्तिरेव च ॥ ६ ॥
कण्डूः सन्धिषु रुग्भूत्वा भूत्वा नश्यति चासकृत् ।
वैवर्ण्यं मण्डलोत्पत्तिर्वातासृक्पूर्वलक्षणम् ॥ ७ ॥

वातेऽधिकेऽधिकं तत्र शूलस्फुरणभञ्जनम् ।
शोथस्य रौक्ष्यं कृष्णत्वं श्यावता वृद्धिहानयः ॥ ८ ॥
धमन्यङ्गुलिसन्धीनां सङ्कोचोऽङ्गग्रहोऽतिरुक् ।
शीतद्वेषानुपशयौ स्तंभवेपथुसुप्तयः ॥ ९ ॥
रक्ते शोथोऽतिरुक्तोदस्ताम्रश्चिमिचिमायते ।
स्निग्धरूक्षैः शमं नैति कण्डूक्लेदसमन्वितः ॥१०॥
पित्ते विदाहः संमोहः स्वेदो मूर्च्छा मदस्तृषा ।
स्पर्शासहत्वं रुग्रागः शोथः पाको भृशोष्मता ॥११॥
कफे स्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतताः ।
कण्डूर्मन्दा च रुग्द्वन्द्वं सर्वलिङ्गं च सङ्करात् ॥१२॥
पादयोर्मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयोरपि ।
आखोर्विषमिव क्रुद्धं तद्देहमुपसर्पति ॥१३॥
आजानु स्फुटितं यच्च प्रभिन्नं प्रस्रुतं च यत् ।
उपद्रवैश्च यज्जुष्टं प्राणमांसक्षयादिभिः ॥१४॥
वातरक्तमसाध्यं स्याद्याप्यं संवत्सरोत्थितम् ।
अस्वप्नारोचकश्वासमांसकोथशिरोग्रहाः ॥१५॥
संमूर्च्छामदरुक्तृष्णाज्वरमोहप्रवेपकाः ।
हिक्कापाङ्गुल्यवीसर्पपाकतोदभ्रमक्लमाः ॥१६॥
अङ्गुलीवक्रतास्फोटदाहमर्मग्रहार्बुदाः ।
एतैरुपद्रवैर्वर्ज्यं मोहेनैकेन वाऽपि यत् ॥१७॥
अकृत्स्नोपद्रवं याप्यं साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ।
एकदोषानुगं साध्यं नवं याप्यं द्विदोषजम् ।
त्रिदोषजमसाध्यं स्याद्यस्य च स्युरुपद्रवाः ॥१८॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने वातरक्तनिदानं समाप्तम् ॥२३॥

अथोरुस्तम्भनिदानम् ।

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निषेवितैः ।
जीर्णाजीर्णे तथाऽऽयाससंक्षोभस्वप्नजागरैः ॥ १ ॥
सश्लेष्ममेदःपवनः साममत्यर्थसंचितम् ।
अभिभूयेतरं दोषमूरू चेत्प्रतिपद्यते ॥ २ ॥
सक्थ्यस्थिनी प्रपूर्यान्तः श्लेष्मणा स्तिमितेन च ।
तदा स्तभ्नाति तेनोरू स्तब्धौ शीतावचेतनौ ॥ ३ ॥
परकीयाविव गुरू स्यातामतिभृशव्यथौ ।
ध्यानाङ्गमर्दस्तैमित्यतन्द्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः ॥ ४ ॥
संयुक्तौ पादसदनकृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः ।
तमूरुस्तंभमित्याहुराढ्यवातमथापरे ॥ ५ ॥
प्राग्रूपं तस्य निद्राऽतिध्यानं स्तिमितता ज्वरः ।
रोमहर्षोऽरुचिश्छर्दिर्जङ्घोर्वोः सदनं तथा ॥ ६ ॥
वातशङ्किभिरज्ञानात्तस्य स्यात्स्नेहनात्पुनः ।
पादयोः सदनं सुप्तिः कृच्छ्रादुद्धरणं तथा ॥ ७ ॥
जङ्घोरुग्लानिरत्यर्थं शश्वच्चादाहवेदने ।
पादं च व्यथते न्यस्तं शीतस्पर्शं न वेत्ति च ॥ ८ ॥
संस्थाने पीडने गत्यां चालने चाप्यनीश्वरः ।
अन्यस्येव हि संभग्नावूरू पादौ च मन्यते ॥ ९ ॥
यदा दाहार्त्तितोदार्तो वेपनः पुरुषो भवेत् ।
ऊरुस्तम्भस्तदा हन्यात्साधयेदन्यथा नवम् ॥१०॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने ऊरूस्तम्भनिदानं समाप्तम् ॥२४॥

अथामवातनिदानम्

विरुद्धाहारचेष्टस्य मन्दाग्नेर्निश्चलस्य च ।
स्निग्धं भुक्तवतो ह्यन्नं व्यायामं कुर्वतस्तथा ॥ १ ॥
वायुना प्रेरितो ह्यामः श्लेष्मस्थानं प्रधावति ।
तेनात्यर्थं विदग्धोऽसौ धमनीः प्रतिपद्यते ॥ २ ॥
वातपित्तकफैर्भूयो दूषितः सोऽन्नजो रसः ।
स्रोतांस्यभिष्यन्दयति नानावर्णोऽतिपिच्छिलः॥ ३ ॥
जनयत्याशु दौर्बल्यं गौरवं हृदयस्य च ।
व्याधीनामाश्रयो ह्येष आमसंज्ञोऽतिदारुणः ॥ ४ ॥
युगपत्कुपितावन्तस्त्रिकसन्धिप्रवेशकौ ।
स्तब्धं च कुरुतो गात्रमामवातः स उच्यते ॥ ५ ॥
अङ्गमर्दोऽरुचिस्तृष्णा ह्यालस्यं गौरवं ज्वरः ।
अपाकः शूनताऽङ्गानामामवातस्य लक्षणम् ॥ ६ ॥
स कष्टः सर्वरोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत् ।
हस्तपादशिरोगुल्फत्रिकजानूरुसन्धिषु ॥ ७ ॥
करोति सरुजं शोथं यत्र दोषः प्रपद्यते ।
स देशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः ॥ ८ ॥
जनयेत्सोऽग्निदौर्बल्यं प्रसेकारुचिगौरवम् ।
उत्साहहानिं वैरस्यं दाहं च बहुमूत्रताम् ॥ ९ ॥
कुक्षौ कठिनतां शूलं तथा निद्राविपर्ययम् ।
तृट्छर्दिभ्रममूर्च्छाश्च हृद्ग्रहं विड्विबद्धताम् ।
जाड्यान्त्रकूजमानाहं कष्टांश्चान्यानुपद्रवान् ॥१०॥
पित्तात्सदाहरागं च सशूलं पवनानुगम् ।
स्तिमितं गुरुकण्डूं च कफदुष्टं तमादिशेत् ॥११॥

एकदोषानुगः साध्यो द्विदोषो याप्य उच्यते ।
सर्वदेहचरः शोथः स कृच्छ्रः सान्निपातिकः ॥१२॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने आमवातनिदानं समाप्तम् ॥२५॥

अथ शूलपरिणामशूलान्नद्रवशूलनिदानम्

दोषैः पृथक्समस्तामद्वन्द्वैः शूलोऽष्टधा भवेत् ।
सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः ॥ १ ॥
व्यायामयानादतिमैथुनाच्च
प्रजागराच्छीतजलातिपानात् ।
कलायमुद्गाढकिकोरदूषा-
दत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥ २ ॥
कषायतिक्तातिविरूढजान्न-
विरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् ।
विट्शुक्रमूत्रानिलवेगरोधा-
च्छोकोपवासादतिहास्यभाष्यात् ॥ ३ ॥
वायुः प्रवृद्धो जनयेद्धि शूलं
हृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकबस्तिदेशे ।
जीर्णे प्रदोषे च घनागमे च
शीते च कोपं समुपैति गाढम् ॥ ४ ॥
मुहुर्मुहुश्चोपशमप्रकोपी
विड्वातसंस्तम्भनतोदभेदैः* ।
संस्वेदनाभ्यञ्जनमर्दनाद्यैः
स्निग्धोष्णभोज्यैश्च शमं प्रयाति ॥ ५ ॥

* 'विण्मूत्र संस्तभन तोद भेदैः'

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैल-
निष्पावपिण्याककुलत्थयूषैः ।
कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः
क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ ६ ॥
ग्राम्यातियोगादशनैर्विदग्धैः
पित्तं प्रकुप्याशु करोति शूलम् ।
तृण्मोहदाहार्तिकरं हि नाभ्यां
संस्वेदमूर्च्छाभ्रमचोषयुक्तम् ॥ ७ ॥
मध्यंदिने कुप्यति चार्धरात्रे
विदाहकाले जलदात्यये च ।
शीते च शीतैः समुपैतिशान्ति
सुस्वादुशीतैरपि भोजनैश्च ॥ ८ ॥
आनूपवारिजकिलाटपयोविकारै-
र्मांसेक्षुपिष्टकृशरातिलशुष्कुलीभिः ।
अन्यैर्बलासजनकैरपि हेतुभिश्च
श्लेष्मा प्रकोपमुपगम्य करोति शूलम् ॥ ९ ॥
हृल्लासकाससदनारुचिसंप्रसेकै-
रामाशये स्तिमितकोष्ठशिरोगुरुत्वैः ।
भुक्ते सदैव हि रुजं कुरुतेऽतिमात्रं
सूर्योदयेऽथ शिशिरे कुसुमागमे च ॥१०॥
सर्वेषु दोषेषु च सर्वलिङ्गं
विद्याद्भिषक् सर्वभवं हि शूलम् ।
सुकष्टमेनं विषवज्रकल्पं
विवर्जनीयं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥११॥

आटोपहृल्लासवमीगुरुत्व-
स्तैमित्यकानाहककप्रसेकैः ।
कफस्य लिंगेन समानलिंग-
मामोद्भवं शूलमुदाहरन्ति ॥१२॥
बस्तौ हृत्पार्श्वपृष्ठेषु स शूलः कफवातिकः ।
कुक्षौ हृन्नाभि मध्येषु स शूलः कफपैत्तिकः ॥१३॥
दाहज्वरकरो घोरो विज्ञेयो वातपैत्तिकः ।
एकदोषोत्थितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ॥१४॥
सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ।
(वातात्मकं बस्तिगतं वदन्ति,
पित्तात्मकं चापि वदन्ति नाभ्याम् ।
हृत्पार्श्वकुक्षौ कफसन्निविष्टं,
सर्वेषु देशेषु च सन्निपातात् ॥ १ ॥
(वेदना च तृषा मूर्च्छा ह्यानाहो गौरवारुची ।
कासः श्वासश्च हिक्का च शूलस्योपद्रवाः स्मृताः ॥ २ ॥)
स्वैर्निदानैः प्रकुपितो वायुः सन्निहितस्तदा ॥१५॥
कफपित्ते समावृत्य शूलकारी भवेद्बली ।
भुक्ते जीर्यति यच्छूलं तदेव परिणामजम् ॥१६॥
तस्य लक्षणमप्येतत्समासेनाभिधीयते ।
आध्मानाटोपविण्मूत्रविबन्धारतिवेपनैः ॥१७॥
स्निग्धोष्णोपशमप्रायं वातिकं तद्वदेद्भिषक् ।
तृष्णादाहारतिस्वेदं कट्वम्ललवणोत्तरम् ॥१८॥
शूलं शीतशमप्रायं पैत्तिकं लक्षयेद्बुधः ।
छर्दिहृल्लाससंमोहं स्वल्परुग्दीर्घसन्तति ॥१९॥

कटुतिक्तोपशान्तं च तच्च ज्ञेयं कफात्मकम् ।
संसृष्टलक्षणं बुद्ध्वा द्विदोषं परिकल्पयेत् ॥२०॥
त्रिदोषजमसाध्यं तु क्षीणमांसबलानलम् ।
जीर्णे जीर्यत्यजीर्णे वा यच्छूलमुपजायते ॥२१॥
पथ्यापथ्यप्रयोगेण भोजनाभोजनेन च ।
न शमं याति नियमात्सोऽन्नद्रव उदाहृतः ॥२२॥
(अन्नद्रवाख्य शूलेषु न तावत्स्वास्थ्यमश्नुते ।
वान्तमात्रे जरत्पित्तं शूलमाशु व्यपोहति ॥ १ ॥)
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने शूलपरिणाम-
शूलान्नद्रवशूलनिदानं समाप्तम् ॥२६॥

अथोदावर्तानाहनिदानम् ।

वातविण्मूत्रजृम्भास्रक्षवोद्गारवमीन्द्रिय ।
क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः ॥ १ ॥
वातमूत्रपुरीषाणां सङ्गो ध्मानं क्लमो रुजा ।
जठरे वातजाश्चान्ये रोगाः स्युर्वातनिग्रहात् ॥ २ ॥
आटोपशूलौ परिकर्त्तिका च
संगः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः ।
पुरीषमास्यादथवा निरेति
पुरीषवेगेऽभिहते नरस्य ॥ ३ ॥
बस्तिमेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा ।
विनामो वंक्षणानाहः स्याल्लिङ्गं मूत्रनिग्रहे ॥ ४ ॥
मन्यागलस्तम्भशिरोविकारा
जृंभोपघातात्पवनात्मकाः स्युः ।

तथाऽक्षिनासावदनामयाश्च
भवन्ति तीव्राः सह कर्णरोगैः ॥ ५ ॥
आनन्दजं वाप्यथ शोकजं वा
नेत्रोदकं प्राप्तममुञ्चतो हि ।
शिरोगुरुत्वं नयनामयाश्च
भवन्ति तीव्राः सहपीनसेन ॥ ६ ॥
मन्यास्तम्भः शिरःशूलमर्दितार्धावभेदकौ ।
इन्द्रियाणां च दौर्बल्यं क्षवथोः स्याद्विधारणात् ॥ ७ ॥
कण्ठास्यपूर्णत्वमतीव तोदः
कूजश्च वायोरथवाऽप्रवृत्तिः ।
उद्गारवेगेऽभिहते भवन्ति
घोरा विकाराः पवनप्रसूताः ॥ ८ ॥
कण्डूकोठारुचिव्यङ्गशोथपाण्ड्वामयज्वराः ।
कुष्ठवीसर्पहृल्लासाश्छर्दिनिग्रहजा गदाः ॥ ९ ॥
मूत्राशये वै गुदमुष्कयोश्च
शोथो रुजा मूत्रविनिग्रहश्च ।
शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्च
ते ते विकारा विहते च शुक्रे ॥१०॥
तन्द्राङ्गमर्दावरुचिः श्रमश्च
क्षुधाभिघातात्कृशता च दृष्टेः ।
कण्ठास्यशोषः श्रवणावरोध-
स्तृष्णाविघाताद्धृदये व्यथा च ॥ ११॥
श्रान्तस्य निश्वासविनिग्रहेण
हृद्रोगमोहावथवाऽपि गुल्मः ।

जृम्भाऽङ्गमर्दोऽग्निशिरोऽतिजाड्यं
निद्राभिघातादथवाऽपि तन्द्रा ॥१२॥
वायुः कोष्ठानुगो रूक्षैः कषायकटुतिक्तकैः।
भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्तं करोति हि ॥१३॥
वातमूत्रपुरीषासृक्कफमेदोवहानि वै।
स्रोतांस्युदावर्तयति पुरीषं चातिवर्तयेत् ॥१४॥
ततो हृद्बस्तिशूलार्तो हृल्लासारतिपीडितः।
वातमूत्रपुरीषाणि कृच्छ्रेण लभते नरः ॥१५॥
श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृषाज्वरान्।
वमिहिक्काशिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान्।
बहूनन्यांश्च लभते विकारान् वातप्रकोपजान् ॥१६॥
आमं शकृद्वा निचितं क्रमेण
भूयो विबद्धं विगुणानिलेन।
प्रवर्तमानं न यथास्वमेनं
विकारमानाहमुदाहरन्ति ॥१७॥
तस्मिन्भवत्यामसमुद्भवे तु
तृष्णाप्रतिश्यायशिरोविदाहाः।
आमाशये शूलमथो गुरुत्वं
हृत्स्तंभ उद्गारविघातनं च ॥१८॥
स्तंभः कटीपृष्ठपुरीषमूत्रे
शूलोऽथ मूर्च्छा शकृतश्च छर्दिः।
शोथश्च पक्वाशयजे भवन्ति
तथाऽलसोक्तानि च लक्षणानि ॥१९॥
(तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरुपद्रुतम्।

शकृद्वमन्तं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत् ॥ १ ॥)

इति श्रीमाधकरविरचिते माधवनिदाने उदावर्तानाह निदानं समाप्तम् ॥२७॥

अथ गुल्मनिदानम् ।

दुष्टा वातादयोऽत्यर्थं मिथ्याहारविहारतः ।
कुर्वन्ति पञ्चधा गुल्मं कोष्ठान्तर्ग्रन्थिरूपिणम् ॥
तस्य पञ्चविधं स्थानं पार्श्वहृन्नाभिबस्तयः ॥ १ ॥
हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः सञ्चारी यदि वाऽचलः ।
वृत्तश्चयापचयवान् स गुल्म इति कीर्तितः ॥ २ ॥
स व्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः ।
पुरुषाणां, तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः ॥ ३ ॥

उद्गारबाहुल्यपुरीषबन्ध-
तृप्त्यक्षमत्वान्त्रविकूजनानि ।
आटोप आध्मानमपक्तिशक्ति-
रासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम् ॥ ४ ॥

अरुचिः कृच्छ्रविण्मूत्र वातताऽन्त्रविकूजनम् ।
आनाहश्चोर्ध्ववातत्वं सर्वगुल्मेषु लक्षयेत् ॥ ५ ॥

रूक्षान्नपानं विषमातिमात्रं
विचेष्टनं वेगविनिग्रहश्च ।
शोकोऽभिघातोऽतिमलक्षयश्च
निरन्नता चानिलगुल्महेतुः ॥ ६ ॥

यः स्थानसंस्थानरुजां विकल्पं
विड्वातसङ्गं गलवक्त्रशोषम् ।

श्यावारुणत्वं शिशिरज्वरं च
हृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरोरुजं च ॥ ७ ॥
करोति जीर्णे त्वधिकं प्रकोपं
भुक्ते मृदुत्वं समुपैति यश्च ।
वातात्स गुल्मो न च तत्र रूक्षं
कषायतिक्तं कटु चोपशेते ॥ ८ ॥
कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्ष-
क्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा ।
आमाभिघातो रुधिरं च दुष्टं
पैत्तस्य गुल्मस्य निमित्तमुक्तम् ॥ ९ ॥
ज्वरः पिपासा वदनाङ्गरागः
शूलं महज्जीर्यति भोजने च ।
स्वेदो विदाहो व्रणवच्च गुल्मः
स्पर्शासहः पैत्तिकगुल्मरूपम ॥१०॥
शीतं गुरु स्निग्धमचेष्टनं च
संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च ।
गुल्मस्य हेतुः कफसंभवस्य
सर्वस्तु दुष्टो निचयात्मकस्य ॥११॥
स्तैमित्यशीतज्वरगात्रसाद-
हृल्लासकासारुचिगौरवाणि ।
शैत्यं रुगल्पा कठिनोन्नतत्वं
गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य ॥१२॥
निमित्तरूपाण्युपलभ्य गुल्मे
द्विदोषजे दोषबलाबलं च ।

व्यामिश्रलिङ्गानपरांश्च गुल्मां-
स्त्रीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥१३॥
महारुजं दाहपरीतमश्मव-
द्घनोन्नतं शीघ्रविदाहि दारुणम् ।
मनःशरीराग्निबलापहारिणं
त्रिदोषजं गुल्ममसाध्यमादिशेत् ॥१४॥
नवप्रसूताऽहितभोजना या
या चामगर्भं विसृजेदृतौ वा ।
वायुर्हि तस्याः परिगृह्य रक्तं
करोति गुल्मं सरुजं सदाहम् ।
पैत्तस्य लिङ्गेन समानलिंगं
विशेषणं चाप्यपरं निबोध ॥१५॥
यः स्पन्दते पिण्डित एव नांगै-
श्चिरात्सशूलः समगर्भलिङ्गः ॥
स रौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो
मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः ॥१६॥
सञ्चितः क्रमशो गुल्मो महावास्तुपरिग्रहः ।
कृतमूलः शिरानद्धो यदा कूर्म इवोत्थितः ॥१७॥
दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासच्छर्द्यरतिज्वरैः ।
तृष्णातन्द्राप्रतिश्यायैर्युज्यते स न सिध्यति ॥१८॥
गृहीत्वा सज्वरं श्वासश्छर्द्यतीसारपीडितम् ।
हृन्नाभिहस्तपादेषु शोथः कर्षति गुल्मिनम् ॥१९॥
श्वासः शूलं पिपासाऽन्नविद्वेषो ग्रन्थिमूढता ।
जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनो मरणाय वै ॥२०॥

(न निबन्धोऽस्ति गुल्मस्य विद्रधिः सनिबन्धनः ।
गुल्मस्तिष्ठति दोषे स्वे विद्रधिर्मांसशोणिते ॥
विद्रधिः पच्यते तस्माद्गुल्मः क्वापि न पच्यते ॥१॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने गुल्मनिदानं समाप्तम् ॥२८॥

अथ हृद्रोगनिदानम् ।

अत्युष्णगुर्वन्नकषायतिक्त-
श्रमाभिघाताध्यशनप्रसंगैः ।
संचिन्तनैर्वेगविधारणैश्च
हृदामयः पञ्चविधः प्रदिष्टः ॥ १ ॥

दूषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयं गताः ।
हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥ २ ॥
आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा ।
निर्मथ्यते दीर्यते च स्फोट्यते पाट्यतेऽपि च ॥ ३ ॥
तृष्णोष्मादाहचोषाः स्युः पैत्तिके हृदयक्लमः ।
धूमायनं च मूर्च्छा च स्वेदः शोषो मुखस्य च ॥ ४ ॥
गौरवं कफसंस्रावोऽरुचिः स्तम्भोऽग्निमार्दवम् ।
माधुर्यमपि चास्यस्य बलासावतते हृदि ॥ ५ ॥
विद्यात्त्रिदोषं त्वपि सर्वलिंगं
तीव्रार्तितोदं क्रिमिजं सकण्डूम् ।
उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृल्लासकस्तमः ।
अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोथश्च क्रिमिजे भवेत् ॥ ६ ॥

क्लमः *सादो भ्रमः शोषो ज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः ।
क्रिमिजे क्रिमिजातीनां श्लैष्मिकाणां च ये मताः ॥ ७ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने हृद्रोग-
निदानं समाप्तम् ॥२९॥

अथ मूत्रकृच्छ्रनिदानम् ।

व्यायामतीक्ष्णौषधरूक्षमद्य-
प्रसंगनित्यद्रुतपृष्ठयानात् ।
आनूपमांसाध्यशनादजीर्णात्-
स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणां तथाऽष्टौ ॥ १ ॥
पृथङ्मलाः स्वैः कुपिता निदानैः
सर्वेऽथवा कोपमुपेत्य बस्तौ ।
मूत्रस्य मार्गं परिपीडयन्ति
यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात् ॥ २ ॥
तीव्रार्तिरुग्वंक्षणबस्तिमेढ्रे
स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात् ।
पीतं सरक्तं सरुजं सदाहं
कृच्छ्रं मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात् ॥ ३ ॥
बस्तेः सलिङ्गस्य गुरुत्वशोथौ
मूत्रं सपिच्छं कफमूत्रकृच्छ्रे ।
सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपाताद्
भवन्तितत्कृच्छ्रतमं हि कृच्छ्रम् ॥ ४ ॥
मूत्रवाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु वा ।

* "क्लोम्नः"

मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जायते भृशदारुणम् ॥ ५ ॥
वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्य लिङ्गानि निर्दिशेत् ।
शकृतस्तु प्रतीघाताद्वायुर्विगुणतां गतः ॥ ६ ॥
आध्मानं वातशूलं च मूत्रसङ्गं करोति च ।
अश्मरीहेतु तत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्रमुदाहरेत् ॥ ७ ॥
शुक्रे दोषैरुपहते मूत्रमार्गे विधाविते ।
सशुक्रं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्बस्तिमेहनशूलवान् ॥ ८ ॥
अश्मरी शर्करा चैव तुल्यसम्भवलक्षणे ।
विशेषणं शर्करायाः शृणु कीर्त्तयतो मम ॥ ९ ॥
पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणा च वायुना ।
विमुक्तकफसन्धाना क्षरन्ती शर्करा मता ॥१०॥
हृत्पीडा वेपथुः शूलं कुक्षावग्निश्च दुर्बलः ।
तया भवति मूर्च्छा च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥११॥
मूत्रवेगनिरस्ताभिः प्रशमं याति वेदना ।
यावदस्याः पुनर्नैति गुडिका स्रोतसो मुखम् ॥१२॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मूत्राकृच्छ्र-
निदानं समाप्तम् ॥३०॥

अथ मूत्राघातनिदानम् ।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ।
प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः ॥ १ ॥
रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वावायुर्बस्तौ सवेदनः ।
मूत्रमाविश्य चरति विगुणः कुण्डलीकृतः ॥ २ ॥
मूत्रमल्पाल्पमथवा सरुजं संप्रवर्तते ।
वातकुण्डलिकां तां तु व्याधिं विद्यात्सुदारुणम् ॥ ३ ॥

आध्मापयन्बस्तिगुदं रुद्ध्वा वायुश्चलोन्नताम् ।
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलां मूत्रविण्मार्गरोधिनीम् ॥ ४ ॥
वेगं विधारयेद्यस्तु मूत्रस्याकुशलो नरः ।
निरुणद्धि मुखं तस्य बस्तेर्बस्तिगतोऽनिलः ॥ ५ ॥
मूत्रसङ्गो भवेत्तेन बस्तिकुक्षिनिपीडितः ।
वातबस्तिः स विज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्रप्रसाधनः ॥ ६ ॥
चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्तते ।
मेहमानस्य मन्दं वा मूत्रातीतः स उच्यते ॥ ७ ॥
मूत्रस्य वेगेऽभिहते तदुदावर्तहेतुकः ।
अपानः कुपितो वायुरुदरं पूरयेद्भृशम् ॥ ८ ॥
नाभेरधस्तादाध्मानं जनयेत्तीव्रवेदनम् ।
तन्मूत्रजठरं विद्यादधोबस्तिनिरोधनम् ॥ ९ ॥
बस्तौ वाऽप्यथवा नाले मणौ वा यस्य देहिनः ।
मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत सरक्तं वा प्रवाहतः ॥१०॥
स्रवेच्छनैरल्पमल्पं सरुजं वाऽथ नीरुजम् ।
विगुणानिलजो व्याधिः स मूत्रोत्सङ्गसंज्ञितः॥११॥
रूक्षस्य क्लान्तदेहस्य बस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ।
मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥१२॥
अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत् ।
अश्मरीतुल्यरुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥१३॥
मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम् ।
स्थानाच्च्युतं मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वा प्रवर्तते ॥१४॥
भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्रशुक्रं तदुच्यते ।
व्यायामाध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्यानिलान्वितम् ॥१५॥

बस्तिं मेढ्रं गुदं चैव प्रदहेत्स्रावयेदधः ।
मूत्रं हारिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव वा ॥१६॥
कृच्छ्रात्पुनःपुनर्जन्तोरुष्णवातं ब्रुवन्ति तम् ।
पित्तं कफो द्वावपि वा संहन्येतेऽनिलेन चेत् ॥१७॥
कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतं श्वेतं रक्तं घनं सृजेत् ।
सदाहं रोचनाशङ्खचूर्णवर्णं भवेत्तु तत् ॥१८॥
शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदन्ति तम् ।
रूक्षदुर्बलयोर्वातेनोदावृत्तं शकृद्यदा ॥१९॥
मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत विड्संसृष्टं तदा नरः ।
विड्गन्धं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं विनिर्दिशेत् ॥२०॥
द्रुताध्वलङ्घनायासैरभिघातात्प्रपीडनात् ।
स्वस्थानाद्बस्तिरुद्वृत्तः स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत् ॥२१॥
शूलस्पन्दनदाहार्तो बिन्दुं बिन्दुं स्रवत्यपि ।
पीडितस्तु सृजेद्धारां संस्तम्भोद्वेष्टनार्तिमान् ॥२२॥
बस्तिकुण्डलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमम् ।
पवनप्रबलं प्रायो दुर्निवारमबुद्धिभिः ।
तस्मिन्पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता ॥२३॥
श्लेष्मणा गौरवं शोथः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ।
श्लेष्मरुद्धबिलो बस्तिः पित्तोदीर्णो न सिध्यति ॥२४॥
अविभ्रान्तबिलः साध्यो न तु यः कुण्डलीकृतः ।
स्याद्बस्तौ कुण्डलीभूते तृण्मोहः श्वास एव च ॥२५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मूत्राघात निदानं समाप्तम् ॥ ३१ ।

अथाश्मरीनिदानम् ।

वातपित्तकफैस्तिस्रश्चतुर्थी शुक्रजाऽपरा ।
प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा अश्मर्यः स्युर्यमोपमाः॥ १ ॥

विशोषयेद्बस्तिगतं सशुक्रं
मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ।
यदा तदाऽश्मर्युपजायते तु
क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः ॥ २ ॥

नैकदोषाश्रयाः सर्वाः अथासां पूर्वलक्षणम् ।
बस्त्याध्मानं तदासन्नदेशेषु परितोऽतिरुक् ॥ ३ ॥
मूत्रे बस्तसगन्धत्वं मूत्रकृच्छ्रं ज्वरोऽरुचिः ।
सामान्यलिङ्गं रुङ्नाभिसेवनीबस्तिमूर्धसु ॥ ४ ॥
विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तया मार्गे निरोधिते ।
तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदकोपमम् ॥ ५ ॥
तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत् ।
तत्र वाताद्भृशं चार्तो दन्तान्खादति वेपते ॥ ६ ॥
गृह्णाति मेहनं नाभिं पीडयत्यनिशं क्वणन् ।
सानिलं मुञ्चति शकृन्मुहुर्मेहति बिन्दुशः ॥७॥
श्यावारुणाऽश्मरी चास्य स्याच्चिता कण्टकैरिव।
पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमान इवोष्मवान् ॥८॥
भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्ता पीताऽसिताऽश्मरी ।
बस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः ॥ ९ ॥
अश्मरी महती श्लक्ष्णा मधुवर्णाऽथवा सिता।
एता भवन्ति बालानां तेषामेव च भूयसा ॥१०॥

आश्रयोपचयाल्पत्वाद्ग्रहणाहरणे सुखाः ।
शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात् ॥११॥
स्थानाच्च्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः ।
शोषयत्युपसंगृह्य शुक्रं तच्छुक्रमश्मरी ॥१२॥
बस्तिरुङ्मूत्रकृच्छ्रत्वमुष्कश्वयथुकारिणी ।
तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते ॥१३॥
पीडिते त्ववकाशेऽस्मिन्नश्मर्येव च शर्करा ।
अणुशो वायुना भिन्ना सा तस्मिन्ननुलोमगे ॥१४॥
निरेति सह मूत्रेण प्रतिलोमे निरुध्यते ।
मूत्रस्रोतःप्रवृत्ता सा सक्ता कुर्यादुपद्रवान् ॥१५॥
दौर्बल्यं सदनं कार्श्यं कुक्षिशूलमथारुचिम् ।
पाण्डुत्वमुष्णवातं च तृष्णां हृत्पीडनं वमिम् ॥१६॥
प्रशननाभिवृषणं बद्धमूत्रं रुजातुरम् ।
अश्मरी क्षपयत्याशु सिकता शर्करान्विता ॥१७॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽश्मरी
निदानं समाप्तम् ॥ ३२ ॥

अथ प्रमेहप्रमेहपिडकानिदानम् ।

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि
ग्राम्यौदकानूपरसाः पयांसि ।
नवान्नपानं गुडवैकृतं च
प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥ १ ॥
चन्द्रोदयप्रणयपीवरदुग्धसिन्धू-
पूरभ्रमं वहति यद्गुण कीर्तिगुच्छः ॥

तेन व्यधायि गुरुणा विजयेन शिष्य-
प्रेम्णाऽश्मरी रुगवधेर्मधु कोपबन्धः ॥ १ ॥
श्रीकण्ठदत्तभिषजा गुरुभक्ति लेशा
दारभ्यते प्रभृति संप्रति मेहरोगात् ।
सूक्तीर्विचिन्त्य मधुशीकर मुद्गिरन्ती-
ष्टीकाकृतः कतिपयस्य तदीयशेषः ॥ २ ॥
मेदश्च मांसं च शरीरजं च
क्लेदं कफो बस्तिगतः प्रदूष्य ।
करोति मेहान्समुदीर्णमुष्णै-
स्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि ॥ २ ॥
क्षीणेषु दोषेष्ववकृष्य धातून्
संदूष्य मेहान्कुरुतेऽनिलश्च ।
साध्याः कफोत्था दश, पित्तजाः षड्
याप्या, न साध्यः पवनाच्चतुष्कः ॥ ३ ॥
समक्रियत्वाद्विषमक्रियत्वा-
न्महात्ययत्वाच्च यथाक्रमं ते ॥
कफः सपित्तः पवनश्च दोषा,
मेदोऽस्रशुक्राम्बुवसालसीकाः ।
मज्जा रसौजः पिशितं च दूष्याः,
प्रमेहिणां विंशतिरेव मेहाः ॥ ४ ॥
दन्तादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः ।
दाहश्चिक्कणता देहे तृट्स्वाद्वास्यं च जायते ॥ ५ ॥
सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता ।
दोषदूष्यविशेषेऽपि तत्संयोगविशेषतः ॥ ६ ॥

मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते ।
अच्छं बहु सितं शीतं निर्गन्धमुदकोपमम् ॥ ७ ॥
मेहत्युदकमेहेन किंचिदाविलपिच्छिलम् ।
इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः ॥ ८ ॥
सान्द्रीभवेत्पर्युषितं सान्द्रमेहेन मेहति ।
सुरामेही सुरातुल्यमुपर्यच्छमधो घनम् ॥ ९ ॥
संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम् ।
शुक्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति ॥१०॥
मूर्ताणून्सिकतामेही सिकतारूपिणो मलान् ।
शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीतलम् ॥११॥
शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति ॥
लालातन्तुयुतं मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम् ॥१२॥
गन्धवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् ।
नीलमेहेन नीलाभं कालमेही मसीनिभम् ॥१३॥
हारिद्रमेही कटुकं हारिद्रासन्निभं दहत् ।
विस्रं माञ्जिष्ठमेहेन मञ्जिष्ठासलिलोपमम् ॥१४॥
विस्रमुष्णं सलवणं रक्ताभं रक्तमेहतः ।
वसामेही वसामिश्रं वसाभं मूत्रयेन्मुहुः ॥१५॥
मज्जाभं मज्जमिश्रं वा मज्जमेही मुहुर्मुहुः ।
कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहं वदेद् बुधः ॥१६॥
हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगविवर्जितम् ।
सलसीकं विबद्धं च हस्तिमेही प्रमेहति ॥१७॥
अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्निद्रा* कासः सपीनसः ।

* "ज्वरः कासः सपीनसः"

उपद्रवाः प्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥१८॥
बस्तिमेहनयोस्तोदो× मुष्कावदरणं ज्वरः ।
दाहस्तृष्णाऽम्लिका मूर्च्छा विड्भेदः पित्तजन्मनाम् ॥१९॥
वातजानामुदावर्तः कम्पहृद्ग्रहलोलताः❀ ।
शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥२०॥
यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रस्रुतमेव च ।
पिडकापीडितं गाढः प्रमेहो हन्ति मानवम् ॥२१॥
जातः प्रमेही मधुमेहिनो वा
न साध्य उक्तः स हि बीजदोषात् ।
ये चापि केचित्कुलजा विकारा
भवन्ति तांस्तान्प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥२२॥
सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रतिकारिणः ।
मधुमेहत्वमायान्ति तदाऽसाध्या भवन्ति हि ॥२३॥
मधुमेहे मधुसमं जायते स किल द्विधा ।
क्रुद्धे धातुक्षयाद्वायौ दोषावृतपथेऽथवा ॥२४॥
आवृतो दोषलिङ्गानि सोऽनिमित्तं प्रदर्शयन् ।
क्षणात्क्षीणः क्षणात्पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥२५॥
मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो मध्विव मेहति ।
सर्वेऽपि मधुमेहाख्या माधुर्याच्च तनोरतः ॥२६॥
शराविका कच्छपिका जालिनी विनताऽलजी ।
मसूरिका सर्षपिका पुत्रिणी सविदारिका ॥२७॥
विद्रधिश्चेति पिडकाः प्रमेहोपेक्षया दश ।
सन्धिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु ॥२८॥

× 'शूलं' ❀ 'कण्ठहृद्ग्रहलोलता'

अन्तोन्नता तु तद्रूपा निम्नमध्या शराविका ।
गौरसर्षपसंस्थाना तत्प्रमाणा च सर्षपी ॥२९॥
सदाहा कूर्मसंस्थाना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ।
जालिनी तीव्रदाहा तु मांसजालसमावृता ॥३०॥
अवगाढरुजाक्लेदा पृष्ठे वाऽप्युदरेऽपि वा ।
महती पिडका नीला विनता नाम सा स्मृता ॥३१॥
महत्यल्पाचिता ज्ञेया पिडका चापि पुत्रिणी ।
मसूराकृतिसंस्थाना विज्ञेया तु मसूरिका ॥३२॥
रक्ता सिता स्फोटचिता दारुणा त्वलजी भवेत् ।
विदारीकन्दवद्वृत्ता कठिना च विदारिका ॥३३॥
विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ता ज्ञेया विद्रधिका तु सा ।
ये यन्मयाः स्मृता मेहास्तेषामेतास्तु तन्मयाः ॥३४॥
विना प्रमेहमप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ।
तावच्चैता न लक्ष्यन्ते यावद्वास्तुपरिग्रहः ॥३५॥
गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्ठे मर्मसु चोत्थिताः ।
सोपद्रवा दुर्बलाग्नेः पिडकाः परिवर्जयेत ॥३६॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने प्रमेहप्रमेहपिड़का-
निदानं समाप्तम् ॥३३॥

अथ मेदोरोगनिदानम् ।

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ।
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदः प्रवर्धयेत् ॥ १ ॥
मेदसाऽऽवृतमार्गत्वात्पुष्यन्त्यन्ये न धातवः ।
मेदस्तु चीयते तस्मादशक्तः सर्वकर्मसु ॥ २ ॥

क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः ।
युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गन्ध्यैरल्पप्राणोऽल्पमैथुनः ॥ ३ ॥
मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषु स्थितम् ।
अत एवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥ ४ ॥
मेदसाऽऽवृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः ।
चरन्संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यपि ॥ ५ ॥
तस्मात् स शीघ्रं जरयत्याहारमभिकांक्षति ।
विकारांश्चाप्नुते घोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥६ ॥
एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ ।
एतौ तु दहतः स्थूलं वनदावो वनं यथा ॥ ७ ॥
मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः ।
विकारान्दारुणान्कृत्वा नाशयन्त्याशु जीवितम् ॥८॥
मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः ।
अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥ ९ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मेदोनिदानं समाप्तम् ॥३४॥

अथोदरनिदानम् ।

रोगाः सर्वेऽपि मन्देऽग्नौ सुतरामुदराणि च ।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्जायन्ते मलसञ्चयात् ॥ १ ॥
रुद्ध्वा स्वेदाम्बुवाहीनि दोषाः स्रोतांसि सञ्चिताः ।
प्राणाग्न्यपानान्संदूष्य जनयन्त्युदरं नृणाम् ॥ २ ॥
आध्मानं गमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलाग्निता ।
शोथः सदनमङ्गानां सङ्गो वातपुरीषयोः ॥ ३ ॥

दाहस्तन्द्रा च सर्वेषु जठरेषु भवन्ति हि ।
पृथग्दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः ॥ ४ ॥
संभवन्त्युदराण्यष्टौ तेषां लिङ्गं पृथक्छृणु ।
तत्र वातोदरे शोथः पाणिपन्नाभिकुक्षिषु ॥ ५ ॥
कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ।
शुष्ककासोऽङ्गमर्दोऽधोगुरुता मलसंग्रहः ॥ ६ ॥
श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ।
सतोदभेदमुदरं तनुकृष्णसिराततम् ॥ ७ ॥
आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च ।
वायुश्चात्र सरुक्छब्दो विचरेत्सर्वतो गतिः ॥ ८ ॥
पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्तृट् कटुकास्यता ।
भ्रमोऽतिसारः पीतत्वं त्वगादावुदरं हरित् ॥ ९ ॥
पीतताम्रसिरानद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते ।
धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रदूयते ॥१०॥
श्लेष्मोदरेऽङ्गसदनं स्वापश्वयथुगौरवम् ।
निद्रोत्क्लेशोऽरुचिः श्वासः कासः शुक्लत्वगादिता ॥११॥
उदरं स्तिमितं स्निग्धं शुक्लराजीततं महत् ।
चिराभिवृद्धं कठिनंशीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥१२॥
स्त्रियोऽन्नपानं नखलोममूत्र-
विडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः ।
यस्मै प्रयच्छंत्यरयो गरांश्च
दुष्टाम्बुदूषीविषसेवनाद्वा ॥१३॥
तेनाशु रक्तं कुपिताश्च दोषाः
कुर्युः सुघोरं जठरं त्रिलिंगम् ।

तच्छीतवाते भृशदुर्दिने च
विशेषतः कुप्यति दह्यते च ॥१४॥
स चातुरो मुह्यति हि प्रसक्तं
पाण्डुः कृशः शुष्यति तृष्णया च ।
दूष्योदरं कीर्तितमेतदेव,
प्लीहोदरं कीर्तयतो निबोध ॥१५॥
विदाह्यभिष्यन्दिरतस्य जन्तोः
प्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च ।
प्लीहाभिवृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ
प्लीहोत्थमेतज्जठरं वदन्ति ॥१६॥
तद्वामपार्श्वे परिवृद्धिमेति
विशेषतः सीदति चातुरोऽत्र ।
मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिङ्गै-
रुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपाण्डुः ।
सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रवृद्धे
ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥१७॥
उदावर्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ।
गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥१८॥
यस्यांत्रमन्नैरुपलेपिभिर्वा
बालाश्मभिर्वा पिहितं यथावत् ।
संचीयते तस्य मलः सदोषः
शनैः शनैः संकरवच्च नाड्याम् ॥१९॥
निरुध्यते तस्य गुदे पुरीषं
निरेति कृच्छ्रादपिचाल्पमल्पम् ।

हृन्नाभिमध्ये परिवृद्धिमेति
तस्योदरं बद्धगुदं वदन्ति ॥२०॥
शल्यं तथान्नोपहितं यदन्त्रं
भुक्तं भिनत्त्यागतमन्यथा वा ।
तस्मात्स्रुतोऽन्त्रात्सलिलप्रकाशः
स्रावः स्रवेद्वै गुदतस्तु भूयः ॥२१॥
नाभेरधश्चोदरमेति वृद्धिं
निस्तुद्यते दाल्यति चातिमात्रम् ।
एतत्परिस्राव्युदरं प्रदिष्टं,
दकोदरं कीर्तयतो निबोध ॥२२॥
यः स्नेहपीतोऽप्यनुवासितो वा
वान्तो विरक्तोऽप्यथवा निरूढः ।
पिबेज्जलं शीतलमाशु तस्य
स्रोतांसि दूष्यन्ति हि तद्वहानि ॥२३॥
स्नेहोपलिप्तेष्वथवाऽपि तेषु
दकोदरं पूर्ववदभ्युपैति ।
स्निग्धं महत्तत्परिवृत्तनाभि
समाततं पूर्णमिवाम्बुना च ।
यथा दृतिः क्षुभ्यति कम्पते च
शब्दायते चापि दकोदरं तत् ॥२४॥
जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं मतम् ।
बलिनस्तदजाताम्बु यत्नसाध्यं नवोत्थितम् ॥२५॥
(अशोथमरुणाभासं सशब्दं नातिभारिकम् ।
सदा गुडगुडायन्तं सिराजालगवाक्षितम् ॥ १ ॥

नाभिं विष्टभ्य पार्श्वौ तु वेगं कृत्वा प्रणश्यति ।
हृद्वंक्षणकटीनाभिगुदंप्रत्येकशूलिनः ॥ २ ॥
कर्कशं सृजतो वातं नातिमन्दे च पावके ।
लालया विरसे चास्ये मूत्रेऽल्पे संहते विशि ॥ ३ ॥
अजातोदकमित्येतैर्युक्तं विज्ञाय लक्षणैः)
[पयः पूर्णा दृतिरिव क्षोभे शब्दकरं मृदु ।
अव्यक्तशिरं शूनं नितान्तमुदरं महत् ॥ १ ॥
आलस्यमास्यवैरस्यं मूत्रं बहुशकृत्स्रुतम् ।
जातोदकस्य लिङ्गं स्यान्मंदोऽग्निः पाण्डुतापि च] ॥ २ ॥
पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा ।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रान्त्रं चोदरं नृणाम् ॥२६॥
शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणं च वर्जयेत् ॥२७॥
पार्श्वभङ्गान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितम् ।
विरिक्तं चाप्युदरिणं पूर्यमाणं विवर्जयेत् ॥२८॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने उदरनिदानं समाप्तम् ॥३५॥

अथ शोथनिदानम् ।

रक्तपित्तकफान्वायुर्दुष्टो दुष्टान्बहिः सिराः ।
नीत्वा रुद्धगतिस्तैर्हि कुर्यात्त्वङ्मांससंश्रयम् ॥ १ ॥
उत्सेधं संहतं शोथं तमाहुर्निचयादतः ।
सर्वं हेतुविशेषैस्तु रूपभेदान्नवात्मकम् ॥ २ ॥
दोषैः पृथग्द्वयैः सर्वैरभिघाताद्विषादपि ।

तत्पूर्वरूपं दवथुः शिरायामोऽङ्गगौरवम् ॥ ३ ॥
शुध्यामयाभक्तकृशाबलानां
क्षाराम्लतीक्ष्णोष्णगुरूपसेवा ।
दध्याममृच्छाकविरोधिदुष्ट-
गरोपसृष्टान्ननिषेवणं च ॥ ४ ॥
अर्शांस्यचेष्टा न च देहशुद्धि-
र्मर्मोपघातो विषमा प्रसूतिः ।
मिथ्योपचारः प्रतिकर्मणां च
निजस्य हेतुः श्वयथोः प्रदिष्टः ॥ ५ ॥
सगौरवं स्यादनवस्थितत्वं
सोत्सेधमूष्मा ऽथ सिरातनुत्वम् ।
सलोमहर्षश्च विवर्णता च
सामान्यलिङ्गं श्वयथोः प्रदिष्टम् ॥ ६ ॥
चलस्तनुत्वक्परुषोऽरुणोऽसितः
सुषुप्तिहर्षार्तियुतोऽनिमित्ततः ।
प्रशाम्यति प्रोन्नमति प्रपीडितो
दिवाबली च श्वयथुः समीरणात् ॥ ७ ॥
मृदुः सगन्धोऽसितपीतरागवान्
भ्रमज्वरस्वेदतृषामदान्वितः ।
य उष्यते स्पर्शरुगक्षिरागकृत्
स पित्तशोथो भृशदाहपाकवान् ॥ ८ ॥
गुरुः स्थिरः पाण्डुररोचकान्वितः
प्रसेकनिद्रावमिवह्निमान्द्यकृत् ।

स कृच्छ्रजन्मप्रशमो निपीडितो
न चोन्नमेद्रात्रिबली कफात्मकः ॥ ९ ॥
निदानाकृतिसंसर्गाच्छ्वयथुः स्याद् द्विदोषजः ।
सर्वाकृतिः संनिपाताच्छोथो व्यामिश्रलक्षणः ॥१०॥
अभिघातेन शस्त्रादिच्छेदभेदक्षतादिभिः ।
हिमानिलोदध्यनिलैर्भल्लातकपिकच्छुजैः ॥११॥
रसैः शूकैश्च❀संस्पर्शाच्छ्वयथुः स्याद्विसर्पवान् ।
भृशोष्मा लोहिताभासः प्रायशः पित्तलक्षणः ॥१२॥
विषजः सविषप्राणिपरिसर्पणमूत्रणात् ।
दंष्ट्रादन्तनखाघातादविषप्राणिनामपि ॥१३॥
विण्मूत्रशुक्रोपहतमलवद्वस्त्रसंकरात् ।
विषवृक्षानिलस्पर्शाद्गरयोगावचूर्णनात् ॥१४॥
मृदुश्चलोऽवलम्बी च शीघ्रो दाहरुजाकरः ।
दोषाः श्वयथुमूर्ध्वं हि कुर्वन्त्यामाशयस्थिताः ॥१५॥
पक्वाशयस्था मध्ये तु वर्चःस्थानगतास्त्वधः ।
कृत्स्नदेहमनुप्राप्ताः कुर्युःसर्वसरं तथा ॥१६॥
यो मध्यदेशे श्वयथुः स कष्टः सर्वगश्च यः ।
अर्धाऽङ्गेरिष्टभूतः स्याद्यश्चोर्ध्वं परिसर्पति ॥१७॥
श्वासः पिपासा छर्दिश्च दौर्बल्यं ज्वर एव च ।
यस्य चान्ने रुचिर्नास्ति श्वयथुं तं विवर्जयेत् ॥१८॥
अनन्योपद्रवकृतः शोथः पादसमुत्थितः ।
पुरुषं हन्ति नारीं च मुखजो गुह्यजो द्वयम् ॥
नवोऽनुपद्रवः शोथः साध्योऽसाध्यः पुरेरितः ॥१९॥

❀ 'शूकैश्च'

(छर्दिस्तृष्णाऽरुचिः श्वासो ज्वरोऽतीसार एव च ।
सप्तकोऽयं सदौर्बल्यः शोथोपद्रवसंग्रहः ॥ १ ॥)
विवर्जयेत्कुक्ष्युदराश्रितं च
तथा गले मर्मणि संश्रितं च ।
स्थूलः खरश्चापि भवेद्विवर्ज्यो
यश्चापि बालस्थविराबलानाम् ॥२०॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने शोथनिदानं समाप्तम् ॥३६॥

अथ वृद्धिनिदानम् ।

वृद्धोऽनूर्ध्वगतिर्वायुः❋ शोथशूलकरश्चरन् ।
मुष्कौ वंक्षणतः प्राप्य फलकोषाभिवाहिनीः ॥ १ ॥
प्रपीड्य धमनीर्वृद्धिं करोति फलकोषयोः ।
दोषास्रमेदोमूत्रान्त्रैः स वृद्धिः सप्तधा गदः ॥ २ ॥
मूत्रान्त्रजावप्यनिलाद्धेतुभेदस्तु केवलम् ।
वातपूर्णदृतिस्पर्शो रूक्षो वातादहेतुरुक् ॥ ३ ॥
पक्वोदुम्बरसंकाशः पित्ताद्दाहोष्मपाकवान् ।
कफाच्छीतो गुरुः स्निग्धः कण्डूमान्कठिनोऽल्परुक् ॥४॥
कृष्णस्फोटावृतः पित्तवृद्धिलिङ्गश्च रक्तजः + ।
कफवन्मेदसा वृद्धिर्मृदुस्तालफलोपमः ॥ ५ ॥
मूत्रधारणशीलस्य मूत्रजः स तु गच्छतः ।
अम्भोभिः पूर्णदृतिवत्क्षोभं याति सरुङ्मृदुः ॥ ६ ॥
मूत्रकृच्छ्रमधः स्याच्च चालयन्फलकोषयोः ।
वातकोपिभिराहारैः शीततोयावगाहनैः ॥ ७ ॥

❋ 'क्रुद्धोऽनूर्ध्वगतिर्वायुः' + 'पित्तजः'

धारणेरणभाराध्वविषमाङ्ग×प्रवर्तनैः ।
क्षोभणैः क्षुभितोऽन्यैश्च क्षुद्रान्त्रावयवं यदा ॥ ८ ॥
पवनो विगुणीकृत्य स्वनिवेशादधो नयेत् ।
कुर्याद्वंक्षणसन्धिस्थो ग्रन्थ्याभं श्वयथुं तदा ॥ ९ ॥
उपेक्ष्यमाणस्य च मुष्कवृद्धि-
माध्मानरुक्स्तंभवतीं स वायुः ।
प्रपीडितोऽन्तः स्वनवान्प्रयाति
प्रध्मापयन्नेति पुनश्च मुक्तः ॥१०॥
(क्षुद्रान्त्रावयवाच्छ्लेष्मा मुष्कयोर्वातसञ्चयात् ।
अण्डवृद्धिरसाध्योऽयं वातवृद्धिसमाकृतिः ॥ १ ॥
अत्यभिष्यन्दिगुर्वन्नसेवनान्निचयं गतः ।
करोति ग्रन्थिवच्छोथं दोषो वंक्षणसन्धिषु ॥ २ ॥
ज्वरशूलाङ्गदाहाढ्यं तं वर्ध्ममिति निर्दिशेत् ।
यस्य पूर्वं फिरङ्गाख्यो रोगो भूत्वा प्रशाम्यति ॥ ३ ॥
तस्य जन्तोर्वर्ध्मरोग इत्युक्तं सुश्रुतादिभिः ।
तथोष्णवातजुष्टस्य मेढ्रव्रणयुतस्य च ।
तस्य पुंसो वर्ध्मरोगं प्रवदन्ति भिषग्वराः ॥ ४ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने वृद्धिनिदानं समाप्तम् ॥३७॥

अथ गलगण्डगण्डमालापचीग्रन्थ्यर्बुद निदानम् ।

निबद्धः श्वयथुर्यस्य मुष्कवल्लम्बते गले ।
महान्वा यदि वा ह्रस्वो गलगण्डं तमादिशेत् ॥ १ ॥
वातः कफश्चापि गले प्रदुष्टो
मन्ये च संश्रित्य तथैव मेदः ।

× 'विषमार्ग'

कुर्वन्ति गण्डं क्रमशः स्वलिङ्गैः ÷
समन्वितं तं गलगण्डमाहुः ॥ २ ॥
तोदान्वितः कृष्णसिरावनद्धः
श्यावोऽरुणो वा पवनात्मकस्तु ।
पारुष्ययुक्तश्चिरवृद्ध्यपाको
यदृच्छया पाकमियात्कदाचित् ॥ ३ ॥
वैरस्यमास्यस्य च तस्य जन्तो-
र्भवेत्तथा तालुगलप्रशोषः ।
स्थिरः सवर्णो गुरुरुग्रकण्डूः
शीतो महांश्चापि कफात्मकस्तु ॥ ४ ॥
चिराभिवृद्धिं भजते चिराद्वा
प्रपच्यते मन्दरुजः कदाचित् ।
माधुर्यमास्यस्य च तस्य जन्तो-
र्भवेत्तथा तालुगलप्रलेपः ॥ ५ ॥
स्निग्धो गुरुः पाण्डुरनिष्टगन्धो
मेदोभवः कण्डुयुतोऽल्परुक् च ।
प्रलम्बतेऽलाबुवदल्पमूलो
देहानुरूपक्षयवृद्धियुक्तः ॥ ६ ॥
स्निग्धास्यता तस्य भवेच्च जन्तो-
र्गलेऽनुशब्दं कुरुते च नित्यम् ।
कृच्छ्राच्छ्वसन्तं मृदुसर्वगात्रं
संवत्सरातीतमरोचकार्तम् ॥ ७ ॥
क्षीणं च वैद्यो गलगण्डयुक्तं
भिन्नस्वरं चापि विवर्जयेच्च ।

÷ 'स्त्रिलिङ्गैः'

कर्कन्धुकोलामलकप्रमाणैः
कक्षांसमन्यागलवंक्षणेषु ॥ ८ ॥
मेदः कफाभ्यां चिरमन्दपाकैः
स्याद्गण्डमाला बहुभिश्च गण्डैः ।
ते ग्रन्थयः केचिदवाप्तपाकाः
स्रवन्ति नश्यन्ति भवन्ति चान्ये ॥ ९ ॥
कालानुबन्धं चिरमादधाति
सैवापचीति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
साध्याःस्मृताःपीनसपार्श्वशूल-
कासज्वरच्छर्दियुतास्त्वसाध्याः ।
वातादयो मांसमसृक्प्रदुष्टाः
सन्दूष्य मेदश्च तथा सिराश्च ।
वृत्तोन्नतं विग्रथितं च शोथं
कुर्वन्त्यतो ग्रन्थिरिति प्रदिष्टः ॥११॥
आयम्यते वृश्च्यति तुद्यते च
प्रत्यस्यते मथ्यति भिद्यते च ।
कृष्णो मृदुर्वस्तिरिवाततश्च
भिन्नः स्रवेच्चानिलजोऽस्रमच्छम् ॥१२॥
दन्दह्यते धूप्यति वृश्च्यते च
पापच्यते प्रज्वलतीव चापि ।
रक्तः सपीतोऽप्यथवाऽपि पित्ता-
द्भिन्नः स्रवेदुष्णमतीव चास्रम् ॥१३॥
शीतोऽविवर्णोऽल्परुजोऽतिकण्डुः
पाषाणवत्संहननोपपन्नः ।

चिराभिवृद्धश्च कफप्रकोपा-
द्भिन्नःस्रवेच्छुक्लघनं च पूयम् ॥१४॥
शरीरवृद्धिक्षयवृद्धिहानिः
स्निग्धो महान्कण्डुयुतोऽरुजश्च ।
मेदःकृतो गच्छति चात्र भिन्ने
पिण्याकसर्पिःप्रतिमं तु मेदः ॥१५॥
व्यायामजातैरबलस्य तैस्तै-
राक्षिप्य वायस्तु सिराप्रतानम् ।
संकुच्य संपिण्ड्य विशोष्य चापि
ग्रन्थिं करोत्युन्नतमाशु वृत्तम् ॥१६॥
ग्रन्थिः सिराजः स तु कृच्छ्रसाध्यो
भवेद्यदि स्यात्सरुजश्चलश्च ।
स चारुजश्चाप्यचलो महांश्च
मर्मोत्थितश्चापि विवर्जनीयः ॥१७॥
गात्रप्रदेशे क्वचिदेव दोषाः
संमूर्च्छिता मांसमसृक्प्रदूष्य ।
वृत्तं स्थिरं मन्दरुजं महान्त-
मनल्पमूलं चिरवृद्ध्यपाकम् ॥१८॥
कुर्वन्ति मांसोच्छ्रयमत्यगाधं
तदर्बुदं शास्त्रविदो वदन्ति ।
वातेन पित्तेन कफेन चापि
रक्तेन मांसेन च मेदसा वा ॥१९॥
तज्जायते तस्य च लक्षणानि
ग्रन्थेः समानानि सदा भवन्ति ।

दोषः प्रदुष्टो रुधिरं सिराश्च
संकुच्य संपिड्य ततस्त्वपाकम् ॥२०॥
सास्रावमुन्नह्यति मांसपिण्डं
मांसांकुरैराचितमाशुवृद्धम् ।
करोत्यजस्रं रुधिरप्रवृत्ति-
मसाध्यमेतद्रुधिरात्मकं तु ॥२१॥
रक्तक्षयोपद्रवपीडितत्वात्
पाण्डुर्भवेदर्बुदपीडितस्तु ।
मुष्टिप्रहारादिभिरर्दितेऽङ्गे
मांसंप्रदुष्टं जनयेद्धि शोथम् ॥२२॥
अवेदनं स्निग्धमनन्यवर्ण-
मपाकमश्मोपममप्रचाल्यम् ।
प्रदुष्टमांसस्य नरस्य गाढ-
मेतद्भवेन्मांसपरायणस्य ॥२३॥
मांसार्बुदं त्वेतदसाध्यमुक्तं,
साध्येष्वपीमानि तु वर्जयेच्च ।
संप्रस्रुतं मर्मणि यच्च जातं
स्रोतःसु वा यच्च भवेदचाल्यम् ॥२४॥
यज्जायतेऽन्यत्खलु पूर्वजाते
ज्ञेयं तदध्यर्बुदमर्बुदज्ञैः ।
यद्द्वन्द्वजातं युगपत्क्रमाद्वा
द्विरर्बुदं तच्च भवेदसाध्यम् ॥२५॥
न पाकमायान्ति कफाधिकत्वा-
न्मेदोबहुत्वाच्च विशेषतस्तु ।

दोषस्थिरत्वाद् ग्रथनाच्च तेषां
सर्वार्बुदान्येव निसर्गतस्तु ॥२६॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने गलगण्ड मालापचीग्रन्थ्यर्बुदनिदानं समाप्तम् ॥३८॥

अथ श्लीपदनिदानम् ।

यः सज्वरो वंक्षणजो भृशार्तिः
शोथो नृणां पादगतः क्रमेण ।
तच्छ्लीपदं स्यात्करकर्णनेत्र-
शिश्नौष्ठनासास्वपि केचिदाहुः ॥ १ ॥

वातजं कृष्णरूक्षं च स्फुटितं तीव्रवेदनम् ।
अनिमित्तरुजं तस्य बहुशो ज्वर एव च ॥ २ ॥

पित्तजं पीतसंकाशं दाहज्वरयुतं मृदु ।
श्लैष्मिकं स्निग्धवर्णं च श्वेतं पाण्डु गुरु स्थिरम् ॥ ३ ॥

वल्मीकमिव सञ्जातं कण्टकैरुपचीयते ।
अब्दात्मकं महत्तच्च वर्जनीयं विशेषतः ॥ ४ ॥

त्रीण्यप्येतानि जानीयाच्छ्लीपदानि कफोच्छ्रयात् ।
गुरुत्वं च महत्त्वं च यस्मान्नास्ति कफं विना ॥ ५ ॥

पुराणोदकभूयिष्ठाः सर्वर्तुषु च शीतलाः ।
ये देशास्तेषु जायन्ते श्लीपदानि विशेषतः ॥ ६ ॥

यच्छ्लेष्मलाहारविहारजातं
पुंसःप्रकृत्याऽपि कफात्मकस्य ।
सास्रावमत्युन्नतसर्वलिङ्गं
सकण्डुरं श्लेष्मयुतं विवर्ज्यम् ॥ ७ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने श्लीपदनिदानं समाप्तम् ॥३९॥

अथ विद्रधिनिदानम् ।

त्वग्रक्तमांसमेदांसि संदूष्यास्थिसमाश्रिताः ।
दोषाः शोथं शनैर्घोरं जनयन्त्युच्छ्रिता भृशम् ॥ १ ॥
महामूलं रुजावन्तं वृत्तं वाऽप्यथवाऽऽयतम् ।
स विद्रधिरिति ख्यातो विज्ञेयः षड्विधश्च सः ॥ २ ॥
पृथग्दोषैः समस्तैश्च क्षतेनाप्यसृजा तथा ।
षण्णामपि हि तेषां तु लक्षणं संप्रवक्ष्यते ॥ ३ ॥
कृष्णोऽरुणो वा विषमो भृशमत्यर्थवेदनः ।
चित्रोत्थानप्रपाकश्च विद्रधिर्वातसंभवः ॥ ४ ॥
पक्कोदुम्बरसंकाशः श्यावो वा ज्वरदाहवान् ।
क्षिप्रोत्थानप्रपाकश्च विद्रधिः पित्तसंभवः ॥ ५ ॥
शरावसदृशः पाण्डुः शीतः स्निग्धोऽल्पवेदनः ।
चिरोत्थानप्रपाकश्च विद्रधिः कफसंभवः ॥ ६ ॥
तनुपीतसिताश्चैषामास्रावाः क्रमशः स्मृताः ।
नानावर्णरुजास्रावो घाटालो विषमो महान् ॥ ७ ॥
विषमं पच्यते चापि विद्रधिः सान्निपातिकः ।
तैस्तैर्भावैरभिहते क्षते वाऽपथ्यकारिणः ॥ ८ ॥
क्षतोष्मा वायुविसृतः सरक्तं पित्तमीरयेत् ।
ज्वरस्तृष्णा च दाहश्च जायते तस्य देहिनः ॥ ९ ॥
आगन्तुर्विद्रधिर्ज्ञेयः पित्तविद्रधिलक्षणः ।
कृष्णस्फोटावृतः श्यावस्तीव्रदाहरुजाकरः ॥१०॥
पित्तविद्रधिलिङ्गस्तु रक्तविद्रधिरुच्यते ।
पृथक् संभूय वा दोषाः कुपिता गुल्मरूपिणम् ॥११॥
वल्मीकवत्समुन्नद्धमंतः कुर्वन्ति विद्रधिम् ।

गुदे बस्तिमुखे नाभ्यां कुक्षौ वंक्षणयोस्तथा ॥१२॥
वृक्कयोः प्लीह्नि यकृति हृदि वा क्लोम्नि वाऽप्यथ ।
तेषामुक्तानि लिङ्गानि बाह्यविद्रधिलक्षणैः ॥१३॥
अधिष्ठानविशेषेण लिङ्गं शृणु विशेषतः ।
गुदे वातनिरोधश्च बस्तौ कृच्छ्राल्पमूत्रता ॥१४॥
नाभ्यां हिक्का तथाऽऽटोपः कुक्षौ मारुतकोपनम् ।
कटिपृष्ठग्रहस्तीव्रो वंक्षणोत्थे तु विद्रधौ ॥१५॥
वृक्कयोः पार्श्वसंकोचः प्लीह्न्युच्छ्वासावरोधनम् ।
सर्वाङ्गप्रग्रहस्तीव्रो हृदि कासश्च* जायते ।
श्वासो यकृति हिक्का च क्लोम्नि पेपीयते पयः ॥१६॥
नाभेरुपरिजाः पक्वा यान्त्यूर्ध्वमितरे त्वधः ।
अधः स्रुतेषु जीवेत्तु स्रुतेषूर्ध्वं न जीवति ॥१७॥
हृन्नाभिबस्तिवर्ज्या ये तेषु भिन्नेषु बाह्यतः ।
जीवेत्कदाचित्पुरुषो नेतरेषु कदाचन ॥१८॥
साध्या विद्रधयः पञ्च विवर्ज्यः सान्निपातिकः ।
आमपक्वविदग्धत्वं तेषां शोथवदादिशेत् ॥१९॥
आध्मातं बद्धनिष्यन्दं छर्दिहिक्कातृषान्वितम् ।
रुजा श्वाससमायुक्तं विद्रधिर्नाशयेन्नरम् ॥२०॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने विद्रधिनिदानं समाप्तम् ॥४०॥

अथ व्रणशोथनिदानम् ।

एकदेशोत्थितः शोथो व्रणानां पूर्वलक्षणम् ।
षड्विधः स्यात्पृथक्सर्वरक्तागन्तुनिमित्तजः ॥ १ ॥

* 'कम्पश्च' इतिपाठः

शोथाः षडेते विज्ञेयाः प्रागुक्तैः शोथलक्षणैः ।
विशेषः कथ्यते चैषां पक्वापक्वादिनिश्चये ॥ २ ॥
विषमं पच्यते वातात्पित्तोत्थश्चाचिराच्चिरम् ।
कफजः पित्तवच्छोथो रक्तागंतुसमुद्भवः ॥ ३ ॥
मन्दोष्मताऽल्पशोथत्वं काठिन्यं त्वक्सवर्णता ।
मन्दवेदनता चैतच्छोथानामामलक्षणम् ॥ ४ ॥
दह्यते दहनेनेव क्षारेणेव च पच्यते ।
पिपीलिकागणेनेव दश्यते छिद्यते तथा ॥ ५ ॥
भिद्यते चैव शस्त्रेण दंडेनेव च ताड्यते ।
पीड्यते पाणिनेवान्तः सूचीभिरिव तुद्यते ॥ ६ ॥
सोषाचोषो विवर्णः स्यादंगुल्येवावघट्यते ।
आसने शयने स्थाने शांतिं वृश्चिकविद्धवत् ॥ ७ ॥
न गच्छेदाततः शोथो भवेदाध्मातबस्तिवत् ।
ज्वरस्तृष्णाऽरुचिश्चैव पच्यमानस्य लक्षणम् ॥ ८ ॥
वेदनोपशमः शोथोऽलोहितोऽल्पो न चोन्नतः ।
प्रादुर्भावो वलीनां च तोदः कण्डूर्मुहुर्मुहुः ॥ ९ ॥
उपद्रवाणां प्रशमो निम्नता स्फुटनं त्वचाम् ।
बस्ताविवाम्बुसंचारः स्याच्छोथेऽङ्गुलिपीडिते ॥१०॥
पूयस्य पीडयत्येकमन्तमन्ते च पीडिते ।
भक्ताकांक्षा भवेच्चैतच्छोथानां पक्वलक्षणम् ॥११॥
नर्त्तेऽनिलाद्रुङ्न विना च पित्तं
पाकः कफं चापि विना न पूयः ।
तस्माद्धि सर्वान् परिपाककाले
पचन्ति शोथांस्त्रय एव दोषाः ॥१२॥

कक्षं समासाद्य यथैव वह्नि-
वार्य्वीरितः संदहति प्रसह्य ।
तथैव पूयोह्यविनिःसृतो हि
मांसं सिराः स्नायु च खादतीह ॥१३॥
आमं विदह्यमानं च सम्यक् पक्वं च यो भिषक् ।
जानीयात् स भवेद्वैद्यः शेषास्तस्करवृत्तयः ॥१४॥
यश्छिनत्त्याममज्ञानाद्यो वा पक्वमुपेक्षते ।
श्वपचाविव मन्तव्यौ तावनिश्चितकारिणौ ॥१५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने व्रणशोथ-
निदानं समाप्तम् ॥४१॥

अथ शारीरव्रणनिदानम् ।

द्विधा व्रणः स विज्ञेयः शारीरागन्तुभेदतः ।
दोषैराद्यस्तयोरन्यः शस्त्रादिक्षतसंभवः ॥ १ ॥
स्तब्धः कठिनसंस्पर्शो मन्दस्रावो महारुजः ।
तुद्यते स्फुरति श्यावो व्रणो मारुतसंभवः ॥ २ ॥
तृष्णामोहज्वरक्लेददाहदुष्ट्यवदारणैः ।
व्रणं पित्तकृतं विद्याद्गन्धैः स्रावैश्च पूतिकैः ॥ ३ ॥
बहुपिच्छो गुरुः स्निग्धः स्तिमितो मन्दवेदनः ।
पाण्डुवर्णोऽल्पसंक्लेदश्चिरपाकी कफव्रणः ॥ ४ ॥
रक्तो रक्तस्रुती रक्तात् द्वित्रिजः स्यात्तदन्वयैः ।
त्वङ्मांसजः सुखे देशे तरुणस्यानुपद्रवः ॥ ५ ॥
धीमतोऽभिनवः काले सुखे साध्यः सुखं व्रणः ।
गुणैरन्यतमैर्हीनस्ततः कृच्छ्रो व्रणः स्मृतः ॥ ६ ॥

सवर्विहीनो विज्ञेयस्त्वसाध्यो भूयुपद्रव❀ ।
पूतिः पूयातिदुष्टासृग्स्राव्युत्संगी चिरस्थितिः ॥ ७ ॥
दुष्टो व्रणोऽतिगन्धादिः शुद्धलिङ्गविपर्ययः ।
जिह्वातलाभोऽतिमृदुः श्लक्ष्णः स्निग्धोऽल्पवेदनः॥ ८ ॥
सुव्यवस्थो निरास्रावः शुद्धो व्रण इति स्मृतः ।
कपोतवर्णप्रतिमा यस्यान्ताः क्लेदवर्जिताः ॥ ९ ॥
स्थिराश्च पिडकावन्तो रोहतीति तमादिशेत् ।
रूढवर्त्मानमग्रंथिमशूनमरुजं व्रणम् ॥१०॥
त्वक्सवर्णं समतलं सम्यग्रूढं विनिर्दिशेत् ।
कुष्ठिनां विषजुष्टानां शोषिणां मधुमेहिनाम् ॥११॥
व्रणाः कृच्छ्रेण सिध्यन्ति येषां चापि व्रणे व्रणाः ।
वसां मेदोऽथ मज्जानं मस्तुलुङ्गं च यः स्रवेत् ॥१२॥
आगन्तुजो व्रणः सिध्येन्न सिध्येद्दोषसंभवः ।
मद्यागुर्वाज्यसुमनः पद्मचन्दनचम्पकैः ॥१३॥
सगन्धा दिव्यगन्धाश्च मुमूर्षूणां व्रणाः स्मृताः ।
ये च मर्मस्वसंभूता भवंत्यत्यर्थवेदनाः ॥१४॥
दह्यन्ते चान्तरत्यर्थं बहिः शीताश्च ये व्रणाः ।
दह्यन्ते बहिरत्यर्थं भवंत्यंतश्च शीतलाः ॥१५॥
प्राणमांसक्षयश्वासकासारोचकपीडिताः ।
प्रवृद्धपूयरुधिरा व्रणा येषां च मर्मसु ॥१६॥
क्रियाभिः सम्यगारब्धा न सिध्यन्ति च ये व्रणाः ।
वर्जयेदपि तान्वैद्यः संरक्षन्नात्मनो यशः ॥१७॥

❀ "सोऽसाध्यो निरुपक्रमः"

(व्रणे श्वयथुरायासात्स च रागश्च जागरात् ।
तौ च रुक् च दिवास्वापात्ताश्च मृत्युश्च मैथुनात् ॥१॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने शारीरव्रण-
निदानं समाप्तम् ॥४२॥

अथ सद्योव्रणनिदानम् ।

नानाधारमुखैः शस्त्रैर्नानास्थाननिपातितैः ।
भवंति नानाकृतयो व्रणास्तांस्तान्निबोध मे ॥ १ ॥
छिन्नं भिन्नं तथा विद्धं क्षतं पिच्चितमेव च ।
घृष्टमाहुस्तथा षष्ठं तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥ २ ॥
तिर्यक्छिन्न ऋजुर्वाऽपि यो व्रणस्त्वायतो भवेत् ।
गात्रस्य पातनं तच्च छिन्नमित्यभिधीयते ॥ ३ ॥
शक्तिदन्तेषुखङ्गाग्रविषाणैराशयो हतः ।
यत्किञ्चित्प्रस्रवेत्तद्धि भिन्नलक्षणमुच्यते ॥ ४ ॥
स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च ।
हृदुण्डुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते ॥ ५ ॥
तस्मिन्भिन्ने रक्तपूर्णे ज्वरो दाहश्च जायते ।
मूत्रमार्गगुदास्येभ्यो रक्तं घ्राणाच्च गच्छति ॥ ६ ॥
मूर्च्छा श्वासस्तृषाऽऽध्मानमभक्तच्छन्द एव च ।
विण्मूत्रवातसङ्गश्च स्वेदास्रावोऽक्षिरक्तता ॥ ७ ॥
लोहगंधित्वमास्यस्य गात्रदौर्गन्ध्यमेव च ।
हृच्छूलं पार्श्वयोश्चापि विशेषं चात्र मे शृणु ॥ ८ ॥
आमाशयस्थे रुधिरे रुधिरं छर्दयत्यपि ।
आध्मानमतिमात्रं च शूलं च भृशदारुणम् ॥ ९ ॥

पक्वाशयगते चापि रुजा गौरवमेव च ।
अधःकाये विशेषेण शीतता च भवेदिह ॥१०॥
सूक्ष्मास्यशल्याभिहतं यदङ्गं त्वाशयं विना ।
उत्तुंडितं निर्गतं वा तद्विद्धमिति निर्दिशेत् ॥११॥
नातिच्छिन्नं नातिभिन्नमुभयोर्लक्षणान्वितम् ।
विषमं व्रणमंगे यत्तत्क्षतं त्वभिधीयते ॥१२॥
प्रहारपीडनाभ्यां तु यदङ्गं पृथुतां गतम् ।
सास्थि तत्पिच्चितं विद्यान्मज्जारक्तपरिप्लुतम् ॥१३॥
घर्षणादभिघाताद्वा यदंगं विगतत्वचम् ।
उषास्रावान्वितं तच्च घृष्टमित्यभिधीयते ॥१४॥
श्यावं सशोथं पिडिकाचितं च
मुहुर्मुहुः शोणितवाहिनं च ।
मृदूद्गतं बुद्बुदतुल्यमांसं
व्रणं सशल्यं सरुजं वदन्ति ॥१५॥
त्वचोऽतीत्य सिरादीनि भित्त्वा वा परिहृत्य वा ।
कोष्ठे प्रतिष्ठितं शल्यं कुर्यादुक्तानुपद्रवान् ॥१६॥
तत्रांतर्लोहितं पांडुशीतपादकराननम् ।
शीतोच्छ्वासं रक्तनेत्रमानद्धं च विवर्जयेत् ॥१७॥
भ्रमः प्रलापः प्रतनं प्रमोहो
विचेष्टनं ग्लानिरथोष्णता च ।
स्रस्तांगता मूर्च्छनमूर्ध्ववात-
स्तीव्रा रुजा वातकृताश्च तास्ताः ॥१८॥
मांसोदकाभं रुधिरं च गच्छेत्
सर्वेन्द्रियार्थोपरमस्तथैव।

दशार्द्धसंख्येष्वथ विक्षतेषु
सामान्यतो मर्मसु लिङ्गमुक्तम् ॥१९॥
सुरेन्द्रगोपप्रतिमं प्रभूतं
रक्तंस्रवेत्तत्क्षतजश्च वायुः ।
करोति रोगान्विविधान्यथोक्तान्-
सिरासु विद्धास्त्वथ वा क्षतासु ॥२०॥
कौब्ज्यं शरीरावयवावसादः
क्रियास्वशक्तिस्तुमुला रुजश्च ।
चिराद्व्रणो रोहति यस्य चापि
तं स्नायुविद्धं पुरुषं व्यवस्येत् ॥२१॥
शोषाभिवृद्धिस्तुमुला रुजश्च
बलक्षयः सर्वत एव शोथः ।
क्षतेषु संधिष्वचलाचलेषु
स्यात्सर्वकर्मोपरमश्च लिङ्गम् ॥२२॥
घोरा रुजो यस्य निशादिनेषु
सर्वास्ववस्थासु च नैति शांतिम् ।
भिषग्विपश्चिद्विदितार्थसूत्र-
स्तमस्थिविद्धं पुरुषं व्यवस्येत् ॥२३॥
यथास्वमेतानि विभावयेच्च
लिङ्गानि मर्मस्वभिताडितेषु ।
पांडुर्विवर्णः स्पृशितं न वेत्ति
योमांसमर्मण्यभिपीड़ितः स्यात् ॥२४॥
विसर्पः पक्षघातश्च शिरास्तम्भोऽपतानकः ।
मोहोन्मादव्रणरुजो ज्वरस्तृष्णा हनुग्रहः ॥२५॥

कासश्छर्दिरतीसारो हिक्का श्वासः सवेपथुः ।
षोडशोपद्रवाः प्रोक्ता व्रणानां व्रणचिन्तकैः ॥२६॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने सद्योव्रण-
निदानं समाप्तम् ॥४३॥

अथ भग्ननिदानम् ।

भग्नं समासाद्विविधं हुताश
काण्डे च संधौ च हि तत्र संधौ ।
उत्पिष्टविश्लिष्टविवर्तितं च
तिर्यग्गतं क्षिप्तमधश्च षट्* च ॥ १ ॥

प्रसारणाकुंचनवर्तनोग्रा
रुक्स्पर्शविद्वेषणमेतदुक्तम् ।
सामान्यतः सन्धिगतस्य लिङ्ग-
-मुत्पिष्टसन्धेः श्वयथुः समन्तात् ॥ २ ॥

विशेषतो रात्रिभवा रुजा च
विश्लिष्टजे तौ च रुजा च नित्यम् ।
विवर्तिते पार्श्वरुजश्च तीव्रा-
स्तिर्यग्गते तीव्ररुजो भवन्ति ॥ ३ ॥

क्षिप्तेऽति शूलं विषमत्वमस्थ्नोः
क्षिप्ते त्वधो रुग्विघटश्च सन्धेः ।
काण्डे त्वतः कर्कटकाश्वकर्ण-
विचूर्णितं पिच्चितमस्थिच्छल्लिका ॥ ४ ॥

* 'षोढा'

काण्डेषु भग्नं ह्यतिपातितं च
मज्जागतं च स्फुटितं च वक्रम्।
छिन्नं द्विधा द्वादशधापि काण्डे
स्रस्तांगता शोथरुजातिवृद्धिः ॥ ५ ॥
सम्पीड्यमाने भवतीह शब्दः
स्पर्शासहं स्पंदनतोदशूलाः।
सर्वास्ववस्थासु न शर्मलाभो
भग्नस्य काण्डे खलु चिह्नमेतत् ॥ ६ ॥
भग्नं तु कांडे बहुधा प्रयाति
समासतो नामभिरेव तुल्यम् ॥ ७ ॥
अल्पाशिनोऽनात्मवतो जन्तोर्वातात्मकस्य च।
उपद्रवैर्वा जुष्टस्य भग्नं कृच्छ्रेण सिध्यति ॥ ८ ॥
भिन्नं कपालं कट्यां तु संधिमुक्तं तथा च्युतम्।
जघनं प्रतिपिष्टं च वर्जयेद्धि विचक्षणः ॥ ९ ॥
असंश्लिष्टकपालं च ललाटे चूर्णितं च यत्।
भग्नं स्तनान्तरे पृष्ठे शंखे मूर्ध्नि च वर्जयेत् ॥१०॥
सम्यक्संधितमप्यस्थि दुर्निक्षेपनिबंधनात्।
संक्षोभाद्वाऽपि यद्गच्छेद्विक्रियां तच्च वर्जयेत् ॥११॥
तरुणास्थीनि नम्यन्ते भिद्यन्ते नलकानि च।
कपालानि विभज्यन्ते स्फुटन्ति रुचकानि च ॥१२॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने भग्ननिदानं समाप्तम् ॥४४॥

अथ नाडीव्रण निदानम् ।

य: शोथमाममतिपक्वमुपेक्षतेऽज्ञो
 यो वा व्रणं प्रचुरपूयमसाधुवृत्तः ।
अभ्यन्तरं प्रविशति प्रविदार्य तस्य
 स्थानानि पूर्वविहितानि ततः सपूयः ॥ १ ॥

तस्यातिमात्रगमनाद्गतिरिष्यते तु
 नाडीव यद्वहति तेन मता तु नाडी ।
दोषैस्त्रिभिर्भवति सा पृथगेकशश्च
 संमूर्च्छितैरपि च शल्यनिमित्ततोऽन्या ॥ २ ॥

तत्रानिलात्परुषसूक्ष्ममुखी सशूला
 फेनानुविद्धमधिकं स्रवति क्षपासु ।
पित्तातृषाज्वरकरी परिदाहयुक्ता
 पीतं स्रवत्यधिकमुष्णमहःसु चापि ॥ ३ ॥

ज्ञेया कफाद्बहुघनार्जुनपिच्छिलास्रा
 स्तब्धा सकंडुररुजा रजनीप्रवृद्धा ।
दाहज्वरश्वसनमूर्च्छनवक्त्रशोषा
 यस्यांभवन्ति भिहितानि च लक्षणानि ॥ ४ ॥

तामादिशेत्पवनपित्तकफप्रकोपाद्
 घोरामसुक्षयकरीमिव कालरात्रिम् ।
नष्टं कथंचिदनुमार्गमुदीरितेषु
 स्थानेषु शल्यमचिरेण गतिं करोति ॥ ५ ॥

सा फेनिलं मथितमुष्णमसृग्विमिश्रं
 स्रावंकरोति सहसा सरुजा च नित्यम् ।

नाडी त्रिदोषप्रभवा न सिध्ये-
च्छेषाश्चतस्रः खलु यत्नसाध्याः ॥ ६ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने नाडीव्रण
निदानं समाप्तम् ॥४५॥

अथ भगन्दरनिदानम् ।

गुदस्य द्व्यंगुले क्षेत्रेपार्श्वतः पिड़िकाऽऽर्तिकृत् ।
भिन्ना भगन्दरो ज्ञेयः स च पंचविधो मतः ॥ १ ॥
(कटीकपालनिस्तोददाहकण्डूरुजादयः ।
भवन्ति पूर्वरूपाणि भविष्यति भगन्दरे ॥ १ ॥)
कषायरूक्षैस्त्वतिकोपितोऽनिल-
स्त्वपानदेशे पिडिकां करोति याम् ।
उपेक्षणात्पाकमुपैति दारुणं
रुजा च भिन्नाऽरुणफेनवाहिनी ॥ २ ॥

तत्रागमो मूत्रपुरीषरेतसां
व्रणैरनेकैः शतोपोनकं वदेत् ।
प्रकोपणैः पित्तमतिप्रकोपितं
करोति रक्तां पिडकां गुदाश्रिताम् ॥ ३ ॥
तदाऽऽशुपाकाहिमपूतिवाहिनीं
भगंदरं तूष्ट्रशिरोधरं वदेत् ॥ ४ ॥

कण्डूयनो घनस्रावी कठिनो मंदवेदनः ।
श्वेतावभासः कफजः परिस्रावी भगंदरः ॥ ५ ॥

बहुवर्णरुजास्रावाः पिडका गोस्तनोपमाः ।
शंबूकावर्तवन्नाड़ी शंबूकावर्तको मतः ॥ ६ ॥

क्षताद्गतिः पायुगता विवर्धते
ह्युपेक्षणात्स्युः क्रिमयो विदार्यते ।
प्रकुर्वते मार्गमनेकधामुखै
र्व्रणैस्तदुन्मार्गिभगंदरं वदेत् ॥ ७ ॥

घोराः साधयितुं दुःखाः सर्वे एव भगंदराः ।
तेष्वसाध्यस्त्रिदोषोत्थः क्षतजश्च विशेषतः ॥ ८ ॥
वातमूत्रपुरीषाणि क्रिमयः शुक्रमेव च ।
भगंदरात्स्रवन्तस्तु नाशयन्ति तमातुरम् ॥ ९ ॥

अथोपदंशनिदानम् ।

हस्ताभिघातान्नखदन्तपाता-
दधावनाद्त्यतिसेवनाद्वा ।
योनिप्रदोषाच्च भवंति शिश्ने
पंचोपदंशा विविधापचारैः ॥ १ ॥

सतोदभेदैः स्फुरणैः सकृष्णैः
स्फोटैर्व्यवस्येत्पवनोपदशम् ।
पीतैर्बहुक्लेदयुतैः सदाहैः,
पित्तेन रक्तात्पिशितावभासैः ॥ २ ॥

स्फोटैः सकृष्णै रुधिरं स्रवन्तं,
रक्तात्मकं पित्तसमानलिङ्गम् ।
सकण्डुरैः शोथयुतैर्महद्भिः,
शुक्लैर्घनैः स्रावयुतैः कफेन ॥ ३ ।
नानाविधस्रावरुजोपपन्न-
मसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम् ।

विशीर्णमांसं क्रिमिभिः प्रजग्धं
मुष्कावशेषं परिवर्जयेच्च ॥ ४ ॥
संजातमात्रे न करोति मूढः
क्रियां नरो यो विषये प्रसक्तः ।
कालेन शोथक्रिमिदाहपाकै-
र्विशीर्णशिश्नो म्रियते स तेन ॥ ५ ॥

अंकुरैरिव सञ्जातैरुपर्युपरि संस्थितैः ।
क्रमेण जायते वर्तिस्ताम्रचूडशिखोपमा ॥ ६ ॥
कोषस्याभ्यन्तरे संधौ सर्वसंधिगताऽपि वा ।
(सवेदना पिच्छिला च दुश्चिकित्स्या त्रिदोषजा ।)
लिङ्गवर्तिरभिख्याता लिङ्गार्श इति चापरे ॥ ७ ॥
(मेढ्रसन्धौ व्रणाः केचित्केचित्सर्वाश्रयास्तथा ।
कुन्तस्थाकृतयः केचित्केचित्पद्मदलोपमाः ।
रुजादाहार्तिबहुलाः कृष्णास्तोदसमन्विताः ।
शीघ्रं केचिद्विसर्पन्ति शनैः केचित्तथाऽपरे ।
स्त्रीणां पुंसां च जायंते उपदंशाः सुदारुणाः ।

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने उपदंशनिदानं समाप्तम् ॥४७॥

अथ शूकदोषनिदानम् ।

अक्रमाच्छेफसो वृद्धिं योऽभिवाञ्छति मूढधीः ।
व्याधयस्तस्य जायन्ते दश चाष्टौ च शूकजाः ॥ १ ॥
गौरसर्षपसंस्थाना शूकदुर्भुग्नहेतुका ।
पिडका श्लेष्मवाताभ्यां ज्ञेया सर्षपिका तु सा ॥ २ ॥

कठिना विषमैर्भुग्नैर्वायुनाऽष्ठीलिका भवेत् ।
शूकैर्यत्पूरितं शश्वद्ग्रथितं नाम तत्कफात् ॥ ३ ॥
कुंभिका रक्तपित्तोत्था जांबवास्थिनिभाऽशुभा ।
तुल्यजां त्वलजीं विद्यात्तथा प्रोक्तां विचक्षणैः ॥ ४ ॥
मृदितं पीडितं यच्च संरब्धं वातकोपतः ।
पाणिभ्यां भृशसंमूढे संमूढपिडका भवेत् ॥ ५ ॥
दीर्घा बह्व्यश्च पिडका दीर्यन्ते मध्यतस्तु याः ।
सोऽधिमंथः कफासृग्भ्यां वेदनारोमहर्षकृत् ॥ ६ ॥
पिडका पिडकाव्याप्ता पित्तशोणितसंभवा ।
पद्मकर्णिकसंस्थाना ज्ञेया पुष्करिका तु सा ॥ ७ ॥
स्पर्शहानिं तु जनयेच्छोणितं शूकदूषितम् ।
मुद्गमाषोपमा रक्ता रक्तपित्तोद्भवा तु या ॥ ८ ॥
व्याधिरेषोत्तमा नाम शूकाजीर्णनिमित्तजा ।
छिद्रैरणुमुखैर्लिंगं चितं यस्य समंततः ॥ ९ ॥
वातशोणितजो व्याधिः स ज्ञेयः शतपोनकः ।
वातपित्तकृतो ज्ञेयस्त्वक्पाको ज्वरदाहकृत् ॥ १० ॥
कृष्णैः स्फोटैः सरक्ताभिः पिडकाभिर्निपीडितम् ।
यस्य वास्तुरुजश्चोग्रा ज्ञेयं तच्छोणितार्बुदम् ॥ ११ ॥
मांसदोषेण जानीयादर्बुदं मांससम्भवम् ।
शीर्यन्ते यस्य मांसानि यस्य सर्वाश्च वेदनाः ॥ १२ ॥
विद्यात्तं मांसपाकं तु सर्वदोषकृतं भिषक् ।
विद्रधिं सन्निपातेन यथोक्तमिति निर्दिशेत् ॥ १३ ॥
कृष्णानि चित्राण्यथवा शूकानि सविषाणि वा ।
पातितानि पचंत्याशु मेढ्रं निरवशेषतः ॥ १४ ॥

कालानि भूत्वा मांसानि शीर्यन्ते यस्य देहिनः ।
सन्निपातसमुत्थांस्तु तान्विद्यात्तिलकालकान् ।।१५।।

तत्र मांसाबुद यच्च मांसपाकश्च यः स्मृतः ।
विद्रधिश्च न सिध्यंति ये च स्युस्तिलकालकाः ।।१६।।

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने शूकदोषनिदानं समाप्तम् ।।४८।।

अथ कुष्ठनिदानम् ।

विरोधीन्यन्नपानानि द्रवस्निग्धगुरूणि च ।
भजतामागतां छर्दिं वेगांश्चान्यान्प्रतिघ्नताम् ।। १ ।।
व्यायाममतिसन्तापमतिभुक्त्वा निषेविणाम् ।
(शीतोष्णलंघनाहारान्क्रमं मुक्त्वा निषेविणाम् ।)
घर्मश्रमभयार्त्तानां द्रुतं शीतांबुसेविनाम् ।। २ ।।
अजीर्णाध्यशिनां चैव पंचकर्मापचारिणाम् ।
नवान्नदधिमत्स्यातिलवणाम्लनिषेविणाम् ।। ३ ।।
माषमूलकपिष्टान्नतिलक्षीरगुडाशिनाम् ।
व्यवायं चाप्यजीर्णेऽन्ने निद्रां च भजतां दिवा ।। ४ ।।
विप्रान्गुरून्धर्षयतां पापं कर्म च कुर्वताम् ।
वातादयस्त्रयो दुष्टास्त्वग्रक्तं मांसमंबु च ।। ५ ।।
दूषयंति स कुष्ठानां सप्तको द्रव्यसंग्रहः ।
अतः कुष्ठानि जायंते सप्त चैकादशैव च ।। ६ ।।
कुष्ठानि सप्तधा दोषैः पृथग्द्वंद्वैः समागतैः ।
सर्वेष्वपि त्रिदोषेषु व्यपदेशोऽधिकत्वतः ।। ७ ।।
अतिश्लक्ष्णखरस्पर्शस्वेदास्वेदविवर्णताः ।
दाहः कंडूस्त्वचि स्वापस्तोदः कोठोन्नतिर्भ्रमः ।। ८ ।।

व्रणानामधिकं शूलं शीघ्रोत्पत्तिश्चिरस्थितिः ।
रूढानामपि रूक्षत्वं निमित्तेऽल्पेऽतिकोपनम् ॥ ९ ॥
रोमहर्षोऽसृजः कार्ण्यं कुष्ठलक्षणमग्रजम् ।
कृष्णारुणकपालाभं यद्रूक्षं परुषं तनु ॥१०॥
कापालं तोदबहुलं तत्कुष्ठं विषमं स्मृतम् ।
रुग्दाहरागकंडूभिः परीतं रोमपिञ्जरम् ॥११॥
उदुंबरफलाभासं कुष्ठमौदुंबरं वदेत् ।
श्वेतं रक्तं स्थिरं स्त्यानं स्निग्धमुत्सन्नमंडलम् ॥१२॥
कृच्छ्रमन्योन्यसंयुक्तं कुष्ठं मंडलमुच्यते ।
कर्कशं रक्तपर्यन्तमन्तः श्यावं सवेदनम् ॥१३॥
यदृष्यजिह्वसंस्थानमृष्यजिह्वं तदुच्यते ।
सश्वेतं रक्तपर्यन्तं पुण्डरीकदलोपमम् ॥१४॥
सोत्सेधं च सरागं च पुंडरीकं तदुच्यते ।
श्वेतं ताम्रं तनु च यद्रजो घृष्टं विमुंचति ॥१५॥
प्रायश्चोरसि तत्सिध्ममलाबुकुसुमोपमम् ।
यत्काकणंतिकावर्णं सपाकं तीव्रवेदनम् ॥१६॥
त्रिदोषलिङ्गं तत्कुष्ठं काकणं नैव सिध्यति ।
अस्वेदनं महावास्तु यन्मत्स्यशकलोपमम् ॥१७॥
तदेककुष्ठं, चर्माख्यं बहलं हस्तिचर्मवत् ।
श्यावं किणखरस्पर्शं परुषं किटिभं स्मृतम् ॥१८॥
वैपादिकं पाणिपादस्फुटनं तीव्रवेदनम् ।
कण्डूमद्भिः सरागैश्च गण्डैरलसकं चितम् ॥१९॥
सकण्डूरागपिडकं दद्रुमंडलमुद्गतम् ।
रक्तं सशूलं कंडूमत् सस्फोटं यद्गलत्यपि ।

तच्चर्मदलमाख्यातं संस्पर्शासहमुच्यते ॥२०॥
सूक्ष्मा बह्व्यः पिडकाः स्राववत्यः
पामेत्युक्ताः कण्डुमत्यः सदाहाः ।
सैव स्फोटैस्तीव्रदाहैरुपेता
ज्ञेया पाण्योः कच्छुरुग्रा स्फिचोश्च ॥२१॥
स्फोटाः श्यावारुणाभासा विस्फोटाः स्युस्तनुत्वचः ।
रक्तं श्यावं सदाहार्ति शतारुः स्याद्बहुव्रणम् ॥२२॥
सकण्डूः पिडका श्यावा बहुस्रावा विचर्चिका ।
खरं श्यावारुणं रूक्षं वातकुष्ठं सवेदनम् ॥२३॥
पित्तात्प्रक्वथितं* दाहरागस्रावान्वितं मतम् ।
कफात्क्लेदि घनं स्निग्धं सकण्डूशैत्यगौरवम् ॥२४॥
द्विलिंगं द्वंद्वजं कुष्ठं त्रिलिङ्गं सान्निपातिकम् ।
त्वक्स्थे वैवर्ण्यमंगेषु कुष्ठे रौक्ष्यं च जायते ॥२५॥
त्वक्स्वापो रोमहर्षश्च स्वेदस्यातिप्रवर्तनम् ।
कण्डूर्विपूयकश्चैव कुष्ठे शोणितसंश्रिते ॥२६॥
बाहुल्यं वक्त्रशोषश्च कार्कश्यं पिडकोद्गमः ।
तोदः स्फोटः स्थिरत्वं च कुष्ठे मांससमाश्रिते ॥२७॥
कौण्यं गतिक्षयोऽङ्गानां संभेदः क्षतसर्पणम् ।
मेदःस्थानगते लिङ्गं प्रागुक्तानि तथैव च ॥२८॥
नासाभंगोऽक्षिरागश्च क्षतेषु क्रिमिसंभवः ।
स्वरोपघातश्च भवेदस्थिमज्जसमाश्रिते ॥२९॥
दंपत्योः कुष्ठबाहुल्याद्दुष्टशोणितशुक्रयोः ।
यदपत्यं तयोर्जातं ज्ञेयं तदपि कुष्ठितम् ॥३०॥

*पित्तात्प्रकुपितं

साध्यं त्वग्रक्तमांसस्थं वातश्लेष्माधिकं च यत् ।
मेदसि द्वन्द्वजं याप्यं वर्ज्यं मज्जास्थिसंश्रितम् ॥३१॥

कृमितृड्दाहमन्दाग्निसंयुक्तं× यत्त्रिदोषजम् ।
प्रभिन्नं प्रस्रुताङ्गं च रक्तनेत्रं हृतस्वरम् ॥३२॥

पंचकर्मगुणातीतं कुष्ठं हंतीह मानवम् ÷ ।
वातेन कुष्ठं कापालं पित्तेनौदुंबरं कफात् ॥३३॥
मंडलाख्यं विचर्ची च ऋष्याख्यं वातपित्तजम् ।
चर्मैककुष्ठं किटिभं सिध्मालसविपादिकाः ॥३४॥
वातश्लेष्मोद्भवाः श्लेष्मपित्ताद्दद्रुशतारुषी ।
पुण्डरीकं सविस्फोटं पामा चर्मदलं तथा ॥३५॥
सर्वैः स्यात्काकणं पूर्वत्रिकं दद्रु सकाकणम् ।
पुंडरीकर्ष्यजिह्वे च महाकुष्ठानि सप्त तु ॥३७॥
कुष्ठैकसम्भवं श्वित्रं किलासं वारुणं भवेत् ।
निर्दिष्टमपरिस्रावि त्रिधातूद्भवसंश्रयम् ॥३७॥
वाताद्रूक्षारुणं पित्तात्ताम्रं कमलपत्रवत् ।
सदाहं रोमविध्वंसि कफाच्छ्वेतं घनं गुरु ॥३८॥
सकंडुरं क्रमाद्रक्तमांसमेदःसु चादिशेत् ।
वर्णैनैवेदृगुभयं कृच्छ्रं तच्चोत्तरोत्तरम् ॥३९॥
अशुक्लरोमाऽबहुलमसंश्लिष्टमथो नवम् ।
अनग्निदग्धजं साध्यं श्वित्रं वर्ज्यमतोऽन्यथा ॥४०॥

गुह्यपाणितलौष्ठेषु जातमप्यचिरन्तनम् ।
वर्जनीयं विशेषेण किलासं सिद्धिमिच्छता ॥४१॥

× 'कृमिहृल्लास' ÷ 'कुष्ठिनम्'

प्रसंगाद्गात्रसंस्पर्शान्निःश्वासात्सहभोजनात् ।
एकशय्यासनाच्चैव वस्त्रमाल्यानुलेपनात् ॥४२॥
कुष्ठं ज्वरश्च शोषश्च नेत्राभिष्यन्द एव च ।
औपसर्गिकरोगाश्च संक्रामन्ति नरान्नरम् ॥४३॥
(म्रियते यदि कुष्ठेन पुनर्जातस्य तद्भवेत् ।
नातो निन्द्यतरो रोगो यथा कुष्ठं प्रकीर्तितम् ॥१॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने कुष्ठनिदानं समाप्तम् ॥४९॥

अथ शीतपित्तोदर्दकोठनिदानम् ।

शीतमारुतसंस्पर्शात्प्रदुष्टौ कफमारुतौ ।
पित्तेन सह संभूय बहिरन्तर्विसर्पतः ॥ १ ॥

पिपासारुचिहृल्लासदेहसादाङ्गगौरवम्* ।
रक्तलोचनता तेषां पूर्वरूपस्य लक्षणम् ॥ २ ॥

वरटीदष्टसंस्थानः शोथः सञ्जायते बहिः ।
सकण्डूस्तोदबहुलश्छर्दिज्वरविदाहवान् ॥ ३ ॥

उदर्दमिति तं विद्याच्छीतपित्तमथापरे ।
वाताधिकं शीतपित्तमुदर्दस्तु कफाधिकः ॥ ४ ॥

सोत्संगैश्च सरागैश्च कण्डूमद्भिश्च मण्डलैः ।
शैशिरः कफजो व्याधिरुदर्दः इतिकीर्तितः ॥ ५ ॥

असम्यग्वमनोदीर्णपित्तश्लेष्मान्ननिग्रहैः ।
मण्डलानि सकण्डूनि रागवन्ति बहूनि च ।

---

* 'मोहसादाङ्ग गौरवम्'

उत्कोठः सानुबन्धश्च कोठ इत्यभिधीयते ॥ ६ ॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने शीतपित्तोदर्द-
कोठनिदानं समाप्तम् ॥५०॥

अथाम्लपित्तनिदानम्

विरुद्धदुष्टाम्लविदाहिपित्त-
प्रकोपिपानान्नभुजो विदग्धम् ।
पित्तं स्वहेतूपचितं पुरा यत्
तदम्लपित्तं प्रवदन्ति सन्तः ॥ १ ॥
अविपाकक्लमोत्क्लेशतिक्ताम्लोद्गारगौरवैः + ।
हृत्कंठदाहारुचिभिश्चाम्लपित्तं वदेद्भिषक् ॥ २ ॥
तृड्दाहमूर्च्छाभ्रममोहकारि
प्रयात्यधो वा विविधप्रकारम् ।
हृल्लासकोठानलसादहर्ष-*
स्वेदांगपीतत्वकरं कदाचित् ॥ ३ ॥
वान्तं हरित्पीतकनीलकृष्ण-
मारक्तरक्ताभमतीव चाम्लम् ।
मांसोदकाभं त्वतिपिच्छिलाच्छं
श्लेष्मानुजातं विविधं रसेन ॥ ४ ॥
भुक्ते विदग्धे त्वथवाऽप्यभुक्ते
करोति तिक्ताम्लवमिं कदाचित् ।

+ 'अविपाकक्लमोत्क्लेदतिक्ताम्लोद्गारगौरवैः'
* 'हृल्लासकोठानलसादकर्षं'

उद्गारमेवंविधमेव कण्ठ
हृत्कुक्षिदाहं शिरसो रुजं च ॥ ५ ॥
करचरणदाहमौष्ण्यं
महतीमरुचिं ज्वरं च कफपित्तम् ।
जनयति कण्डूमण्डलपिडका-
शतनिचितगात्ररोगचयम् ॥ ६ ॥

रोगोऽयमम्लपित्ताख्यो यत्नात्संसाध्यते नवः ।
चिरोत्थितो भवेद्याप्यः कृच्छ्रसाध्यः स कस्यचित् ॥ ७ ॥
सानिलं सानिलकफं सकफं तच्च लक्षयेत् ।
दोषलिङ्गेन मतिमान्भिषङ्मोहकरं हि तत् ॥ ८ ॥
कम्पप्रलापमूर्च्छाचिमिचिमिगात्रावसादशूलानि ।
तमसो दर्शनविभ्रमविमोहहर्षाण्यनिलकोपात् ॥ ९ ॥
कफनिष्ठीवनगौरवजडतारुचिशीतसादवमिलेपाः ।
दहनबलसादकण्डूनिद्राश्चिह्नं कफानुगते ॥१०॥
उभयमिदमेव चिह्नं मारुतकफसम्भवे भवत्यम्ले ।
तिक्ताम्लकटुकोद्गारहृत्कुक्षि कण्ठदाहकृत् ॥११॥
भ्रमो मूर्च्छारुचिश्छर्दिरालस्यं च शिरोरुजा ।
प्रसेको मुखमाधुर्यं श्लेष्मपित्तस्य लक्षणम् ॥१२॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽम्लपित्तनिदानं
समाप्तम् ॥५१॥

अथ विसर्पनिदानम् ।

लवणाम्लकटूष्णादिसंसेवादोषकोपतः ।
विसर्पः सप्तधा ज्ञेयः सर्वतः परिसर्पणात् ॥ १ ॥

पृथक् त्रयस्त्रिभिश्चैको विसर्पो द्वंद्वजास्त्रयः।
वातिकः पैत्तिकश्चैव कफजः सान्निपातिकः ॥ २ ॥
चत्वार एते वीसर्पा वक्ष्यन्ते द्वंद्वजास्त्रयः।
आग्नेयो वातपित्ताभ्यां ग्रन्थ्याख्यः कफवातजः ॥ ३ ॥
यस्तु कर्दमको घोरः स पित्तकफसम्भवः।
रक्तं लसीका त्वङ्मांसं दूष्यं दोषास्त्रयो मलाः ॥ ४ ॥
विसर्पाणां समुत्पत्तौ विज्ञेयाः सप्त धातवः।
तत्र वातात् स वीसर्पो वातज्वरसमव्यथः ॥ ५ ॥
शोथस्फुरणनिस्तोदभेदायासार्तिहर्षवान् ।
पित्ताद् द्रुतगतिः पित्तज्वरलिङ्गोऽतिलोहितः ॥ ६ ॥
कफात्कण्डूयुतः स्निग्धः कफज्वरसमानरुक् ।
सन्निपातसमुत्थश्च सर्वलिङ्गसमन्वितः ॥ ७ ॥
वातपित्ताज्ज्वरच्छर्दिमूर्च्छातीसारतृड्भ्रमैः ।
ग्रन्थिभेदाग्निसदनतमकारोचकैर्युतः❋ ॥ ८ ॥
करोति सर्वमङ्गं च दीप्तांगारावकीर्णवत् ।
यं यं देशं विसर्पश्च विसर्पति भवेत् स सः ॥ ९ ॥
शांतांगारासितो नीलो रक्तो वाऽऽशु च चीयते।
अग्निदग्ध इव स्फोटैः शीघ्रगत्वाद् द्रुतं स च ॥१०॥
मर्मानुसारी वीसर्पः स्याद्वातोऽतिबलस्ततः।
व्यथतेऽङ्गं हरेत्संज्ञां निद्रां च श्वासमीरयेत् ॥११॥
हिक्कां च स गतोऽवस्थामीदृशीं लभते न ना।
कचिच्छ्रमारतिग्रस्तो भूमिशय्यासनादिषु ॥१२॥

❋ "अस्थिभेदाग्निसदन"

चेष्टमानस्ततः क्लिष्टो मनोदेहप्रमोहवान् ।
दुःप्रबोधोऽश्नुते निद्रां सोऽग्निवीसर्प उच्यते ॥१३॥
कफेन रुद्धः पवनो भित्त्वा तं बहुधा कफम् ।
रक्तं वा वृद्धरक्तस्य त्वक्छिरास्नायुमांसगम् ॥१४॥
दूषयित्वा तु दीर्घाणुवृत्तस्थूलखरात्मनाम् ।
ग्रन्थीनां कुरुते मालां स रक्तां तीव्ररुग्ज्वराम् ॥१५॥
श्वासकासातिसारास्यशोषहिक्कावमिभ्रमैः ।
मोहवैवर्ण्यमूर्च्छांगभंगाग्निसदनैर्युताम् ॥१६॥
इत्ययं ग्रंथिवीसर्पः कफमारुतकोपजः ।
कफपित्ताज्ज्वरः स्तंभो निद्रा तंद्रा शिरोरुजा ॥१७॥
अंगावसादविक्षेपौ प्रलेपारोचकभ्रमाः ।
मूर्च्छाग्निहानिर्भेदोऽस्थ्नां पिपासेन्द्रियगौरवम् ॥१८॥
आमोपवेशनं लेपः स्रोतसां स च सर्पति ।
प्रायेणामाशयं गृह्णन्नेकदेशं न चातिरुक् ॥१९॥
पिडकैरवकीर्णोऽतिपीतलोहितपांडुरैः ।
स्निग्धोऽसितो मेचकाभो मलिनः शोथवान् गुरुः ॥२०॥
गंभीरपाकः प्राज्योष्मा स्पृष्टः क्लिन्नोऽवदीर्यते ।
पंकवच्छीर्णमांसश्च स्पष्टस्नायुसिरागणः ॥२१॥
शवगंधी च वीसर्पं कर्दमाख्यमुशंति तम् ।
बाह्यहेतोः क्षतात्क्रुद्धः सरक्तं पित्तमीरयन् ॥२२॥
विसर्पं मारुतः कुर्यात्कुलत्थसदृशैश्चितम् ।
स्फोटैःशोथज्वररुजादाहाढ्यं श्यावशोणितम् ॥२३॥
ज्वरातिसारौ वमथुस्त्वङ्मांसदरणं क्लमः ।
अरोचकाविपाकौ च विसर्पाणामुपद्रवाः ॥२४॥

सिध्यन्ति वातकफपित्तकृता विसर्पाः
सर्वात्मकः क्षतकृतश्च* न सिद्धिमेति ।
पित्तात्मकोऽञ्जनवपुश्च भवेदसाध्यः
कृच्छ्राश्च मर्मसु भवंति हि सर्व एव ॥२५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने विसर्पनिदानं
समाप्तम् ॥५२॥

अथ विस्फोटनिदानम् ।

कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्ष-
क्षारैरजीर्णाध्यशनातपैश्च ।
तथर्तुदोषेण विपर्ययेण
कुप्यंति दोषाः पवनादयस्तु ॥ १ ॥

त्वचमाश्रित्य ते रक्तमांसास्थीनि प्रदूष्य च ।
घोरान्कुर्वन्ति विस्फोटान्सर्वाञ्ज्वरपुरःसरान् ॥ २ ॥

अग्निदग्धनिभाः स्फोटाः सज्वरा रक्तपित्तजाः ।
क्वचित्सर्वत्र वा देहे विस्फोटा इति ते स्मृताः ॥ ३ ॥

शिरोरुक्छूलभूयिष्ठं ज्वरस्तृट् पर्वभेदनम् ।
सकृष्णवर्णता चेति वातविस्फोटलक्षणम् ॥ ४ ॥

ज्वरदाहरुजास्रावपाकतृष्णाभिरन्वितम् ।
पीतलोहितवर्णं च पित्तविस्फोटलक्षणम् ॥ ५ ॥

छर्द्यरोचकजाड्यानि कंडूकाठिन्यपांडुताः ।
अवेदनश्चिरात्पाकी स विस्फोटः कफात्मकः ॥ ६ ॥

---

* 'कफकृतश्च'

वातपित्तकृतो यस्तु कुरुते तीव्रवेदनाम् ।
कण्डूरैस्तैमित्यगुरुभिर्जानीयात्कफवातिकम् ॥ ७ ॥
कण्डूदाहो ज्वरश्छर्दिरेतैस्तु कफपैत्तिकः ।
मध्ये निम्नोन्नतोऽन्ते च कठिनोऽल्पप्रपाकवान् ॥ ८ ॥
दाहरागतृषामोहच्छर्दिमूर्च्छारुजाज्वराः ।
प्रलापो वेपथुस्तंद्रा× सोऽसाध्यः स्यात्त्रिदोषजः ॥ ९ ॥
रक्ता रक्तसमुत्थाना गुञ्जाविद्रुमसन्निभाः ।
वेदितव्यास्तु रक्तेन पैत्तिकेन च हेतुना ॥१०॥
न ते सिद्धिं समायांति सिद्धैर्योगशतैरपि ।
एकदोषोत्थितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ।
सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥११॥
(हिक्का श्वासोऽरुचिस्तृष्णा अङ्गसादो हृदिव्यथा ।
विसर्पज्वरहृल्लासा विस्फोटानामुपद्रवाः ॥ १ ॥)
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने विस्फोटनिदानं समाप्तम् ॥५३॥

अथ मसूरिकानिदानम् ।

कट्वम्ललवणक्षारविरुद्धाध्यशनाशनैः ।
दुष्टनिष्पावशाकाद्यैः प्रदुष्टपवनोदकैः ॥ १ ॥
क्रूरग्रहेक्षणाच्चापि देशे+ दोषाः समुद्धताः ।
जनयंति शरीरेऽस्मिन्दुष्टरक्तेन संगताः ॥ २ ॥
मसूराकृतिसंस्थानाः पिडकाः स्युर्मसूरिकाः ।
तासां पूर्वं ज्वरः कण्डूर्गात्रभङ्गोऽरतिर्भ्रमः ॥ ३ ॥

× 'वमथुस्तन्द्रा' + 'देहे'

त्वचि शोथः सर्वत्रगो नेत्ररागश्च जायते ।
स्फोटाः श्यावारुणा रूक्षास्तीव्रवेदनयाऽन्विताः ॥४॥
कठिनाश्चिरपाकाश्च भवंत्यनिलसम्भवाः ।
सन्ध्यस्थिपर्वणां भेदः कासः कम्पोऽरतिः क्लमः ॥ ५ ॥
शोषस्ताल्वोष्ठजिह्वानां तृष्णा चारुचिसंयुता ।
रक्ताः पीतासिताः स्फोटाः सदाहास्तीव्रवेदनाः ॥ ६ ॥
भवंत्यचिरपाकाश्च पित्तकोपसमुद्भवाः ।
विड्भेदश्चांगमर्दश्च दाहस्तृष्णाऽरुचिस्तथा ॥ ७ ॥
मुखपाकोऽक्षिरागश्च ज्वरस्तीव्रः सुदारुणः ।
रक्तजायां भवंत्येते विकाराः पित्तलक्षणाः ॥८॥
कफप्रसेकः स्तैमित्यं शिरोरुग्गात्रगौरवम् ।
हृल्लासः सारुचिर्निद्रा तंद्रालस्यसमन्विताः ॥ ९ ॥
श्वेताः स्निग्धा भृशं स्थूलाः कण्डूरा मंदवेदनाः ।
मसूरिकाः कफोत्थाश्च चिरपाकाः प्रकीर्तिताः ॥१०॥
नीलाश्चिपिटविस्तीर्णा मध्ये निम्ना महारुजः ।
चिरपाकाः पूतिस्रावाः प्रभूताः सर्वदोषजाः ॥११॥
कण्ठरोधारुचिस्तम्भप्रलापारतिसंयुताः* ।
दुश्चिकित्स्याः समुद्दिष्टाः पिडकाश्चर्मसंज्ञिताः ॥१२॥
रोमकूपोन्नतिसमा रागिण्यः कफपित्तजाः ।
कासारोचकसंयुक्ता रोमांत्यो ज्वरपूर्विकाः ॥१३॥
तोयबुद्बुदसंकाशास्त्वग्गतास्तु मसूरिकाः ।
स्वल्पदोषाः प्रजायंते भिन्नास्तोयं स्रवंति च ॥१४॥

---

* 'कण्ठरोधोऽरुचिस्तन्द्रा'

रक्तस्था लोहिताकाराः शीघ्रपाकास्तनुत्वचः ।
साध्या नात्यर्थदुष्टाश्च भिन्ना रक्तं स्रवंति च ॥१५॥
मांसस्थाः कठिनाः स्निग्धाश्चिरपाका घनत्वचः ।
गात्रशूलतृषाकण्डूज्वरारतिसमान्विताः ॥१६॥
मेदोजा मंडलाकारा मृदवः किंचिदुन्नताः ।
घोरज्वरपरीताश्च स्थूलाः स्निग्धाः सवेदनाः ॥१७॥
संमोहारतिसंतापाः कश्चिदाभ्यो विनिस्तरेत् ।
क्षुद्रा गात्रसमा रूक्षाश्चिपिटाः किंचिदुन्नताः ॥१८॥
मज्जोत्था भृशसम्मोहवेदनारतिसंयुताः ।
छिन्दंति मर्मधामानि प्राणानाशु हरंति हि ॥१९॥
भ्रमरेणेव विद्धानि कुर्वन्त्यस्थीनि सर्वतः ।
पक्वाभाः पिडकाः स्निग्धाः सूक्ष्माश्चात्यर्थवेदनाः ॥२०॥
स्तैमित्यारतिसंमोहदाहोन्मादसमन्विताः ।
शुक्रजायां मसूर्यां तु लक्षणानि भवन्ति हि ॥२१॥
निर्दिष्टं केवलं चिह्नं दृश्यते न तु जीवितम् ।
दोषमिश्रास्तु सप्तैता द्रष्टव्या दोषलक्षणैः ॥२२॥
त्वग्गता रक्तजाश्चैव पित्तजाः श्लेष्मजास्तथा ।
श्लेष्मपित्तकृताश्चैव सुखसाध्या मसूरिकाः ॥२३॥
(एता विनापि क्रियया प्रशाम्यंति शरीरिणाम् ।)
वातजा वातपित्तोत्थाः श्लेष्मवातकृताश्च याः ।
कृच्छ्रसाध्यतमास्तस्माद्यत्नादेता उपाचरेत् ॥२४॥
असाध्याः सन्निपातोत्थास्तासां वक्ष्यामि लक्षणम् ।
प्रवालसदृशाः काश्चित्काश्चिज्जम्बूफलोपमाः ॥२५॥

लोहजालसमाः काश्चिदतसीफलसन्निभाः ।
आसां बहुविधा वर्णा जायन्ते दोषभेदतः ॥२६॥
कासो हिक्का प्रमेहश्च❀ ज्वरस्तीव्रःसुदारुणः ।
प्रलापश्चारतिमूर्च्छा तृष्णा दाहोऽतिघूर्णता ॥२७॥
मुखेन प्रस्रवेद्रक्तं तथा घ्राणेन चक्षुषा ।
कण्ठे घुघुरकं कृत्वा श्वसित्यत्यर्थ वेदनम् ॥२८॥
मसूरिकाभिभूतस्य यस्यैतानि भिषग्वरैः ।
लक्षणानि च दृश्यन्ते न दद्यादत्रभेषजम् ॥२९॥
मसूरिकाभिभूतो यो भृशं घ्राणेन निश्वसेत् ।
स भृशं त्यजति प्राणांस्तृषार्तो वायुदूषितः ॥३०॥
मसूरिकान्ते शोथ स्यात्कूर्परे मणिबन्धके ।
तथांसफलके चापि दुश्चिकित्स्यः सुदारुणः ॥३१॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मसूरिकानिदानं
समाप्तम् ॥५४॥

अथ क्षुद्ररोगनिदानम् ।

स्निग्धाः सवर्णा ग्रथिता नीरुजा मुद्गसन्निभाः ।
कफवातोत्थिता ज्ञेया बालानामजगल्लिका: ॥ १ ॥
यवाकारा सुकठिना ग्रथिता मांससंश्रिता ।
पिडका कफवाताभ्यां यवप्रख्येति सोच्यते ॥ २ ॥
घनामवक्त्रां पिडकामुन्नतां परिमंडलाम् ।
अन्त्रालजीमल्पपूयां तां विद्यात्कफवातजाम् ॥ ३ ॥
विवृतास्यां महादाहां पक्वोदुम्बरसन्निभाम् ।
विवृतामिति तां विद्यात्पित्तोत्थां परिमण्डलाम् ॥४॥

❀ 'हिक्काथ माहेश्च'

ग्रथिताः पञ्च वा षड्वा दारुणाः कच्छपोपमाः ।
कफानिलाभ्यां पिडका ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ॥ ५ ॥
ग्रीवांसकक्षाकरपाददेशे
संधौ गले वा त्रिभिरेव दोषैः ।
ग्रन्थिः स वल्मीकवदक्रियाणां
जातः क्रमेणैव गतः प्रवृद्धिम ॥ ६ ॥
मुखैरनेकैः स्रुतितोदवद्भि-
र्विसर्पवत्सर्पति चोन्नताग्रैः ।
वल्मीकमाहुर्भिषजो विकारं
निष्प्रत्यनीकं चिरजं विशेषात् ॥ ७ ॥
पद्मकर्णिकवन्मध्ये पिडिकाभिःसमाचिताम् ।
इन्द्रवृद्धां तु तां विद्याद्वातपित्तोत्थितां भिषक् ॥ ८ ॥
मण्डलं वृत्तमुत्सन्नं सरक्तं पिडकाचितम् ।
रुजाकरीं गर्दभिकां तां विद्याद्वातपित्तजाम् ॥ ९ ॥
वातश्लेष्मसमुद्भूतः श्वयथुर्हनुसन्धिजः ।
स्थिरो मन्दरुजः स्निग्धो ज्ञेयः पाषाणगर्दभः ॥१०॥
कर्णस्याभ्यन्तरे जातां पिडकामुग्रवेदनाम् ।
स्थिरां पनसिकां तां तु विद्याद्वातकफोत्थिताम् ॥११॥
विसर्पवत्सर्पति यः शोथस्तनुरपाकवान् ।
दाहज्वरकरः पित्तात्स ज्ञेयो जालगर्दभः ॥१२॥
पिडकामुत्तमाङ्गस्थां वृत्तामुग्ररुजाज्वराम् ।
सर्वात्मिकां सर्वलिङ्गां जानीयादिरिवेल्लिकाम् ॥१३॥
बाहुपार्श्वांसकक्षेषु कृष्णस्फोटां सवेदनाम् ।
पित्तप्रकोपसंभूतां कक्षामित्यभिनिर्दिशेत् ॥१४॥

एकामेतादृशीं दृष्ट्वा पिडकां स्फोटसन्निभाम् ।
त्वग्गतां पित्तकोपेन गन्धमालां प्रचक्षते ॥१५॥
कक्षभागेषु ये स्फोटा जायन्ते मांसदारुणाः ।
अन्तर्दाहज्वरकरा दीप्तपावकसन्निभाः ॥१६॥
सप्ताहाद्वा दशाहाद्वा पक्षाद्वाहंति मानवम् ।
तामग्निरोहिणीं विद्यादसाध्यां सर्वदोषजाम् ॥१७॥

नखमांसमधिष्ठाय वायुः पित्तं च देहिनाम् ।
कुर्वीत दाहपाकौ च तं व्याधिं चिप्पमादिशेत् ॥१८॥
तदेवाल्पतरैर्दोषैः परुषं कुनखं वदेत् ॥१९॥

गंभीरामल्पसंरम्भां सवर्णामुपरिस्थिताम् ।
पादस्यानुशयीं तां तु विद्यादन्तः प्रपाकिनीम् ॥२०॥
विदारीकन्दवद्वृत्ता कक्षावंक्षणसन्धिषु ।
विदारिका भवेद्रक्ता सर्वजा सर्वलक्षणा ॥२१॥
प्राप्य मांससिरास्नायूः श्लेष्मा मेदस्तथाऽनिलः ।
ग्रंथिं करोत्यसौ भिन्नो मधुसर्पिर्वसानिभम् ॥२२॥

स्रवत्यास्रावमनिलस्तत्र वृद्धिं गतः पुनः ।
मांसं संशोष्य ग्रथितां शर्करां जनयेत्ततः ॥२३॥

दुर्गन्धि क्लिन्नमत्यर्थं नानावर्णं ततः शिराः ।
स्रवंति रक्तं सहसातं विद्याच्छर्करार्बुदम् ॥२४॥

परिक्रमणशीलस्य वायुरत्यर्थरूक्षयोः ।
पादयोः कुरुते दारीं पाददारीं तमादिशेत् ॥२५॥

शर्करोन्मथिते पादे क्षते वा कंटकादिभिः ।
ग्रन्थिः कोलवदुत्सन्नो जायते कदरं हि तत् ॥२६॥

क्लिन्नाङ्गुल्यन्तरौ पादौ कण्डूदाहरुजान्वितौ ।
दुष्टकर्दमसंस्पर्शादलसं तं विभावयेत् ॥२७॥
रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम् ।
प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः ॥२८॥
रुणद्धि रोमकूपांस्तु ततोऽन्येषामसंभवः ।
तदिन्द्रलुप्तं खालित्यं रुह्येति च विभाव्यते ॥२९॥
दारुणा कण्डुरा रूक्षा केशभूमिः प्रपाट्यते ।
कफमारुतकोपेन विद्याद्दारुणकं तु तम् ॥३०॥
अरूंषि बहुवक्त्राणि बहुक्लेदीनि मूर्ध्नि तु ।
कफासृक्कृमिकोपेन नृणां विद्यादरूंषिकाम् ॥३१॥
क्रोधशोकश्रमकृतः शरीरोष्मा शिरोगतः ।
पित्तं च केशान्पचति पलितं तेन जायते ॥३२॥
शाल्मलीकण्टकप्रख्याः कफमारुतरक्तजाः ।
युवान पिडका यूनां विज्ञेया मुखदूषिकाः ॥३३॥
कण्टकैराचितं वृत्तं मण्डलं पाण्डुकण्डुरम् ।
पद्मिनीकण्टकप्रख्यैस्तदाख्यं कफवातजम् ॥३४॥
सममुत्सन्नमरुजं मण्डलं कफरक्तजम् ।
सहजं लक्ष्म चैकेषां लक्ष्यो जतुमणिस्तु सः ॥३५॥
अवेदनं स्थिरं चैव यस्मिन् गात्रे प्रदृश्यते ।
माषवत्कृष्णमुत्सन्नमनिलान्मषकं तु तत् ॥३६॥
कृष्णानि तिलमात्राणि नीरुजानि समानि च ।
वातपित्तकफोच्छोषात्तान्विद्यात्तिलकालकान् ॥३७॥

महद्वा यदि वा चाल्पं श्याव वा यदि वाऽसितम् ।
नीरुजं मण्डलं गात्रे न्यच्छमित्यभिधीयते ॥३८॥
क्रोधायासप्रकुपितो वायुः पित्तेन संयुतः ।
मुखमागत्य सहसा मण्डलं विसृजत्यतः ॥३९॥
नीरुजं तनुकं श्यावं मुखे व्यङ्गं तमादिशेत् ।
कृष्णमेवंगुणं गात्रे मुखे वा नीलिकां विदुः ॥४०॥
मर्दनात्पीडनाद्वाऽति तथैवाप्यभिघाततः ।
मेढ्रचर्म यदा वायुर्भजते सर्वतश्चरन् ॥४१॥
तदा वातोपसृष्टत्वात्तच्चर्म परिवर्त्तते ।
मणेरधस्तात्कोशश्च ग्रन्थिरूपेण लम्बते ॥४२॥
सरुजां वातसंभूतां तां विद्यान् परिवर्तिकाम् ।
(सवेदनं सदाहं च पाकं च व्रजति क्वचित् ।
परिवर्तिकेति तां विद्यात्सरुजां वातसंभवाम् ॥१॥)
सकंडूः कठिना चापि सैव श्लेष्मसमुत्थिता ॥४३॥
अल्पीयःखां यदा हर्षाद्बलाद्गच्छेत्स्त्रियं नरः ।
हस्ताभिघातादपि वा चर्मण्युद्वर्तिते बलात् ॥४४॥
(मर्दनात्पीडनाद्वापि शुक्रवेगविघाततः ।)
यस्यावपाट्यते चर्म तां विद्यादवपाटिकाम् ।
वातोपसृष्टे मेढ्रे वै चर्म संश्रयते मणिम् ॥४५॥
मणिश्चर्मोपनद्धस्तु मूत्रस्रोतो रुणद्धि च ।
निरुद्धप्रकशे तस्मिन्मंदधारमवेदनम् ॥४६॥
मूत्रं प्रवर्तते जंतोर्मणिर्विव्रियिते न च ।
निरुद्धप्रकशं विद्यात्सरुजं वातसंभवम् ॥४७॥

वेगसंधारणाद्वायुर्विहतो गुदसंश्रितः ।
निरुणद्धि महास्रोतः सूक्ष्मद्वारं करोति च ॥४८॥
मार्गस्य सौक्ष्म्यात्कृच्छ्रेण पुरीषं तस्य गच्छति ।
सन्निरुद्धगुदं व्याधिमेतं विद्यात्सुदारुणम् ॥४९॥
शकृन्मूत्रसमायुक्तेऽधौतेऽपाने शिशोर्भवेत् ।
स्विन्ने वाऽस्नाप्यमाने वा कण्डू रक्तकफोद्भवा ॥५०॥
कण्डूयनात्ततःक्षिप्रं स्फोटः स्रावश्च जायते ।
एकीभूतं व्रणैर्घोरं तं विद्यादहिपूतनम् ॥५१॥
स्नानोत्सादनहीनस्य मलो वृषणसंस्थितः ।
यदा प्रक्लिद्यते स्वेदात् कण्डूं जनयते तदा ॥५२॥
कण्डूयनात्ततः क्षिप्रं स्फोटः स्रावश्च जायते ।
प्राहुर्वृषणकच्छूं तां श्लेष्मरक्तप्रकोपजाम् ॥५३॥
प्रवाहणातीसाराभ्यां निर्गच्छति गुदं बहिः ।
रूक्षदुर्बलदेहस्य गुदभ्रंशं तमादिशेत् ॥५४॥
सदाहो रक्तपर्यन्तस्त्वक्पाकी तीव्रवेदनः ।
कण्डूमान् ज्वरकारी च स स्याच्छूकरदंष्ट्रकः ॥५५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने क्षुद्ररोगनिदानं समाप्तम् ॥५५॥

अथमुखरोगनिदानम् ।

(दन्तेष्वष्टावोष्ठयोश्च मूलेषु दश पंच च ।
नव तालुनि जिह्वायां पंच सप्तदशामयाः ॥
कंठे त्रयः सर्वसरा एकषष्टिश्चतुः पराः ॥ १ ॥)

आनूपपिशितक्षीरदधिमत्स्यातिसेवनात् ❀ ।
मुखमध्ये गदान्कुर्युः क्रुद्धा दोषाः कफोत्तराः ॥ १ ॥
कर्कशौ परुषौ स्तब्धौ संप्राप्तानिलवेदनौ ।
दाल्येते परिपाट्येते ओष्ठौ मारुतकोपतः ॥ २ ॥
चीयेते पिडकाभिश्च सरुजाभिः समन्ततः ।
सदाहपाकपिडकौ पीतभासौ च पित्ततः ॥ ३ ॥
सवर्णाभिश्च चीयेते पिडकाभिरवेदनौ ।
भवतस्तु कफादोष्ठौ पिच्छिलौ शीतलौ गुरू ॥ ४ ॥
सकृत्कृष्णौ सकृत्पीतौ सकृच्छ्वेतौ तथैव च ।
सन्निपातेन विज्ञेयावनेकपिडकाचितौ ॥ ५ ॥
खर्जूरफलवर्णाभिः पिडकाभिर्निपीडितौ ।
रक्तोपसृष्टौ रुधिरं स्रवतः शोणितप्रभौ ॥ ६ ॥
गुरू स्थूलौ मांसदुष्टौ मांसपिण्डवदुद्गतौ ।
जन्तवश्चात्र मूर्च्छंति नरस्योभयतो मुखात् ॥ ७ ॥
सर्पिर्मण्डप्रतीकाशौ मेदसा कण्डुरौ गुरू ।
अच्छं स्फटिकसंकाशमास्रावं स्रवतो भृशम् ॥ ८ ॥
तयोर्व्रणो न संरोहेन्मृदुत्वं च न गच्छति ।
क्षतजाभौ विदीर्येते पाट्येते चाभिघाततः ॥ ९ ॥
ग्रथितौ च तथा स्यातामोष्ठौ कण्डूसमन्वितौ ।
शोणितं दन्तवेष्टेभ्यो यस्याकस्मात्प्रवर्त्तते ।
दुर्गन्धीनि सकृष्णानि प्रक्लेदीनि मृदूनि च ॥१०॥
दन्तमांसानि शीर्यन्ते पचंति च परस्परम् ।
शीतादो नाम स व्याधिः कफशोणितसंभवः ॥११॥

❀ 'दधिमाषादि सेवनात्'

दन्तयोस्त्रिषु वा यस्य श्वयथुर्जायते महान् ।
दन्तपुप्पुटको नाम स व्याधिः कफरक्तजः ॥१२॥

स्रवन्ति पूयरुधिरं चला दन्ता भवन्ति च ।
दन्तवेष्टः स विज्ञेयो दुष्टशोणितसंभवः ॥१३॥
श्वयथुर्दन्तमूलेषु रुजावान्कफरक्तजः ।
लालास्रावी स विज्ञेयः शौषिरो नाम नामतः ॥१४॥
दन्ताश्चलन्ति वेष्टेभ्यस्तालु चाप्यवदीर्यते ।
यस्मिन् स सर्वजो व्याधिर्महाशौषिरसंज्ञितः ॥१५॥

दन्तमांसानि शीर्यन्ते यस्मिन्ष्ठीवति चाप्यसृक् ।
पित्तासृक्कफजो व्याधिर्ज्ञेयः परिदरो हि सः ॥१६॥
वेष्टेषु दाहः पाकश्च ताभ्यां दन्ताश्चलंति च ।
(अवाक्कृताः प्रस्रवन्ति शोणितं मन्दवेदनाः ।
आध्मायन्ते स्रुते रक्ते मुखे पूतिश्च जायते ॥ १ ॥)
यस्मिन् सोपकुशो नाम पित्तरक्तकृतो गदः ॥१७॥

घृष्टेषु दन्तमांसेषु संरम्भो जायते महान् ।
चलाभवंति दन्ताश्च स वैदर्भोऽभिघातजः ॥१८॥
मारुतेनाधिको दन्तो जायते तीव्रवेदनः ।
खलिवर्द्धनसंज्ञोऽसौ जाते रुक् च प्रशाम्यति ॥१९॥
शनैः शनैः प्रकुरुते वायुर्दन्तसमाश्रितः ।
करालान्विकटान्दन्तान् करालो न स सिध्यति ॥२०॥

हानव्ये पश्चिमे दन्ते महान् शोथो महारुजः ।
लालास्रावी कफकृतो विज्ञेयः सोऽधिमांसकः ।
दन्तमूलगता नाड्यः पञ्च ज्ञेया यथेरिताः ॥२१॥

दीर्यमाणेष्विव रुजा यस्य दन्तेषु जायते ।
दालनो नाम स व्याधिः सदागतिनिमित्तजः ॥२२॥
कृष्णाच्छिद्रश्चलः स्रावी ससंरम्भो महारुजः ।
अनिमित्तरुजो वाताद्विज्ञेयः क्रिमिदन्तकः ॥२३॥
वक्त्रं वक्रं भवेद्यस्य दन्तभङ्गश्च जायते ।
कफवातकृतो व्याधिः स भंजनकसंज्ञितः ॥२४॥
शीतरूक्षप्रवाताम्लस्पर्शानामसहा द्विजाः ।
पित्तमारुतकोपेन दन्तहर्षः स नामतः ॥२५॥
मलो दन्तगतो यस्तु पित्तमारुतशोषितः ।
शर्करेव खरस्पर्शा सा ज्ञेया दन्तशर्करा ॥२६॥
कपालेष्विव दीर्यत्सु दन्तानां सैव शर्करा ।
कपालिकेति विज्ञेया सदा दन्तविनाशिनी ॥२७॥
योऽसृङ्मिश्रेण पित्तेन दग्धो दन्तस्त्वशेषतः ।
श्यावतां नीलतां वापि गतः स श्यावदन्तकः ॥२८॥
दन्तमांसे मलैः सास्रैर्बाह्यान्तः श्वयथुर्गुरुः ।
सदाहरुक् स्रवेद्भिन्नः पूयास्रं दन्तविद्रधिः ॥२९॥
(वातेन तैस्तैर्भावैस्तु हनुसंधिविसंहतः ।
हनुमोक्ष इति ज्ञेयो व्याधिरर्दितलक्षणः ॥ १ ॥)

जिह्वाऽनिलेन स्फुटिता प्रसुप्ता
भवेच्च शाकच्छदनप्रकाशा ।
पित्तेन दह्यत्युपचीयते च
दीर्घैः सरक्तैरपि कण्टकैश्च ।
कफेन गुर्वी बहुला चिता च
मांसोच्छ्रयैः शाल्मलिकण्टकाभैः ॥३०॥

जिह्वातले यः श्वयथुः प्रगाढः
सोऽलाससंज्ञः कफरक्तमूर्तिः ।
जिह्वां स तु स्तंभयति प्रवृद्धो
मूले च जिह्वा भृशमेति पाकम् ॥३१॥
जिह्वाग्ररूपः श्वयथुर्हि जिह्वा-
मुन्नम्य जातः कफरक्तमूलः* ।
लालाकरः कण्डुयुतः सचोषः
सा तूपजिह्वा पठिता भिषग्भिः ॥३२॥
श्लेष्मासृग्भ्यां तालुमूले प्रवृद्धो
दीर्घः शोथो ध्मातबस्तिप्रकाशः ।
तृष्णाकासश्वासकृत्तं वदन्ति
व्याधिं वैद्याः कण्ठशुण्डीति नाम्ना ॥३३॥
शोथः स्थूलस्तोददाहप्रपाकी×
प्रागुक्ताभ्यां तुण्डिकेरी मता तु ।
मृदुः शोथो लोहितः शोणितोत्थो
ज्ञेयोऽध्रुषः सज्वरस्तीव्ररुक् च ॥३४॥
कूर्मोन्नतोऽवेदनोऽशीघ्रजन्मा
रोगो ज्ञेयः कच्छपः श्लेष्मणा तु ।
पद्माकारं तालुमध्ये तु शोथं
विद्याद्रक्तादर्बुदं प्रोक्तलिङ्गम् ॥३५॥
दुष्टं मांसं नीरुजं तालुमध्ये
कफाच्छूनं मांससङ्घातमाहुः ।
नीरुक् स्थायी कोलमात्रः कफात् स्यात्
मेदोयुक्तात् पुप्पुटस्तालुदेशे ॥३६॥

---

* 'कफरक्तमूर्त्तिः' × 'शोथः शूलस्तोददाहप्रपाकी'

शोषोऽत्यर्थं दीर्यते चापि तालुः
श्वासश्चोग्रस्तालुशोषोऽनिलाच्च ।
पित्तं कुर्यात् पाकमत्यर्थंघोरं
तालुन्येनं तालुपाकं वदंति ॥३७॥
गलेऽनिलःपित्तकफौ च मूर्च्छितौ
प्रदूष्य मांसं च तथैव शोणितम् ।
गलोपसंरोधकरैस्तथाऽङ्कुरै-
र्निहंत्यसून्व्याधिरियं हि रोहिणी ॥३८॥
जिह्वासमन्ताद्भृशवेदनास्तु
मांसाङ्कुराः कण्ठविरोधिनो ये ।
सा रोहिणी वातकृता प्रदिष्टा
वातात्मकोपद्रवगाढयुक्ता ॥३९॥
क्षिप्रोद्गमा क्षिप्रविदाहपाका
तीव्रज्वरा पित्तनिमित्तजा तु ।
स्रोतोविरोधिन्यचलोद्गता च
स्थिराङ्कुरा या कफसंभवा सा ॥४०॥
गम्भीरपाकिन्यनिवार्यवीर्या
त्रिदोषलिङ्गा त्रितयोत्थिता च ।
स्फोटैश्चिता पित्तसमानलिङ्गा
साध्या प्रदिष्टा रुधिरात्मिका तु ॥४१॥
कोलास्थिमात्रः कफसंभवो यो
ग्रन्थिर्गले कण्टकशूकभूतः ।
खरः स्थिरः शस्त्रनिपातसाध्य-
स्तंकण्ठशालूकमिति ब्रुवन्ति ॥४२॥

जिह्वाग्ररूपः श्वयथुः कफात्तु
जिह्वोपरिष्टादपि रक्तमिश्रात् ।
ज्ञेयोऽधिजिह्वः खलु रोग एष
विवर्जयेदागतपाकमेनम् ॥४३॥

बलास एवायतमुन्नतं च
शोथं* करोत्यन्नगतिं निवार्य ।
तं सर्वथैवाप्रतिवार्यवीर्यं
विवर्जनीयं वलयं वदन्ति ॥४४॥

गले तु शोथं कुरुतः प्रवृद्धौ
श्लेष्मानिलौ श्वासरुजोपपन्नम् ।
मर्मच्छिदं दुस्तरमेनमाहु-
र्बलाशसंज्ञं निपुणा विकारम् ॥४५॥

वृत्तोन्नतोऽन्तः श्वयथुः सदाहः
सकण्डुरोऽपाक्यमृदुर्गुरुश्च ।
नाम्नैकवृन्दः परिकीर्तितोऽसौ
व्याधिर्बलाशक्षतजप्रसूतः ॥४६॥

समुन्नतं वृत्तममन्ददाहं
तीव्रज्वरं वृन्दमुदाहरन्ति ।
तच्चापि पित्तक्षतजप्रकोपा-
ज्ज्ञेयंसतोदं पवनात्मकं तु ॥४७॥

वर्तिर्घना कण्ठनिरोधिनी या
चिताऽतिमात्रं पिशितप्ररोहैः ।

---

* 'ग्रन्थि'

अनेकरुक् प्राणहरी त्रिदोषा-
ज्ज्ञेया शतघ्नी च शतघ्निरूपा ॥४८।

ग्रन्थिर्गले त्वामलकास्थिमात्रः
स्थिरोऽतिरुग्यः कफरक्तमूर्तिः।
संलक्ष्यते सक्तमिवाशनं च
स शस्त्रसाध्यस्तु गिलायुसंज्ञः ॥४९॥

सर्वं गलं व्याप्य समुत्थितो यः
शोथो रुजः सन्ति च यत्र सर्वाः।
स सर्वदोषैर्गलविद्रधिस्तु
तस्यैव तुल्यः खलु सर्वजस्य ॥५०॥

शोथो महानन्नजलावरोधी
तीव्रज्वरो वायुगतेर्निहन्ता।
कफेन जातो रुधिरान्वितेन
गले गलौघः परिकीर्त्यते तु ॥५१॥

यस्ताम्यमानः श्वसिति प्रसक्तं
भिन्नस्वरः शुष्कविमुक्तकण्ठः।
कफोपदिग्धेष्वनिलायनेषु
ज्ञेयः स रोगः श्वसनात् स्वरघ्नः ॥५२॥

प्रतानवान् यः श्वयथुः सुकष्टो
गलोपरोधं कुरुते क्रमेण।
स मांसतानः कथितोऽवलम्बी
प्राणप्रणुत् सर्वकृतो विकारः ॥५३॥

सदाहतोदं श्वयथुं सुताम्र-
मन्तर्गले पूतिविशीर्णमांसम्।

पित्तेन विद्याद्वदने विदारीं
पार्श्वे विशेषात् स तु येन शेते ॥५४॥

स्फोटः सतोदैर्वदनं समन्ताद्-
यस्याचितं सर्वसरः स वातात् ।

रक्तः सदाहैः स्तनुभिः सपीतै-
र्यस्याचितं चापि स पित्तकोपात् ।

अवेदनैः कण्डुयुतैः सवर्णै-
र्यस्याचितं चापि स वै कफेन ॥५५॥

ओष्ठप्रकोपे वर्ज्याः स्युर्मांसरक्तत्रिदोषजाः ।
दन्तमूलेषु वर्ज्यौ च त्रिलिंगगतिशौषिरौ ॥५६॥
दन्तेषु च न सिध्यन्ति श्यावदालनभञ्जनाः ।
जिह्वारोगे बलाशस्तु तालव्येष्वर्बुदं तथा ॥५७॥
स्वरघ्नो वलयो वृन्दो बलाशश्च विदारिका ।
गलौघो मांसतानश्च शतघ्नी रोहिणी गले ॥५८॥
असाध्याः कीर्तिता ह्येते रोगा नव दशैव तु ।
तेषु चापि क्रियां वैद्यः प्रत्याख्याय समाचरेत् ॥५९॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मुखरोगनिदानं
समाप्तम् ॥५६॥

अथ कर्णरोगनिदानम् ।

समीरणः श्रोत्रगतोऽन्यथा चरन्
समंततः शूलमतीव कर्णयोः ।
करोति दोषैश्च यथास्वमावृतः
स कर्णशूलः कथितो दुराचरः* ॥ १ ॥
कर्णस्रोतःस्थिते वाते शृणोति विविधान् स्वरान् ।

* 'दुरासदः'

भेरीमृदंगशंखानां कर्णनादः स उच्यते ॥ २ ॥
यदा शब्दवहं वायुः स्रोत आवृत्य तिष्ठति ।
शुद्धःश्लेष्मान्वितो वाऽपि बाधिर्यं तेन जायते ॥ ३ ॥

वायुः पित्तादिभिर्युक्तो वेणुघोषोपमं स्वनम् ।
करोति कर्णयोः क्ष्वेडं कर्णक्ष्वेडः स उच्यते ॥ ४ ॥

शिरोऽभिघातादथवा निमज्जतो
जले प्रपाकादथवाऽपि विद्रधेः ।
स्रवेद्धि पूयं श्रवणोऽनिलार्दितः
स कर्णसंस्राव इति प्रकीर्तितः ॥ ५ ॥

मारुतः कफसंयुक्तः कर्णकण्डूं करोति च ।
पित्तोष्मशोषितः श्लेष्मा कुरुते कर्णगूथकम् ॥ ६ ॥

स कर्णगूथो द्रवतां गतो यदा
विलायितो घ्राणमुखं प्रपद्यते ।
तदा स कर्णप्रतिनाहसंज्ञितो
भवेद्विकारः शिरसोऽर्धभेदकृत् ॥ ७ ॥

यदा तु मूर्च्छान्त्यथवापि जन्तवः
सृजन्त्यपत्यान्यथवाऽपि मक्षिकाः ।
तदञ्जनत्वाच्छ्रवणो निरुच्यते
भिषग्भिराद्यैः क्रिमिकर्णको गदः ॥ ८ ॥

पतङ्गाः शतपद्यश्च कर्णस्रोतःप्रविश्य हि ।
अरतिं व्याकुलत्वं च भृशं कुर्वन्ति वेदनाम् ॥ ९ ॥
कर्णौ निस्तुद्यते तस्य तथा फरफरायते ।
कीटे चरति रुक् तीव्रा निष्पन्दे मन्दवेदना ॥१०॥

क्षताभिघातप्रभवस्तु विद्रधि-
र्भवेत्तथा दोषकृतोऽपरः पुनः ।
स रक्तपीतारुणमस्रमास्रवेत्-
प्रतोदधूमायनदाहचोषवान् ॥११॥

कर्णपाकस्तु पित्तेन कोथविक्लेदकृद्भवेत् ।
कर्णेविद्रधिपाकाद्वा जायते चाम्बुपूरणात् ॥१२॥
पूयं स्रवति पूति वा स ज्ञेयः पूतिकर्णकः ।
कर्णशोथार्बुदार्शांसि जानीयादुक्तलक्षणैः ॥१३॥

नादोऽतिरुक् कर्णमलस्य शोषः
स्रावस्तनुश्चाश्रवणं च वातात् ।
शोथः सरागो दरणं विदाहः
सपीतपूतिस्रवणं च पित्तात् ॥१४॥

वैश्रुत्यकण्डूस्थिरशोथशुक्ल-
स्निग्धस्रुतिः स्वल्परुजः कफाच्च ।
सर्वाणि रूपाणि च सन्निपातात्
स्रावश्च तत्राधिकदोषवर्णः ॥१५॥

सौकुमार्याच्चिरोत्सृष्टे सहसाऽतिप्रवर्धिते ।
कर्णशोथो भवेत् पाल्यां सरुजः परिपोटवान्
कृष्णारुणनिभः स्तब्धः स वातात् परिपोटकः ॥१६॥

गुर्वाभरणसंयोगात्ताडनाद्घर्षणादपि ।
शोथःपाल्यां भवेच्छ्यावो दाहपाकरुजान्वितः॥१७॥

रक्तो वा रक्तपित्ताभ्यामुत्पातः स गदो मतः ।
कर्णं बलाद्वर्धयतः पाल्यां वायुः प्रकुप्यति ॥१८॥

कफं संगृह्य कुरुते शोथं स्तब्धमवेदनम् ।
उन्मन्थकः सकण्डूको विकारः कफवातजः ॥१९॥
संवर्ध्यमाने दुर्विद्धे कण्डूपाकरुजान्वितः❀ ।
शोथो भवति पाकश्च त्रिदोषो दुःखवर्द्धनः ॥२०॥
कफासृक्क्रिमयः क्रुद्धाः सर्षपाभा विसर्पिणः ।
कुर्वन्ति पाल्यां पिडकाः कण्डूदाहरुजान्विताः ॥२१॥
कफासृक् क्रिमिसंभूतः स विसर्पन्नितस्ततः ।
लिहेत सशष्कुलीं पालीं परिलेहीति सस्मृतः ॥२२॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने कर्णरोग-
निदानं समाप्तम् ॥५७॥

अथ नासारोगनिदानम् ।

आनह्यते यस्य विशुष्यते च
प्रक्लिद्यते धूप्यति चापि नासा ।
न वेत्ति यो गंधरसांश्च जन्तु-
र्जुष्टं व्यवस्येत्तमपीनसेन ॥
तं चानिलश्लेष्मभवं विकारं
ब्रूयात् प्रतिश्यायसमानलिङ्गम् ॥ १ ॥
दोषैर्विदग्धैर्गलतालुमूले
संमूर्च्छितो यस्य समीरणस्तु ।
निरेति पूतिर्मुखनासिकाभ्यां
तं पूतिनस्यं प्रवदंति रोगम् ॥ २ ॥
घ्राणाश्रितं पित्तमरूंषि कुर्याद्
यस्मिन्विकारे बलवांश्च पाकः ।

❀ 'कण्डूदाहरुजान्वितः'

तं नासिकापाकमिति व्यवस्येद्-
विक्लेदकोथावथवाऽपि यत्र ॥ ३ ॥
दोषैर्विदग्धैरथवाऽपि जन्तो-
र्ललाटदेशेऽभिहतस्य तैस्तैः ।
नासा स्रवेत्पूयमसृग्विमिश्रं
तं पूयरक्तं प्रवदन्ति रोगम् ॥ ४ ॥
घ्राणाश्रिते मर्मणि संप्रदुष्टो
यस्यानिलो नासिकया निरेति ।
कफानुजातो बहुशोऽतिशब्द-
स्तं रोगमाहुः क्षवथुं विधिज्ञाः ॥ ५ ॥
तीक्ष्णोपयोगादभिजिघ्रतो वा
भावान् कटूनर्कनिरीक्षणाद्वा ।
सूत्रादिभिर्वा तरुणास्थिमर्म-
ण्युद्घाटितेऽन्यः क्षवथुर्निरेति ॥ ६ ॥
प्रभ्रश्यते नासिकया तु यस्य
सांद्रो विदग्धो लवणः कफस्तु ।
प्राक्संचितो मूर्द्धनि सूर्यतप्त-
स्तं भ्रंशथुं रोगमुदाहरन्ति ॥ ७ ॥
घ्राणे भृशं दाहसमन्विते तु
विनिःसरेद्धूम इवेह वायुः ।
नासा प्रदीप्तेव च यस्य जन्तो-
र्व्याधिं तु तं दीप्तमुदाहरन्ति ॥ ८ ॥
उच्छ्वासमार्गं तु कफः सवातो
रुंध्यात् प्रतीनाहमुदाहरेत्तम् ।

घ्राणाद्घनः पीतसितस्तनुर्वा
दोषः स्रवेत् स्रावमुदाहरेत्तम् ॥ ९ ॥
घ्राणाश्रिते स्रोतसि मारुतेन
गाढं प्रतप्ते परिशोषिते च ।
कृच्छ्राच्छ्वसेदूर्ध्वमधश्च जंतु-
र्यस्मिन् स नासापरिशोष उक्तः ॥१०॥
शिरोगुरुत्वमरुचिर्नासास्रावस्तनुः स्वरः ।
क्षामः ष्ठीवत्यथाभीक्ष्णमामपीनसलक्षणम् ॥११॥
आमलिंगान्वितः श्लेष्मा घनःखेषु निमज्जति ।
स्वरवर्णविशुद्धिश्च परिपक्वस्यलक्षणम् ॥१२॥
सन्धारणाजीर्णरजोतिभाष्य-
क्रोधर्तुवैषम्यशिरोभितापैः ।
प्रजागरातिस्वपनाम्बुशीतै
रवश्यया मैथुनबाष्पधूमैः ।
संस्त्यानदोषे शिरसि प्रवृद्धो
वायुः प्रतिश्यायमुदीरयेत्तु ॥१३॥
चयं गता मूर्धनि मारुतादयः
पृथक् समस्ताश्च तथैव शोणितम् ।
प्रकुप्यमाणा + विविधैः प्रकोपणै-
स्ततः प्रतिश्यायकरा भवंति हि ॥१४॥
क्षवप्रवृत्तिः शिरसोऽतिपूर्णता
स्तम्भोऽङ्गमर्दः परिहृष्टरोमता ।
उपद्रवाश्चाप्यपरे पृथग्विधा
नृणां प्रतिश्यायपुरःसराःस्मृताः ॥१५॥

+ 'प्रकोप्यमाणा'

आनद्धा पिहिता नासा तनुस्रावप्रसेकिनी ।
गलताल्वोष्ठशोषश्च निस्तोदः शङ्खयोस्तथा ॥१६॥
स्वरोपघातश्च भवेत् प्रतिश्यायेऽनिलात्मके ।
क्षवप्रवृत्तिरत्यर्थं वक्त्रवैरस्यमेव च ।
भवेत् स्वरोपघातश्च प्रतिश्यायेऽनिलात्मके ॥१७॥
उष्णः सपीतकः स्रावो घ्राणात् स्रवति पैत्तिके ।
कृशोऽतिपाण्डुः सन्तप्तो भवेदुष्णाभिपीडितः ॥१८॥
सधूममग्निं सहसा वमतीव स मानवः ।
घ्राणात् कफः कफकृते शीतः पाण्डुः स्रवेद्बहुः ।
शुक्लावभासः शुक्लाक्षो ÷ भवेद्गुरुशिरा नरः ॥१९॥
कण्ठताल्वोष्ठशिरसां कण्डूभिरभिपीडितः ।
भूत्वा भूत्वा प्रतिश्यायो यस्याकस्मान्निवर्त्तते ॥२०॥
संपक्वो वाऽप्यपक्वो वा स सर्वप्रभवः स्मृतः ।
प्रक्लिद्यते पुनर्नासा पुनश्च परिशुष्यति ॥२१॥
पुनरानह्यते वाऽपि पुनर्विव्रियते तथा ।
निश्वासो वाऽतिदुर्गन्धो नरो गन्धान् न वेत्ति च ॥२२॥
एवं दुष्टप्रतिश्यायं जानीयात्कृच्छ्रसाधनम् ।
रक्तजे तु प्रतिश्याये रक्तस्रावः प्रवर्तते ॥२३॥
ताम्राक्षश्च भवेज्जन्तुरुरोघातप्रपीडितः ।
दुर्गन्धोच्छ्वासवदनो गन्धानपि न वेत्ति सः ॥२४॥
सर्व एव प्रतिश्याया नरस्याप्रतिकारिणः ।
दुष्टतां यान्ति कालेन तदाऽसाध्या भवन्ति हि ॥२५॥
मूर्च्छन्ति चात्र क्रिमयः श्वेताः स्निग्धास्तथाऽणवः ।
क्रिमितो + यः शिरोरोगस्तुल्यं तेनास्य लक्षणम् ॥२६॥
बाधिर्यमान्ध्यमघ्रत्वं घोरांश्च नयनामयान् ।

÷ 'शूनाक्षो' + 'क्रिमिजो'

शोथाग्निसादकासांश्च वृद्धाःकुर्वन्ति पीनसाः ॥२७॥
अर्बुदं सप्तधा शोथाश्चत्वारोऽर्शश्चतुर्विधम् ।
चतुर्विधं रक्तपित्तमुक्तं घ्राणेऽपि तद्विदुः ॥२८॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने नासारोगनिदानं
समाप्तम् ॥५८॥

अथ नेत्ररोगनिदानम् ।

उष्णाभितप्तस्य जले प्रवेशाद्
दूरेक्षणात् स्वप्नविपर्ययाच्च ।
स्वेदाद्रजोधूमनिषेवणाच्च
छर्देर्विघाताद्वमनातियोगात् ॥ १ ॥
द्रवात्तथाऽन्नान्निशि सेविताच्च
विण्मूत्रवातक्रमनिग्रहाच्च ।
प्रसक्तसंरोदनकोपशोका-
च्छिरोऽभिघातादतिमद्यपानात् ॥ २ ॥
तथा ऋतूनां च विपर्ययेण
क्लेशाभिघातादतिमैथुनाच्च ।
बाष्पग्रहात् सूक्ष्मनिरीक्षणाच्च
नेत्रे विकाराञ्जनयंति दोषाः ॥ ३ ॥
(सिरानुसारिभिर्दोषैर्विगुणैरूर्ध्वमाश्रितैः ।
जायन्ते नेत्रभागेषु रोगाः परमदारुणाः ॥ १ ॥)
वातात् पित्तात् कफाद्रक्तादभिष्यन्दश्चतुर्विधः ।
प्रायेण जायते घोरः सर्वनेत्रामयाकरः ॥ ४ ॥
निस्तोदनस्तम्भनरोमहर्ष
सङ्घर्ष पारुष्यशिरोऽभितापाः ।

विशुष्कभावः शिशिराश्रुता च
वाताभिपन्ने नयने भवन्ति ॥ ५ ॥
दाहप्रपाकौ शिशिराभिनन्दा
धूमायनं बाष्पसमुच्छ्रयश्च ।
उष्णाश्रुता पीतकनेत्रता च
पित्ताभिपन्ने नयने भवन्ति ॥ ६ ॥
उष्णाभिनन्दा गुरुताऽक्षिशोथः
कण्डूपदेहावतिशीतता च ।
स्रावो मुहुः पिच्छिल एव चापि
कफाभिपन्ने नयने भवन्ति ॥ ८ ॥
ताम्राश्रुता लोहितनेत्रता च
नाड्यः समन्तादतिलोहिताश्च ।
पित्तस्य लिङ्गानि च यानि तानि
रक्ताभिपन्ने नयने भवन्ति ॥ ८ ॥
वृद्धैरेतैरभिष्यन्दैर्नराणामक्रियावताम् ।
तावन्तस्त्वधिमन्थाः स्युर्नयने तीव्रवेदनाः ॥ ९ ॥
उत्पाट्यत इवात्यर्थं नेत्रं निर्मथ्यते तथा ।
शिरसोऽर्धं च तं विद्यादधिमन्थं स्वलक्षणैः ॥१०॥
हन्याद्दृष्टिं श्लैष्मिकः सप्तरात्रा-
द्योऽधीमन्थो रक्तजः पंचरात्रात् ❀।
षड्रात्राद्वावातिको वै निहन्यात्
मिथ्याचारात् पैत्तिकः सद्य एव ॥११॥
उदीर्णवेदनं नेत्रं रागशोथसमन्वितम् ।

❀ 'दधीमन्थो रक्तजः पञ्चरात्रात्'

घर्षनिस्तोदशूलाश्रुयुक्तमामान्वितं विदुः ।१२॥

मन्दवेदनता कण्डूः संरम्भाश्रुप्रशान्तता ।
प्रशस्तवर्णता चाक्ष्णोः संपक्वदोषमादिशेत् ॥१३॥

कण्डूपदेहाश्रुयुतः पक्वोदुम्बरसन्निभः ।
संरम्भी पच्यते यस्तु नेत्रपाकः स शोथजः ।
शोथहीनानि लिङ्गानि नेत्रपाके त्वशोथजे ॥१४॥

उपेक्षणादक्षि यदाऽधिमन्थो
वातात्मकः सादयति प्रसह्य ।
रुजाभिरुग्राभिरसाध्य एष
हताधिमन्थः खलु नाम रोगः ॥१५॥

वारंवारं च पर्येति भ्रुवौ नेत्रे च मारुतः ।
रुजश्च विविधास्तीव्राः स ज्ञेयो वातपर्ययः ॥१६॥

यत् कूणितं दारुणरूक्षवर्त्म
सन्दह्यते चाविलदर्शनं यत् ।
सुदारुणं यत् प्रतिबोधने च
शुष्काक्षिपाकोपहतं तदक्षि ॥१७॥

यस्यावटूकर्णशिरोहनुस्थो +
मन्यागतो वाऽप्यनिलोऽन्यतो वा ।
कुर्याद्रुजं वै भ्रुवि लोचने च
तमन्यतोवातमुदाहरन्ति ॥१८॥

श्यावं लोहितपर्यन्तं सर्वं चाक्षि प्रपच्यते ।
सदाहशोथं सास्रावमम्लाध्युषितमम्लतः ॥१९॥

+ 'यस्यावटुकर्ण शिरोहनुस्थो'

अवेदना वापि सवेदना वा
यस्याच्छिराज्यो हि भवन्ति ताम्राः ।
मुहुर्विरज्यन्ति च याः सताहग्
व्याधिः शिरोत्पात इति प्रदिष्टः ॥२०॥
मोहाच्छिरोत्पात उपेक्षितस्तु
जायेत रोगस्तु शिराप्रहृषः ।
ताम्राभमस्रं स्रवति प्रगाढं
तथा न शक्नोत्यभिवीक्षितुं च ॥२१॥
निमग्नरूपं तु भवेद्धि कृष्णे
सूच्येव विद्धं प्रतिभाति यद्वै ।
स्रावं स्रवेदुष्णमतीव यच्च
तत्सव्रणं शुक्रमुदाहरंति ÷॥२२॥
दृष्टेः समीपे न भवे यच्च
न चावगाढं न च संस्रवेद्धि ।
अवेदनं वा न च युग्मशुक्रं ×
तत्सिद्धिमायाति कदाचिदेव ॥२३॥
स्यन्दात्मकं कृष्णगतं सचोषं
शंखेन्दुकुन्दप्रतिमावभासम् ।
वैहायसाभ्रप्रतनुप्रकाश-
मथाव्रणं साध्यतमं वदंति ॥२४॥
गम्भीरजातं बहलं च शुक्रं ❀
चिरोत्थितं चापि वदंति कृच्छ्रम् ।

÷ 'शुक्रमुदाहरन्ति' × 'युग्मशुक्रं' ❀ 'शुक्रं'

विच्छिन्नमध्यं पिशितावृतं वा
चलं सिरासूक्ष्ममदृष्टिकृच्च ।
द्वित्वग्गतं लोहितमन्ततश्च
चिरोत्थितं चापि विवर्जनीयम् ॥२५॥

उष्णाश्रुपातः पिडिका च नेत्रे
यस्मिन्भवेन्मुद्गनिभं च शुक्रम् ।
तदप्यसाध्यं प्रवदंति केचिद्
अन्यच्च यत्तित्तिरिपक्षतुल्यम् ॥२६॥

श्वेतः समाक्रामति सर्वतो हि
दोषेण यस्यासितमण्डलं च ।
तमक्षिपाकात्ययमक्षिरोगं
सर्वात्मकं वर्जयितव्यमाहुः ॥२७॥

अजापुरीषप्रतिमो रुजावान्
सलोहितो लोहितपिच्छिलास्रः ।
विगृह्य कृष्णं प्रचयोऽभ्युपैति
तच्चाजकाजातमिति व्यवस्येत् ॥२८॥

प्रथमे पटले दोषा यस्य दृष्ट्यां व्यवस्थिताः ।
अव्यक्तानि स रूपाणि कदाचिदथ पश्यति ॥२९॥

(मसूरदलमात्रां तु पंचभूतप्रसादजाम् ।
तेजोजलाश्रितं बाह्यं तेष्वन्यत्पिशिताश्रितम् ॥ १ ॥
मेदस्तृतीयं पटलमाश्रितं त्वस्थि चापरम् ।
पञ्चमांशसमं दृष्टेस्तेषां बाहुल्यमिष्यते ॥ २ ॥)

दृष्टिर्भृशं विह्वलति द्वितीयं पटलं गते ।

मक्षिकामशकान्श्चापि*जालकानि च पश्यति॥३०॥
मण्डलानि पताकांश्च मरीचीन्कुण्डलानि च ।
परिप्लवांश्च विविधान्वर्षमभ्रं तमांसि च ॥३१॥
दूरस्थानि च रूपाणि मन्यते स समीपतः ।
समीपस्थानि दूरे च दृष्टेर्गोचरविभ्रमात् ॥३२॥
यत्नवानपि चात्यर्थं सूचीपा न पश्यति ।
ऊर्ध्वं पश्यति नाधस्तात्तृतीयं पटलं गते ॥३३॥
महान्त्यपि च रूपाणि छादितानीव चांबरैः ।
कर्णनासाक्षिहीनानि विकृतानीव पश्यति ॥३४॥
यथादोषं च रज्येत दृष्टिर्दोषे बलीयसि ।
अधःस्थिते समीपस्थं दूरस्थं चोपरिस्थिते ॥३५॥
पार्श्वस्थिते तथा दोषे पार्श्वस्थं नैव पश्यति ।
समन्ततः स्थिते दोषे सङ्कुलानीव पश्यति॥३६॥
दृष्टिमध्यस्थिते दोषे महद् ह्रस्वं च पश्यति ।
द्विधा स्थिते द्विधा पश्येद्बहुधा चानवस्थिते ॥३७॥
दोषे दृष्ट्याश्रिते तिर्यक् स एवं मन्यते द्विधा ।
तिमिराख्यः स वै दोषश्चतुर्थपटलं गतः ॥३८॥
रुणद्धि सर्वतो दृष्टिं लिङ्गनाशमतः परम् ।
अस्मिन्नपि तमोभुते नातिरूढे महागदे ॥३९॥
चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रावन्तरीक्षे च विद्युतः ।
निर्मलानि च तेजांसि भ्राजिष्णून्यथ पश्यति ॥४०॥
स एव लिंगनाशस्तु नीलिकाकाचसंज्ञितः ।
वातेन चापि रूपाणि भ्रमन्तीव च पश्यति ॥४१॥

---

* 'मक्षिकामशकांकेशान्'

आविलान्यरुणाभानि व्याविद्धानीव मानवः ।
पित्तेनादित्यखद्योतशक्रचापतडिद्गुणान् ॥४२॥
नृत्यतश्चैव शिखिनः सर्वं नीलं च पश्यति ।
कफेन पश्येद्रूपाणि स्निग्धानि च सितानि च ॥४३॥
(पश्येदसूक्ष्माण्यत्यर्थं व्यभ्रमेवाभ्रसंप्लवम् ।)
सलिलप्लावितानीव परिजाड्यानि मानवः ।
पश्येद्रक्तेन रक्तानि तमांसि विविधानि च ॥४४॥
स सितान्यपि कृष्णानि पीतान्यपि च मानवः ।
सन्निपातेन चित्राणि विप्लुतानिव पश्यति ॥४५॥
बहुधा च द्विधा चापि सर्वाण्येव समन्ततः ॥
हीनाधिकाङ्गान्यपि तु ज्योतींष्यपि च भूयसा ॥४६॥
पित्तं कुर्यात्परिम्लायि मूर्च्छितं पित्ततेजसा । ×
पीता दिशस्तु खद्योतान् भास्करं चापि पश्यति ॥४७॥
विकीर्यमाणान्खद्योतैर्वृक्षांस्तेजोभिरेव वा ।
वक्ष्यामि षड्विधं रागैर्लिङ्गनाशमतः परम् ॥४८॥
रागोऽरुणो मारुतजः प्रदिष्टो
म्लायी च नीलश्च तथैव पित्तात् ।
कफात्सितः शोणितजः सरक्तः
समस्तदोषप्रभवो विचित्रः ॥४९॥
अरुणं मण्डलं दृष्ट्यां स्थूलकाचारुणप्रभम् ।
परिम्लायिनि रोगे स्यान्म्लायि नीलं च मण्डलम् ॥५०॥
दोषक्षयात्स्वयं तत्र कदाचित् स्यात्तु दर्शनम् ।
अरुणं मण्डलं वाताच्चंचलं परुषं तथा ॥५१॥

× 'रक्ततेजसा'

पित्तान्मण्डलमानीलं कांस्याभं पीतमेव च ।
श्लेष्मणा बहुलं पीतं* शं खकुन्देन्दुपाण्डुरम् ॥५२॥
चलत्पद्मपलाशस्थः शुक्लो बिन्दुरिवांभसः ।
मृज्यमाने च नयने मण्डलं तद्विसर्पति ॥५३॥
प्रवालपद्मपत्राभं मण्डलं शोणितात्मकम् ।
दृष्टिरागो भवेच्चित्रो लिंगनाशे त्रिदोषजे ।
यथास्वं दोषलिङ्गानि सर्वेऽप्यत्र भवंति हि ॥५४॥
षड्लिङ्गनाशाः षडिमे च रोगा
दृष्ट्याश्रयाः षट् च षडेव वाच्याः ।
पित्तेन दुष्टेन सदा तु दृष्टिः
पीता भवेद्यस्य नरस्य किंचित् ॥५५॥
पीतानि रूपाणि च तेन पश्येत्-
स वै नरः पित्तविदग्धदृष्टिः ।
प्राप्ते तृतीयं पटलं तु दोषे
दिवा न पश्येन्निशि चेक्षते सः ॥५६॥
रात्रौ च शीतानुगृहीतदृष्टिः
पित्ताल्पभावादपि तानि पश्येत् ।
तथा नरः श्लेष्मविदग्धदृष्टि-
स्तान्येव शुक्लानि तु मन्यते सः ॥५७॥
त्रिषु स्थितो ऽल्पः पटलेषु दोषो
नक्तांध्यमापादयति प्रसह्य ।
दिवा स सूर्यानुगृहीतदृष्टिः
पश्येत्तु रूपाणि कफाल्पभावात् ॥५८॥

---

* 'बहलं स्निग्धं'

शोकज्वरायासशिरोभितापै-

रभ्याहता यस्य नरस्य दृष्टिः ।

धूम्रांस्तथा पश्यति सर्वभावान्

स धूमदर्शीति नरः प्रदिष्टः ॥५९॥

यो ह्रस्वजाड्यो दिवसेषु कृच्छ्राद्

ह्रस्वानि रूपाणि च तेन पश्येत् ।

विद्योतते यस्य नरस्य दृष्टि-

र्दोषाभिपन्ना नकुलस्य यद्वत् ॥६०॥

चित्राणि रूपाणि दिवा स पश्येत्

स वै विकारो नकुलांध्यसंज्ञः ।

दृष्टिर्विरूपा श्वसनोपसृष्टा

संकोचमभ्यंतरतस्तु याति ॥६१॥

रुजावगाढा च तमक्षिरोगं

गम्भीरिकेति प्रवदंति तज्ज्ञाः ।

बाह्यौ पुनर्द्वाविह संप्रदिष्टौ

निमित्ततश्चाप्यनिमित्ततश्च ॥६२॥

निमित्ततस्तत्र शिरोऽभितापा-

ज्ज्ञेयस्त्वभिष्यंदनिदर्शनः सः ।

सुरर्षिगंधर्वमहोरगाणां

सन्दर्शनेनापि च भास्करस्य ॥६३॥

हन्येत दृष्टिर्मनुजस्य यस्य

स लिंगनाशस्त्वनिमित्तसंज्ञः ।

तत्राक्षि विस्पष्टमिवावभाति

वैदूर्यवर्णा विमला च दृष्टिः ॥६४॥

प्रस्तार्यर्म तनुस्तीर्णं श्यावं रक्तनिभं सिते ।
सश्वेतं मृदु शुक्लार्म शुक्ले तद्वर्द्धते चिरात् ॥६५॥
पद्माभं मृदु रक्तार्म यन्मांसं चीयते सिते ।
पृथु मृद्वधिमांसार्म बहलं च यकृन्निभम् ।
स्थिरं प्रस्तारि मांसाढ्यं शुष्कं स्नाय्वर्म पंचमम् ॥६६॥
श्यावाः स्युः पिशितनिभास्तु बिंदवो ये
शुक्त्याभाः सितनियताः स शुक्तिसंज्ञः ।
एको यः शशरुधिरोपमश्च बिन्दुः
शुक्लस्थो भवति तमर्जुनं वदंति ॥६७॥
श्लेष्ममारुतकोपेन शुक्ले पिष्टं समुन्नतम् ।
पिष्टवत्पिष्टकं विद्धि मलाक्तादर्शसन्निभम् ॥६८॥
जालाभः कठिनशिरो महान् सरक्तः
संतानः स्मृत इह जालसंज्ञितस्तु ।
शुक्लस्थाः सितपिडकाः शिरावृता या-
स्ता ब्रूयादसितसमीपजाः सिराजाः ।
कांस्याभोऽमृदुरथ वारिबिन्दुकल्पो
विज्ञेयो नयनसिते बलाससंज्ञः ॥६९॥
पक्कः शोथः संधिजो यः सतोदः
स्रवेत्पूयं पूति पूयालसाख्यः ।
ग्रंथिर्नाल्पो दृष्टिसंधावपाकी
कंडूप्रायो नीरुजस्तूपनाहः ॥७०॥
गत्वा संधीनश्रुमार्गेण दोषाः
कुर्युः स्रावाँल्लिङ्गरूपैः स्वैरुपेतान् ।
तं हि स्रावं नेत्रनाडीति चैके
तस्यालिङ्गं कीर्तयिष्ये चतुर्धा ॥७१॥

पाकात् संधौ संस्रवेद्यस्तु पूयं
पूयास्रावोऽसौ गदः सर्वजस्तु ।
श्वेतं सान्द्रं पिच्छिलं यः स्रवेत्तु
श्लेष्मास्रावोऽसौ विकारो मतस्तु ॥७२॥
रक्तस्रावः शोणितोत्थो विकारः
स्रवेद्दुष्टं तत्ररक्तं प्रभूतम् ।
हरिद्राभं पीतमुष्णं जलाभं
पित्तास्रावःसंस्रवेत्संधिमध्यात् ॥७३॥
ताम्रा तन्वी दाहशूलोपपन्ना*
रक्ताज्ज्ञेया पर्वणी वृत्तशोथा ÷ ।
जाता सन्धौ कृष्णशुक्लेऽलजी स्यात्
तस्मिन्नेव ख्यापिता पूर्वलिंगैः ॥७४॥
क्रिमिग्रंथिर्वर्त्मनः पक्ष्मणश्च
कण्डूं कुर्युः क्रिमयःसंधिजाताः ।
नानारूपा वर्त्मशुक्लांतसंधौ
चरंत्यंतर्लोचनं दूषयंतः ॥७५॥
अभ्यन्तरमुखी ताम्रा बाह्यतो वर्त्मनश्च या ।
सोत्संगोत्संगपिडका सर्वजा स्थूलकण्डुरा ॥७६॥
वर्त्मान्ते पिडका ध्माता भिद्यन्ते च स्रवंति च ।
कुंभीकाबीजप्रतिमाः कुंभीकाः सन्निपातजाः ॥७७॥
स्राविण्यः कण्डुरा गुर्व्यो रक्तसर्षपसन्निभाः ।
रुजावत्यश्च पिडकाः पोथक्य इति कीर्तिताः ॥७८॥
पिडका या खरा स्थूला सूक्ष्माभिरभिसंवृता ।
वर्त्मस्था शर्करा नाम स रोगो वर्त्मदूषकः ॥७९॥

---

*'दाहपाकोपपन्ना' ÷ 'ज्ञेयावैद्यैःपर्वणी वृत्तशोथा'

एर्वारुबीजप्रतिमाः पिडका मंदवेदनाः ।
श्लक्ष्णाः खराश्च वर्त्मस्थास्तदर्शोवर्त्म कीर्त्यते ॥८०॥
दीर्घाङ्कुरः खरः स्तब्धो दारुणोऽभ्यन्तरोद्भवः ।
व्याधिरेषोऽभिविख्यातः शुष्कार्शो नाम नामतः॥८१॥
दाहतोदवती ताम्रा पिडका वर्त्मसंभवा ।
मृद्वी मंदरुजा सूक्ष्मा ज्ञेया साऽञ्जननामिका॥८२॥
वर्त्मोपचीयते यस्य पिडकाभिः समंततः ।
सवर्णाभिः स्थिराभिश्च विद्याद्बहुलवर्त्म तत् ॥८३॥
कण्डूमताऽल्पतोदेन वर्त्मशोथेन यो नरः ।
न स संछादयेदक्षि यत्रासौ वर्त्मबंधकः ॥८४॥
मृद्वल्पवेदनं ताम्रं यद्वर्त्म सममेव च ।
अकस्माच्च भवेद्रक्तं क्लिष्टवर्त्मेति तद्विदुः ॥८५॥
क्लिष्टं पुनः पित्तयुतं शोणितं विदहेद्यदा ।
ततः क्लिन्नत्वमापन्नमुच्यते वर्त्मकर्दमः ॥८६॥
यद्वर्त्म बाह्यतोऽन्तश्च श्यावं शूलं सवेदनम् ।
तदाहुः श्याववर्त्मेति वर्त्मरोगविशारदाः ॥८७॥
अरुजं बाह्यतः शूनं वर्त्म यस्य नरस्य हि ।
प्रक्लिन्नवर्त्म तद्विद्यात् क्लिन्नमत्यर्थमंततः ॥८८॥
यस्य धौतान्यधौतानि संबध्यंते पुनः पुनः ।
वर्त्मान्यपरिपक्वानि विद्यादक्लिन्नवर्त्म तत् ॥८९॥
विमुक्तसंधि निश्चेष्टं वर्त्म यस्य न मील्यते ।
एतद्वातहतं वर्त्म जानीयादक्षिचिन्तकः ॥९०॥
वर्त्मान्तरस्थं विषमं ग्रन्थिभूतमवेदनम् ।
आचक्षीतार्बुदमिति सरक्तमविलंबितम् ॥९१॥

निमेषिणीः सिरा वायुः प्रविष्टो संधिसंश्रयाः ※।
प्रचालयति वर्त्मानि निमेषं नाम तद्विदुः ॥९२॥
यः स्थितोवर्त्म मध्येतु लोहितो मृदुरंकुरः।
तद्रक्तजं शोणितार्शश्छिन्नं छिन्नं प्रवर्धते ॥९३॥
अपाकी कठिनः स्थूलो ग्रन्थिर्वर्त्मभवोऽरुजः।
लगणो नाम स व्याधिर्लिङ्गतः परिकीर्तितः ÷ ॥९४॥
त्रयो दोषा बहिः शोथं कुर्युश्छिद्राणि वर्त्मनोः।
प्रस्रवन्त्यंतरुदकं बिसवद्बिसवर्त्म तत् ॥९५॥
वाताद्या वर्त्मसंकोचं जनयंति मला यदा।
तदा द्रष्टुं न शक्नोति कुंचनं नाम तद्विदुः ॥९६॥
प्रचालितानि वातेन पक्ष्माण्यक्षि विशंति हि।
घृष्यंत्यक्षि मुहुस्तानि संरम्भं जनयन्ति च ॥९७॥
असिते सितभागे च मूलकोशात्पतन्त्यपि।
पक्ष्मकोपः स विज्ञेयो व्याधिः परमदारुणः ॥९८॥
वर्त्म पक्ष्माशयगतं पित्तं रोमाणि शातयेत्।
कण्डूं दाहं च कुरुते पक्ष्मशातं तमादिशेत् ॥९९॥
(नव संध्याश्रयास्तेषु वर्त्मजास्त्वेकविंशतिः।
शुक्लभागे दशैकश्च चत्वारः कृष्णभागजाः ॥ १ ॥
सर्वाश्रयाः सप्तदश दृष्टिजा द्वादशैव तु।
बाह्यजौ द्वौ समाख्यातौ रोगौ परमदारुणौ ॥
भूय एतान्प्रवक्ष्यामि संख्यारूपचिकित्सितैः ॥ २ ॥)

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने
नेत्ररोगनिदानं समाप्तम् ॥ ५९ ॥

※'वर्त्म संश्रयः'

÷ 'सकण्डुःपिच्छिलःकोलसंस्थानो लगणस्तु सः'

अथ शिरोरोगनिदानम् ।

शिरोरोगास्तु जायन्ते वातपित्तकफैस्त्रिभिः ।
सन्निपातेन रक्तेन क्षयेण क्रिमिभिस्तथा ।
सूर्यावर्तानंतवाताधर्वभेदकशंखकैः ॥ १ ॥
(एकादशप्रकारस्य लक्षणं संप्रवक्ष्यते ।)

यस्यानिमित्तं शिरसो रुजश्च
भवन्ति तीव्रा निशि चातिमात्रम् ।
बन्धोपतापैः प्रशमश्च यत्र
शिरोऽभितापः स समीरणेन ॥ २ ॥

यस्योष्णमङ्गारचितं यथैव
भवेच्छिरो धूप्यति*चाक्षिनासम् ।
शीतेन रात्रौ च भवेच्छमश्च
शिरोऽभितापः स तु पित्तकोपात् ॥ ३ ॥

शिरो भवेद्यस्य कफोपदिग्धं
गुरु प्रतिष्टब्धमथो हिमं च ।
शूनाक्षिकूटं वदनं च यस्य
शिरोऽभितापः स कफप्रकोपात् ॥ ४ ॥

शिरोऽभितापे त्रितयप्रवृत्ते
सर्वाणि लिंगानि समुद्भवंति ।
रक्तात्मकः पित्तसमानलिंगः
स्पर्शासहत्वं शिरसो भवेच्च ॥ ५ ॥

असृग्वसाश्लेष्मसमीरणानां
शिरोगतानामिह संक्षयेण ।

---

* 'दह्यति'

क्षयप्रवृत्तः शिरसोऽभितापः
कष्टो भवेदुग्ररुजोऽतिमात्रम् ।
संस्वेदनच्छर्दनधूमनस्यै-
रसृग्विमोक्षैश्च विवृद्धिमेति ॥ ६ ॥
निस्तुद्यते यस्य शिरोऽतिमात्रं
संभक्ष्यमाणं स्फुरतीव चान्तः ।
घ्राणाच्च गच्छेत् सलिलं* सपूयं
शिरोऽभितापः क्रिमिभिः स घोरः ॥ ७ ॥
सूर्योदयं या प्रति मन्दमन्द-
मक्षिभ्रुवं रुक्समुपैति गाढा ।
विवर्द्धते चांशुमता सहैव
सूर्यापवृत्तौ विनिवर्तते च ।
("शीतेन शांतिं लभते कदाचि-
दुष्णेन जंतुः सुखमाप्नुयाच्च")
सर्वात्मकं कष्टतमं विकारं
सूर्यापवर्तं तमुदाहरंति ॥ ८ ॥
दोषास्तु दुष्टास्त्रय एव मन्यां
संपीड्य घाटासु रुजां सुतीव्राम् ।
कुर्वंति योऽक्षिभ्रुवि शंखदेशे
स्थितिं करोत्याशु विशेषतस्तु ॥ ९ ॥
गण्डस्य पार्श्वे तु करोति कम्पं
हनुग्रहं लोचनजांश्च रोगान् ।
अनन्तवातं तमुदाहरंति
दोषत्रयोत्थं शिरसो विकारम् ॥१०॥

* 'गच्छेद्रुधिरं'

रूक्षाशनात्यध्यशनप्राग्वातावश्यमैथुनैः ।
वेगसंधारणायासव्यायामैः कुपितोऽनिलः ॥११॥
केवलः सकफो वाऽर्द्धं गृहीत्वा शिरसो बली ।
मन्याभ्रूशंखकर्णाक्षिललाटार्धेऽतिवेदनाम् ॥१२॥
शस्त्रारणिनिभां कुर्यात्तीव्रां सोऽर्धावभेदकः ।
नयनं वाऽथवा श्रोत्रमतिवृद्धो विनाशयेत् ॥१३॥
रक्तपित्तानिला दुष्टाः शङ्खदेशे विमूर्च्छिताः ।
तीव्ररुग्दाहरागं हि शोथं कुर्वन्ति दारुणम् ॥१४॥
स शिरो विषवद्वेगी निरुन्ध्याशु गलं तथा ।
त्रिरात्राज्जीवितं हन्ति शङ्खको नामतः परम् ।
त्र्यहाज्जीवति भैषज्यं प्रत्याख्याय समाचरेत् ॥१५॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने
शिरोरोग निदानं समाप्तम् ॥६०॥

अथासृग्दरनिदानम् ।

विरुद्धमद्याध्यशनादजीर्ण-
द्गर्भप्रपातादतिमैथुनाच्च ।
यानाध्वशोकादतिकर्षणाच्च
भाराभिघाताच्छयनाद्दिवा च ॥
तं श्लेष्मपित्तानिलसन्निपातै-
श्चतुष्प्रकारं प्रदरं वदंति ॥ १ ॥
असृग्दरं भवेत्सर्वं सांगमर्दं सवेदनम् ।
तस्यातिवृत्तौ दौर्बल्यं भ्रमो मूर्च्छा मदस्तृषा ÷ ।
दाहः प्रलापः पाण्डुत्वं तन्द्रा रोगाश्च वातजाः ॥ २ ॥

÷ तस्यातिवृद्धौ दौर्बल्यं भ्रमो मूर्च्छा मदस्तृषा ॥

आमं सपिच्छाप्रतिमं सपांडु
पुलाकतोयप्रतिमं कफात्तु ।
सपीतनीलासितरक्तमुष्णं
पित्तार्त्तियुक्तं भृशवेगि पित्तात् ॥ ६ ॥
रूक्षारुणं फेनिलमल्पमल्पं
वातार्त्ति वातात्पिशितोदकाभम् ।
सक्षौद्रसर्पिर्हरितालवर्णं
मज्जप्रकाशं कुणपं त्रिदोषात् ॥ ४ ॥
तं चाप्यसाध्यं प्रवदन्ति तज्ज्ञा
न तत्र कुर्वीत भिषक् चिकित्साम् ।
शश्वत् स्रवन्तीमास्रावं तृष्णादाहज्वरान्विताम् ।
क्षीणरक्तां दुर्बलां च तामसाध्यां विनिर्दिशेत् ॥ ५ ॥
मासान्निष्पिच्छदाहार्ति पञ्चरात्रानुबन्धि च ।
नैवातिबहुलात्यल्पमार्तवं शुद्धमादिशेत् ॥ ६ ॥
शशासृक्प्रतिमं यच्च यद्वा लाक्षारसोपमम् ।
तदार्तवं प्रशंसन्ति यच्चाप्सु न विरज्यते ॥ ७ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदानेऽ
सृग्दरनिदानं समाप्तम् ॥ ६१ ॥

अथ योनिव्यापन्निदानम् ।

विंशतिर्व्यापदो योनौ निर्दिष्टा रोगसंग्रहे ।
मिथ्याचारेण ताः स्त्रीणां प्रदुष्टेनार्त्तवेन च ॥ १ ॥
जायन्ते बीजदोषाच्च दैवाच्च शृणु ताः पृथक् ।
सा फेनिलमुदावर्ता रजः कृच्छ्रेण मुञ्चति ॥ २ ॥

वन्ध्यां नष्टार्तवां विद्याद्विप्लुतां नित्यवेदनाम् ।
परिप्लुतायां भवति ग्राम्यधर्मेण रुग्भृशम् ॥ ३ ॥
वातला कर्कशा स्तब्धा शूलनिस्तोदपीडिता ।
चतसृष्वपि चाद्यासु भवन्त्यनिलवेदनाः ॥ ४ ॥
सदाहं क्षीयते रक्तं यस्यां सा लोहितक्षया ।
सवातमुद्गिरेद्बीजं वामिनी रजसा युतम् ॥ ५ ॥
प्रस्रंसिनी स्रंसते च क्षोभिता दुष्प्रजायिनी ।
स्थितं स्थितं हन्ति गर्भं पुत्रघ्नी रक्तसंक्षयात् ॥ ६ ॥
अत्यर्थं पित्तला योनिर्दाहपाकज्वरान्विता ।
चतसृष्वपि चाद्यासु पित्तलिङ्गोच्छ्रयो भवेत् ॥ ७ ॥
अत्यानन्दा न सन्तोषं ग्राम्यधर्मेण गच्छति ।
कर्णिन्यां कर्णिका योनौ श्लेष्मासृग्भ्यां प्रजायते॥८ ॥
मैथुनेऽचरणा पूर्वं पुरुषादतिरिच्यते ।
बहुशश्चातिचरणा तयोर्बीजं न विन्दति ॥ ९ ॥
श्लेष्मला पिच्छिला योनिः कण्डूग्रस्ताऽतिशीतला ।
चतसृष्वपि चाद्यासु श्लेष्मलिङ्गोच्छ्रयो भवेत् ॥१०॥
अनार्त्तवाऽस्तनी षण्डी खरस्पर्शा च मैथुने ।
अतिकायगृहीतायास्तरुण्यास्त्वण्डली भवेत् ॥११॥
विवृता च महायोनिः सूचीवक्त्राऽतिसंवृता ।
सर्वलिङ्गसमुत्थाना सर्वदोषप्रकोपजा ॥१२॥
चतसृष्वपि चाद्यासु सर्वलिङ्गोच्छ्रयो भवेत् ।
पञ्चासाध्या भवन्तीह योनयः सर्वदोषजाः ॥१३॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने
योनिव्यापन्निदानं समाप्तम् ॥६२॥

अथ योनिकन्दनिदानम् ।

दिवास्वप्नादतिक्रोधाद्व्यायामादतिमैथुनात् ।
क्षताच्च नखदन्ताद्यैर्वाताद्याः कुपिता यदा ॥ १ ॥
पूयशोणितसंकाशं निकुचाकृतिसंनिभम् ❀।
जनयन्ति यदा योनौ नाम्ना कन्दः स योनिजः॥ २ ॥
रूक्षं विवर्णं स्फुटितं वातिकं तं विनिर्दिशेत् ।
दाहरागज्वरयुतं विद्यात् पित्तात्मकं तु तम् ॥ ३ ॥
नीलपुष्पप्रतीकाशं कण्डूमन्तं कफात्मकम् ।
सर्वलिङ्गसमायुक्तं सन्निपातात्मकं विदुः ॥ ४ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने
योनिकंदनिदानं समाप्तम् ॥६३॥

अथ मूढगर्भनिदानम् ।

भयाभिघातात्तीक्ष्णोष्णपानाशननिषेवणात् ।
गर्भे पतति रक्तस्य सशूलं दर्शनं भवेत् ॥ १ ॥
आचतुर्थात्ततो मासात्प्रस्रवेद्गर्भविद्रवः ।
ततः स्थिरशरीरस्य पातः पञ्चमषष्ठयोः ॥ २ ॥
गर्भोऽभिघातविषमाशनपीडनाद्यैः
पक्वं द्रुमादिव फलं पतति क्षणेन ।
मूढः करोति पवनः खलु मूढगर्भं
शूलं च योनिजठरादिषु मूत्रसंगम् ॥ ३ ॥
भुग्नोऽनिलेन विगुणेन ततः स गर्भः
संख्यामतीत्य बहुधा समुपैति योनिम् ।

❀ 'लिकुचा कृतिसन्निभम्

द्वारं निरुध्य शिरसा जठरेण कश्चित्
कश्चिच्छरीरपरिवर्तितकुब्जदेहः ॥ ४ ॥
एकेन कश्चिदपरस्तु भुजद्वयेन
तिर्यग्गतो भवति कश्चिदवाङ्मुखोऽन्यः ।
पार्श्वापवृत्तगतिरेति तथैव कश्चि-
दित्यष्टधा गतिरियं ह्यपरा चतुर्धा ॥ ५ ॥
संकीलकः प्रतिखुरः परिघोऽथ बीज-
स्तेषूर्ध्वबाहुचरणैः शिरसा च योनिम् ।
सङ्गी च यो भवति कीलकवत् स कीलो
दृश्यैः खुरैः प्रतिखुरं स हि कायसंगी ॥
गच्छेद्भुजद्वयशिराः स च बीजकाख्यो
योनौ स्थितः स परिघः परिघेण तुल्यः ॥ ६ ॥
अपविद्धशिरा या तु शीतांगी निरपत्रपा ।
नीलोद्धतसिरा हन्ति सा गर्भं स च तां तथा ॥ ७ ॥
गर्भास्पन्दनमावीनां* प्रणाशः श्यावपाण्डुता ।
भवेदुच्छ्वासपूतित्वं शूनताऽन्तर्मृते शिशौ ॥ ८ ॥
मानसागन्तुभिर्मातुरुपतापैः प्रपीडितः ।
गर्भो व्यापद्यते कुक्षौ व्याधिभिश्च निपीडितः ॥ ९ ॥
योनिसंवरणं संगः कुक्षौ मक्कल एव च ।
हन्युः स्त्रियं मूढगर्भा यथोक्ताश्चाप्युपद्रवाः ॥ १० ॥
(वायुः प्रकुपितः कुर्यात् संरुध्य रुधिरं स्रुतम् ।
सूताया हृच्छिरोबस्ति शूलं मक्कल संज्ञकम् ॥ १ ॥)
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने मूढगर्भनिदानं
समाप्तम् ॥ ६४ ॥

---

* 'गर्भस्पन्दनमाधीनां'

अथ सूतिकारोगनिदानम् ।

अंगमर्दो ज्वरः कंपः पिपासा गुरुगात्रता ।
शोथः शूलातिसारौ च सूतिकारोगलक्षणम् ॥ १ ॥
मिथ्योपचारात्संक्लेशाद्विषमाजीर्णभोजनात् ।
सूतिकायाश्च ये रोगा जायन्ते दारुणास्तु ते ॥ २ ॥
ज्वरातिसारशोथाश्च शूलानाहबलक्षयाः ।
तन्द्रारुचिप्रसेकाद्याः कफवातामयोद्भवाः ॥ ३ ॥
कृच्छ्रसाध्या हि ते रोगाः क्षीणमांसबलाग्नितः ।
ते सर्वे सूतिकानाम्ना रोगास्ते चाप्युपद्रवाः ॥ ४ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने सूतिका रोग-
निदानं समाप्तम् ॥६५॥

अथ स्तनरोगनिदानम् ।

सक्षीरौ वाप्यदुग्धौ वा प्राप्य दोषः स्तनौ स्त्रियाः ।
प्रदूष्य मांसरुधिरं स्तनरोगाय कल्पते ॥ १ ॥
पञ्चानामपि तेषां हि रक्तजं विद्रधिं विना ।
लक्षणानि समानानि बाह्यविद्रधिलक्षणैः ॥ २ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने स्तनरोग
निदानं समाप्तम् ॥६६॥

अथ स्तन्यदुष्टिनिदानम् ।

[विशस्तेष्वपि गात्रेषु यथा शुक्रं न दृश्यते ॥
सर्वदेहाश्रितत्वाच्च शुक्रलक्षणमुच्यते ॥ १ ॥
तदेव चेष्टयुवतेदर्शनात्स्मरणादपि ।

शब्दसंश्रवणात्स्पर्शात्संहर्षाच्च प्रवर्त्तते ॥ २ ॥
सुप्रसन्नं मनस्तत्र हर्षणे हेतुरुच्यते ।
आहाररसयोनित्वादेवं स्तन्यमपि स्त्रियाः ॥ ३ ॥
तदेवापत्यसंस्पर्शाद्दर्शनात्स्मरणादपि ।
ग्रहणाच्च शरीरस्य शुक्रवत्संप्रवर्तते ॥
स्नेहो निरन्तरस्तत्र प्रस्रवे हेतुरुच्यते ॥ ४ ॥]
गुरुभिर्विविधैरन्नैर्दुष्टैर्दोषैः प्रदूषितम् ।
क्षीरं मातुः कुमारस्य नानारोगाय कल्पते ॥ १ ॥
कषायं सलिलप्लावि स्तन्यं मारुतदूषितम् ।
कट्वम्ललवणं पीतराजीमत्पित्तसंज्ञितम् ॥ २ ॥
कफदुष्टं घनं तोये निमज्जति सपिच्छिलम् ।
द्विलिङ्गं द्वन्द्वजं विद्यात् सर्वलिङ्गं त्रिदोषजम् ॥ ३ ॥
अदुष्टं चाम्बुनिक्षिप्तमेकीभवति पाण्डुरम् ।
मधुरं चाविवर्णं च प्रसन्नं तत् प्रशस्यते ॥ ४ ॥

इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने स्तन्यदुष्टि-
निदानं समाप्तम् ॥६७॥

अथ बालरोगनिदानम् ।

(त्रिविधः कथितो बालः क्षीरान्नोभयवर्तनः ।
स्वास्थ्यं ताभ्यामदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यां रोगसंभवः॥)
वातदुष्टं शिशुः स्तन्यं पिबन् वातगदातुरः ।
क्षामस्वरः कृशांगः स्याद्बद्धविण्मूत्रमारुतः ॥ १ ॥
स्विन्नो भिन्नमलो बालः कामलापित्तरोगवान् ।
तृष्णालुरुष्णसर्वांगः पित्तदुष्टं पयः पिबन् ॥ २ ॥

कफदुष्टं पिबन् क्षीरं लालालुः श्लेष्मरोगवान् ।
निद्रान्वितो जडः शूनवक्त्राक्षश्छर्दनः शिशुः ❀ ॥ ३ ॥
द्वन्द्वजे द्वन्द्वजं रूपं सर्वजे सर्वलक्षणम् ।
शिशोस्तीव्रामतीव्रां च रोदनाल्लक्षयेद्रुजम् ॥ ४ ॥
स यं स्पृशेद् भृशं देशं यत्र च स्पर्शनाक्षमः ।
तत्र विद्याद्रुजं, मूर्ध्नि रुजं चाक्षिनिमीलनात् ॥ ५ ॥
कोष्ठे विबंधवमथुस्तनदंशान्त्रकूजनैः ।
आध्मानपृष्ठनमनजठरोन्नमनैरपि ॥ ६ ॥
बस्तौ गुह्ये च विण्मूत्रसङ्गत्रासदिगीक्षणैः ।
स्रोतांस्यंगानि संधींश्च पश्येद्यत्नान्मुहुर्मुहुः ॥ ७ ॥
(द्विलिङ्गं द्वन्द्वजं विद्यात्सर्वलिङ्गं त्रिदोषजे ।)
कुकूणकः क्षीरदोषाच्छिशूनामेव वर्त्मनि ।
जायते तेन तन्नेत्रं कण्डूरं च स्रवेन्मुहुः ॥ ८ ॥
शिशुः कुर्याल्ललाटाक्षिकूटनासावघर्षणम् ।
शक्तो नार्कप्रभां द्रष्टुं न वर्त्मोन्मीलनक्षमः ॥ ९ ॥
मातुः कुमारो गर्भिण्याः स्तन्य प्रायः पिबन्नपि ।
कासाग्निसादवमथुतंद्राकार्श्यारुचिभ्रमैः ॥१०॥
युज्यते कोष्ठवृद्ध्या च तमाहुः पारिगर्भिकम् ।
रोगं परिभवाख्यं च युञ्ज्यात्तत्राग्निदीपनम् ॥११॥
तालुमांसे कफः क्रुद्धः कुरुते तालुकंटकम् ।
तेन तालुप्रदेशस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते ॥१२॥
तालुपातः स्तनद्वेषः कृच्छ्रात् पानं शकृद्द्रवम् ।
तृडक्षिकंठास्यरुजा ग्रीवादुर्धरता वमिः ॥१३॥

❀ 'शूनः शुक्लाक्षश्छर्दनः शिशुः'

विसर्पस्तु शिशोः प्राणनाशनो बस्तिशीर्षजः ।
पद्मवर्णो महापद्मनामा दोषत्रयोद्भवः ॥१४॥
शंखाभ्यां हृदयं याति हृदयाद्वा गुदं व्रजेत् ।
क्षुद्ररोगे च कथिते त्वजगल्ल्यहिपूतने ॥१५॥
ज्वराद्या व्याधयः सर्वे महतां ये पुरेरिताः ।
बालदेहेऽपि ते तद्वद्विज्ञेयाः कुशलैः सदा ॥१६॥
क्षणादुद्विजते बालः क्षणात्त्रस्यति रोदिति ।
नखैर्दन्तैर्दारयति धात्रीमात्मानमेव वा ॥१७॥
ऊर्ध्वं निरीक्षते दन्तान् खादेत्कूजति जृम्भते ।
भ्रुवौ क्षिपति दंतौष्ठं फेनं वमति चासकृत् ॥१८॥
क्षामोऽति निशि जागर्ति शूनाक्षो भिन्नविट्स्वरः ।
मांसशोणितगन्धिश्च न चाश्नाति यथा पुरा ॥१९॥
सामान्यं ग्रहजुष्टानां लक्षणं समुदाहृतम् ।
एकनेत्रस्य गात्रस्य स्रावः स्पन्दनकंपनम् ॥२०॥
ऊर्ध्वं दृष्ट्या निरीक्षेत वक्रास्यो रक्तगंधिकः ।
दंतान् खादति वित्रस्तः स्तन्यं नैवाभिनंदति ॥२१॥
स्कंदग्रहगृहीतानां रोदनं चाल्पमेव च ।
नष्टसंज्ञो वमेत्फेनं संज्ञावानतिरोदिति ।
पूयशोणितगन्धित्वं स्कंदापस्मारलक्षणम् ॥२२॥
स्रस्तांगो भयचकितो विहंगगन्धिः
सास्रावव्रणपरिपीडितः समन्तात् ।
स्फोटैश्च प्रचिततनुः सदाहपाकै-
र्विज्ञेयो भवति शिशुः क्षतः शकुन्या ॥२३॥

व्रणैः स्फोटैश्चितं गात्रं पंकगंधं स्रवेदसृक् ।
भिन्नवर्चा ज्वरी दाही रेवतीग्रहलक्षणम् ॥२४॥
अतीसारो ज्वरस्तृष्णा तिर्यकप्रेक्षणरोदनम् ।
नष्टनिद्रस्तथोद्विग्नो ग्रस्तः पूतनया शिशुः ॥२५॥
छर्दिः कासो ज्वरस्तृष्णा वसागंधोऽतिरोदनम् ।
स्तन्यद्वेषोऽतिसारश्च अंधपूतनया भवेत् ॥२६॥
वेपते कासते क्षीणो नेत्ररोगो विगंधिता ।
छर्द्यतीसारयुक्तश्च शीतपूतनया शिशुः ॥२७॥
प्रसन्नवर्णवदनः सिराभिरभिसंवृतः ।
मूत्रगन्धी च बह्वाशी मुखमण्डिकया भवेत् ॥२८॥
छर्दिस्पं (स्यं) दनकण्ठास्यशोषमूर्च्छाविगन्धिताः ।
ऊर्ध्वं पश्येद्दशेद्दन्तान्नैगमेयग्रहं वदेत् ॥२९॥
प्रस्तब्धाक्षः स्तनद्वेषी मुह्यते चानिशं मुहुः ।
तं बालमचिराद्धन्ति ग्रहः संपूर्णलक्षणः ॥३०॥

इति श्रीमाधकरविरचिते माधवनिदाने बालरोग-
निदानं समाप्तम् ॥६८॥

अथ विषरोगनिदानम् ।

स्थावरं जंगमं चैव द्विविधं विषमुच्यते ।
मूलाद्यात्मकमाद्यं स्यात्परं सर्पादिसम्भवम् ॥ १ ॥
(दशाधिष्ठानमाद्यं स्याद् द्वितीयं षोडशाश्रयम् ।
मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वक्क्षीरं सार एव च ॥ १ ॥
निर्यासा धातवश्चैव कन्दश्च दशमः स्मृतः ।
जंगमस्य विषस्योक्तान्यधिष्ठनानि षोडश ।

समासेन मया यानि विस्तरस्तेषु वक्ष्यते ॥ २ ॥)

निद्रां तन्द्रां क्लमं दाहमपाकं लोमहर्षणम् ।
शोथं चैवातिसारं च जंगमं कुरुते विषम् ॥ २ ॥
स्थावरं च ज्वरं हिक्कां दंतहर्षं गलग्रहम् ।
फेनच्छर्द्यरुचिश्वासं मूर्च्छां च कुरुते भृशम् ॥ ३ ॥

इंगितज्ञो मनुष्याणां वाक्चेष्टामुखवैकृतैः ।
जानीयाद्विषदातारमेभिर्लिङ्गैश्च बुद्धिमान् ॥ ४ ॥
न ददात्युत्तरं पृष्टो विवक्षुर्मोहमेति च ।
अपार्थं बहु संकीर्णं भाषते चापि मूढवत् ॥ ५ ॥

हसत्यकस्मात्स्फोटयत्यंगुलीर्विलिखेन्महीम् ।
वेपथुश्चास्य भवति त्रस्तश्चान्योन्यमीक्षते ॥ ६ ॥
विवर्णवक्त्रो ध्यामश्च नखैः किंचिच्छिनत्त्यपि ।
आलभेतासनं दीनः करेण च शिरोरुहम् ॥ ७ ॥

वर्तते विपरीतं च विषदाता विचेतनः ।
उद्वेष्टनं मूलविषैः प्रलापो मोह एव च ॥ ८ ॥

जृम्भणं वेपनं श्वासो मोहः पत्रविषेण तु ।
मुष्कशोथः❀ फलविषैर्दाहोऽन्नद्वेष एव च ॥ ९ ॥

भवेत् पुष्पविषैश्छर्दिराध्मानं श्वास एव च ।
त्वक्सारनिर्यासविषैरुपयुक्तैर्भवंति हि ॥१०॥

आस्यदौर्गन्ध्यपारुष्यशिरोरुक्कफसंस्रवाः ।
फेनागमः क्षीरविषैर्विड्भेदो गुरुगात्रता + ॥११॥

❀ 'मुखशोथः' + 'गुरुजिह्वता'

हृत्पीडनं धातुविषैर्मूर्च्छा दाहश्च तालुनि ॥
प्रायेण कालघातीनि विषाण्येतानि निर्दिशेत् ॥१२॥
सद्यः क्षतं पच्यते यस्य जंतोः
स्रवेद्रक्तं पच्यते चाप्यभीक्ष्णम् ।
कृष्णीभूतं क्लिन्नमत्यर्थपूति
क्षतान्मांसं शीर्यते चापि यस्य ॥१३॥
तृष्णा मूर्च्छा ज्वरदाहौ च यस्य
दिग्धाहतं तं पुरुषं व्यवस्येत् ।
लिंगान्येतान्येव कुर्यादमित्रै-
र्व्रणे विषं यस्य दत्तं प्रमादात् ॥१४॥
सपीतं गृहधूमाभं पुरीषं योऽति सार्यते ।
फेनमुद्वमते चापि विषपीतं तमादिशेत् ॥१५॥
वातपित्तकफात्मानो भोगिमण्डलिराजिलाः ।
यथाक्रमं समाख्याता, द्व्यन्तरा द्वंद्वरूपिणः ॥१६॥
दंशो भोगिकृतः कृष्णः सर्ववातविकारकृत् ।
पीतो मण्डलिजः शोथो मृदुः पित्तविकारवान् ॥१७॥
राजिलोत्थो भवेद्दंशः स्थिरशोथश्च पिच्छिलः ।
पाण्डुः स्निग्धोऽतिसान्द्रासृक् सर्वश्लेष्मविकारकृत् ॥१८॥
अश्वत्थदेवायतनश्मशान-
वल्मीकसंध्यासु चतुष्पथेषु ।
याम्ये च दष्टाः परिवर्जनीया-
ऋक्षे शिरामर्मसु ये च दष्टाः ॥१९॥
दर्वीकराणां विषमाशु घाति
सर्वाणि चोष्णे द्विगुणीभवन्ति ।

अजीर्णपित्तातपपीडितेषु
बालेषु वृद्धेषु बुभुक्षितेषु ॥२०॥
क्षीणक्षते मेहिनि कुष्ठयुक्ते
रूक्षेऽबले गर्भवतीषु चापि ।
शस्त्रक्षते यस्य न रक्तमेति
राज्यो लताभिश्च न सम्भवन्ति ॥२१॥
शीताभिरद्भिश्च न रोमहर्षो
विषाभिभूतं परिवर्जयेत्तम् ।
जिह्मं मुखं यस्य च केशशातो
नासावसादश्च सकंठभंगः ॥२२॥
कृष्णः सरक्तः श्वयथुश्च दंशे
हन्वोः स्थिरत्वं च विवर्जनीयः ।
वर्तिर्घना यस्य निरेति वक्त्रा-
द्रक्तं स्रवेदूर्ध्वमधश्च यस्य ॥२३॥
दंष्ट्रानिपाताश्चतुरश्च यस्य
तं चापि वैद्यः परिवर्जयेच्च ।
उन्मत्तमत्यर्थमुपद्रुतं वा
हीनस्वरं वाऽप्यथवा विवर्णम् ॥२४॥
सारिष्टमत्यर्थमवेगिनं च
ज्ञात्वा नरं कर्म न तत्र कुर्यात् ।
जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा
दावाग्निवातातपशोषितं वा ॥२५॥
स्वभावतो वा गुणविप्रहीनं
विषं हि दूषीविषतामुपैति ।

वीर्याल्पभावान्न निपातयेत्तत्
कफान्वितं वर्षगणानुबंधि ॥२६॥

तेनार्दितो भिन्नपुरीषवर्णो
वैगंध्यवैरस्ययुतः पिपासी ।
मूर्च्छा भ्रमं गद्गद्वाग्वमिं च
विचेष्टमानोऽरतिमाप्नुयाद्वा ॥२७॥

आमाशयस्थे कफवातरोगी,
पक्वाशयस्थेऽनिलपित्तरोगी ।
भवेत्समुद्ध्वस्तशिरोरुहांगो
विलूनपक्षस्तु यथा विहंगः ॥२८॥

स्थितं रसादिष्वथवा यथोक्तान्
करोति धातुप्रभवान् विकारान् ।
कोपं च शीतानिलदुर्दिनेषु
यात्याशु, पूर्वं श्रृणु तस्य रूपम् ॥२९॥

निद्रागुरुत्वं च विजृम्भणं च
विश्लेषहर्षावथवाऽङ्गमर्दम् ।
ततः करोत्यन्नमदाविपाका-
वरोचकं मण्डलकोठजन्म ॥३०॥

मांसक्षयं पादकरप्रशोथं
मूर्च्छां तथा छर्दिमथातिसारम् ।
दूषीविषं श्वासतृषाज्वरांश्च
कुर्यात् प्रवृद्धिं जठरस्य चापि ॥३१॥

उन्मादमन्यज्जनयेत्तथाऽन्य-
दानाहमन्यत्क्षपयेच्च शुक्रम् ※ ।
गाद्गद्यमन्यज्जनयेच्च कुष्ठं
तांस्तान्विकारांश्च बहुप्रकारान् ॥३२॥
दूषितं देशकालान्नदिवास्वप्नैरभीक्ष्णशः ।
यस्मात्संदूषयेद्धातूंस्तस्माद्दूषीविषं स्मृतम् ॥३३॥
साध्यमात्मवतः सद्यो याप्यं संवत्सरोत्थितम् ।
दूषीविषमसाध्यं स्यात् क्षीणस्याहितसेविनः ॥३४॥
सौभाग्यार्थं स्त्रियः स्वेदं रजो नानांगजान्मलान् ।
शत्रुप्रयुक्तांश्च गरान्प्रयच्छंत्यन्नमिश्रितान् + ॥३५॥
तैः स्यात्पाण्डुः कृशोऽल्पाग्निर्गरश्चास्योपजायते ÷ ।
मर्मप्रधमनाध्मानं हस्तयोः शोथलक्षणम् ॥३६॥
जठरं ग्रहणीदोषो यक्ष्मा गुल्मः क्षयो ज्वरः ।
एवंविधस्य चान्यस्य व्याधेर्लिङ्गानि दर्शयेत् ॥३७॥
यस्माल्लूनं तृणं प्राप्ता मुनेः प्रस्वेदबिंदवः ।
तस्माल्लूतास्तु भाष्यन्ते संख्यया ताश्च षोडश ॥३८॥
ताभिर्दष्टे दंशकोथः प्रवृत्तिः क्षतजस्य च ।
ज्वरो दाहोऽतिसारश्च गदाः स्युश्च त्रिदोषजाः ॥३९॥
पिडका विविधाकारा मण्डलानि महांति च ।
शोथा महान्तो मृदवो रक्ताः श्यावाश्चलास्तथा ॥४०॥
सामान्यं सर्वलूतानामेतद्दंशस्य लक्षणम् ।

※ 'दाहं तथान्यत्' + 'प्रयच्छन्त्यन्नमाश्रितान्'
÷ 'ज्वरश्चास्योपजायते'

दंशमध्ये तु यत्कृष्णं श्यावं वा जालकाचितम् ॥४१॥
ऊर्ध्वाकृति भृशं पाकं क्लेदशोथज्वरान्वितम् ।
दूषीविषाभिर्लूताभिस्तद्दष्टमिति निर्दिशेत् ॥४२॥
(सर्पाणामेव विण्मूत्रशवकोथसमुद्भवाः ।
दूषीविषाः प्राणहरा इति संक्षेपतो मताः ॥१॥)
शोथः श्वेताःसिता रक्ताः पीता वा पिडका ज्वरः।
प्राणान्तिकाश्च जायन्ते श्वासहिक्काशिरोग्रहाः + ॥४३॥
आदंशाच्छोणितं पाण्डुमण्डलानि ज्वरोऽरुचिः।
लोमहर्षश्च दाहश्चाप्याखुदूषीविषार्दिते ॥४४॥
मूर्च्छाऽङ्गशोथ वैवर्ण्य क्लेदशब्दाश्रुतिर्ज्वराः।
शिरोगुरुत्वं लालासृक्छर्दिश्चासाध्यमूषिकैः ॥४५॥
कार्ष्ण्यं श्यावत्वमथवा नानावर्णत्वमेव वा ।
मोहोऽथ वर्चसो भेदो दष्टे स्यात्कृकलासकैः ※॥४६॥
दहत्यग्निरिवादौ च भिनत्तीवोर्ध्वमाशु च।
वृश्चिकस्य विषं याति दंशे पश्चात्तु तिष्ठति ॥४७॥
दष्टोऽसाध्यश्च हृद्घ्राणरसनोपहतो नरः ।
मांसैः पतद्भिरत्यर्थं वेदनार्तो जहात्यसून् ॥४८॥
विसर्पः श्वयथुः शूलं ज्वरश्छर्दिरथापि च।
लक्षणं कणभैर्दष्टे दंशश्चैवावसीदति ॥४९॥
हृष्टलोमोच्चिटिङ्गेन स्तब्धलिंगो भृशार्तिमान् ।
दष्टः शीतोदकेनेव सिक्तान्यंगानि मन्यते ॥५०॥
एकदंष्ट्रार्दितः शूनः सरुजः पीतकः सतृट्।
छर्दिर्निद्रा च सविषैर्मण्डूकैर्दष्टलक्षणम् ॥५१॥

+ 'दाहहिक्का शिरोग्रहाः' ※'स्याच्चकृकण्टकैः'

मत्स्यास्तु सविषाः कुर्युर्दाहं शोथं रुजं तथा ।
कण्डूं शोथं ज्वरं मूर्च्छां सविषास्तु जलौकसः ॥५२॥
विदाहं श्वयथुं तोदं स्वेदं च गृहगोधिका ।
दंशे स्वेदं रुजं दाहं कुर्याच्छतपदीविषम् ॥५३॥
कण्डूमान्मशकैरीषच्छोथः स्यान्मन्दवेदनः ।
असाध्यकीटसदृशमसाध्यं मशकक्षतम् ॥५४॥
सद्यः प्रस्राविणी श्यावा दाहमूर्च्छाज्वरान्विता ।
पिडका मक्षिकादंशे तासां तु स्थगिकाऽसुहृत् ॥५५॥
चतुष्पाद्भिर्द्विपद्भिश्च नखदन्तविषं च यत् ।
शूयते पच्यते वापि स्रवति ज्वरयत्यपि ॥५६॥
श्वशृगालतरक्ष्वृक्षव्याघ्रादीनां यदाऽनिलः ।
श्लेष्मप्रदुष्टो मुष्णाति संज्ञां संज्ञावहाश्रितः ॥५७॥
तदा प्रस्रस्तलाङ्गूलहनुस्कन्धोऽतिलालवान् ।
अव्यक्तबधिरान्धश्च सोऽन्योन्यमभिधावति ॥५८॥
प्रमूढोऽन्यतमस्त्वेषां खादन्विपरिधावति ।
तेनोन्मत्तेन दष्टस्य दंष्ट्रिणा सविषेण तु ॥५९॥
सुप्तता जायते दंशे कृष्णं चातिस्रवत्यसृक् ।
दिग्धविद्धस्य लिङ्गेन प्रायशश्चोपलक्षितः ॥६०॥
येन चापि भवेद्दष्टस्तस्य चेष्टां रुतं नरः ।
अप्सु चादर्शबिम्बे वा तस्य तद्रिष्टमादिशेत् ॥६२॥
त्रस्यत्य कस्माद्योऽभीक्ष्णं दृष्ट्वा स्पृष्ट्वाऽपि वा जलम् ।
जलत्रासं तु तं विद्याद्रिष्टं तदपि कीर्त्तितम् ॥६३॥
अदष्टो वा जलत्रासी न कथंचन सिद्ध्यति ।
प्रसुप्तो वोत्थितो वाऽपि स्वस्थस्त्रस्तो न सिद्ध्यति ॥६४॥

प्रशान्तदोषं प्रकृतिस्थधातु-
मन्नाभिकामं सममूत्रविट्कम् ।
प्रसन्नवर्णेन्द्रियचित्तचेष्टं
वैद्योऽवगच्छेदविषं मनुष्यम् ॥६५॥
इति श्रीमाधवकरविरचिते माधवनिदाने विषनिदानं
समाप्तम् ॥६९॥

परिशिष्ट (ग्रन्थशेष) ।

अथ ध्वजभंगादि रोगाः

रेतोदोषोद्भवं क्लैब्यं यस्माच्छुद्धचैव सिध्यति ।
अतो वक्ष्यामि ते सम्यगग्निवेश यथातथम् ॥ १ ॥
बीजध्वजोपघाताभ्यां जरया शुक्रसंक्षयात् ।
वैक्लव्यसम्भवस्तस्य शृणु सामान्यलक्षणम् ॥ २ ॥
संकल्पप्रवणो नित्यं प्रियां वश्यामथापि वा ।
न याति लिङ्गशैथिल्यात्कदाचिद्याति वा पुमान् ॥ ३ ॥
श्वासार्तः स्विन्नगात्रांसो मोघसंकल्पचेष्टितः ।
म्लानशिश्नश्च निर्बीजः स्यादेतत्क्लैब्यलक्षणम् ॥ ४ ॥
सामान्यलक्षणं ह्येतद्विस्तरेण प्रवक्ष्यते ।
शीतरूक्षाम्लसंक्लिष्ट विषमासात्म्यभोजनात् ॥ ५ ॥
शोकचिन्ताभयत्रासात्स्त्रीणां चात्यर्थसेवनात् ।
अभिचारादविस्रम्भाद्रसादीनां च संक्षयात् ॥ ६ ॥
वातादीनां च वैषम्याद्विरुद्धाध्यशनाच्छ्रमात् ।
नारीणामनभिज्ञत्वात्पंचकर्मापचारतः ॥ ७ ॥
बीजोपघातो भवति पाण्डुवर्णः सुदुर्बलः ।
अल्पप्रजोऽल्पहर्षश्च प्रमदासु भवेन्नरः ॥ ८ ॥

हृत्पांडुरोगतमककामलाश्रमपीडितः ।
बीजोपघातजं क्लैब्यं ध्वजभंगकृतं शृणु ॥९॥
अत्यम्ललवणक्षारविरुद्धाजीर्णभोजनात् ।
अत्यम्बुपानाद्विषमपिष्टान्नगुरुभोजनात् ॥१०॥
दधिक्षीरानूपमांससेवनादतिकर्शनात् ।
कन्यानां चैव गमनादयोनिगमनादपि ॥११॥
दीर्घरोम्णीं चिरोत्सृष्टां तथैव च रजस्वलाम् ।
दुर्गंधां दुष्टयोनिं च तथैव च परिस्रुताम् ॥१२॥
नरस्य प्रमदां मोहादतिहर्षात्प्रगच्छतः ।
चतुष्पदाभिगमनाच्छेफसश्चाभिघाततः ॥१३॥
अधावनाद्वा मेढ्रस्य शस्त्रदंतनखक्षतात् ।
काष्ठप्रहारनिश्शेषशूकानां चातिसेवनात् ॥
रेतसश्च प्रतीघाताद्ध्वजभङ्गः प्रवर्त्तते ॥१४॥
श्वयथुर्वेदना मेढ्रे रागश्चैवोपलक्ष्यते ॥१५॥
स्फोटाश्च तीव्रा जायन्ते लिङ्गपाको भवत्यपि ।
मांसवृद्धिर्भवेच्चापि व्रणाःक्षिप्रं भवंत्यपि ॥१६॥
पुलाकोदकसंकाशः स्रावः श्यावारुणप्रभः ।
वलयीकुरुते चापि कठिनं च परिग्रहम् ॥१७॥
ज्वरस्तृष्णा भ्रमो मूर्च्छाच्छर्दिश्चास्योपजायते ।
रक्तं कृष्णं स्रवेच्चापि नीलमाविललोहितम् ॥१८॥
अग्निनेव च दग्धस्य तीव्रो दाहः सवेदनः ।
बस्तौ वृषणयोर्वाऽपि सेवन्यां वंक्षणेषु च ॥१९॥
कदाचित्पिच्छिलो वापि पाण्डुस्रावश्च जायते ।
श्वयथुश्च भवेन्मंदस्तिमितोऽल्पपरिस्रवः ॥२०॥

चिरात्सपाकं व्रजति शीघ्रं वाथ प्रपद्यते ।
जायन्ते कृमयश्चापि क्लिद्यते पूतिगंधि च ॥२१॥
प्रशीर्यते मणिश्चास्य मेढ्ं मुकावथापि च ।
ध्वजभंगकृतं क्लैब्यमित्येतत्समुदाहृतम् ॥
एवं पंचविधं केचिद् ध्वजभंगं वदंत्यपि ॥२२॥
पित्रोरत्यल्पवीर्यत्वादासेक्यः पुरुषो भवेत् ।
सशुक्रं प्राश्य लभते ध्वजोच्छ्रायमसंशयम् ॥२३॥
यः पूतियोनौ जायेत स सौगन्धिकसंज्ञितः ।
स योनिशेफसोर्गन्धमाघ्राय लभते बलम् ॥२४॥
स्वगुदेऽब्रह्मचर्याद्यः स्त्रीषु पुंवत्प्रवर्तते ।
कुम्भिकः स तु विज्ञेयःईर्ष्यकं शृणु चापरम् ॥२५॥
दृष्ट्वा व्यवायमन्येषां व्यवाये यः प्रवर्तते ।
ईर्ष्यकः स तु विज्ञेयो दृग्योनिरयमीर्ष्यकः ॥२६॥
यो भार्यायामृतौ मोहादंगनेव प्रवर्तते ।
ततः स्त्रीचेष्टिताकारो जायते षण्ढसंज्ञितः ॥२७॥
ऋतौ पुरुषवद्वापि प्रवर्त्तेताङ्गना यदि ।
तत्र कन्या यदि भवेत्सा भवेन्नरचेष्टिता ॥२८॥
आसेक्यश्च सुगंधी च कुम्भिकश्चैर्ष्यकस्तथा ।
सरेतसस्त्वमी ज्ञेया अशुक्रः षण्ढसंज्ञितः ॥२९॥
अनया विप्रकृत्या तु तेषां शुक्रवहाः शिराः ।
हर्षात्स्फुटत्वमायान्ति ध्वजोच्छ्रायस्ततो भवेत् ॥३०॥
क्लैब्यं जरासम्भवं हि प्रवक्ष्याम्यथ तच्छृणु ।
जघन्यमध्यप्रवरं वयस्त्रिविधमुच्यते ॥३१॥
अथ च प्रवरे शुक्रं प्रायशः क्षीयते नृणाम् ।
रसादीनां संक्षयाच्च तथैवावृष्यसेवनात् ॥३२॥

बलवर्णेन्द्रियाणां च क्रमेणैव परिक्षयात् ।
परिक्षयादायुषश्चाप्यनाहारच्छमात्क्रमात् ॥
जरासम्भवजं क्लैब्यमित्येतैर्हेतुभिर्नृणाम् ॥३३॥
जायते तेन सोऽत्यर्थं क्षीणधातुः सुदुर्बलः ॥३४॥
विवर्णो विह्वलो दीनः क्षिप्रं व्याधिमथाश्नुते ।
एतज्जरासम्भवं हि चतुर्थं क्षयजं शृणु ॥३५॥
अतिप्रचिन्तनाच्चैव शोकात्क्रोधाद्भयादपि ।
ईर्ष्योत्कण्ठात्तथोद्वेगात्सदा विंशतिको नरः ॥३६॥
कृशो वा सेवते रूक्षमन्नपानमथौषधम् ।
दुर्बलप्रकृतिश्चैव निराहारो भवेद्यदि ॥३७॥
अथाल्पभोजनाच्चापि हृदये यो व्यवस्थितः ।
रसप्रधानधातुर्हि क्षीयेताशु नरस्ततः ॥३८॥
रक्तादयश्च क्षीयन्ते धातवस्तस्य देहिनः ।
शुक्रावसानास्तेभ्यो हि शुक्रं धाम परं मतम् ॥३९॥
चेतसो वापि हर्षेण व्यवायं सेवते तु यः ।
शुक्रं तु क्षीयते तस्य ततः प्राप्नोति संक्षयम् ॥४०॥
घोरं व्याधिमवाप्नोपि मरणं वा समृच्छति ।
शुक्रं तस्माद्विशेषेण रक्ष्यमारोग्यमिच्छता ॥
एवं निदानलिङ्गाभ्यामुक्तं क्लैब्यं चतुर्विधम् ॥४१॥
केचित्क्लैब्ये त्वसाध्ये द्वे ध्वजभङ्गक्षयोद्भवे ।
वदन्ति शेफसश्छेदाद् वृषणोत्पाटनेन वा ॥४२॥
मातापित्रोर्बीजदोषादशुभैश्चाकृतात्मनः ॥४३॥
गर्भस्थस्य यदा दोषाः प्राप्य रेतोवहाः शिराः ।
शोषयन्त्याशु तन्नाशाद्रेतश्चाप्युपहन्यते ॥४४॥

तत्र संपूर्णसर्वाङ्गः स भवत्यपुमान् पुमान् ।
एते त्वसाध्या व्याख्याताः सन्निपातसमुच्छ्रयात् ।।४५।।

इति ध्वजभंगादि रोग समाप्तम् ।।७०।।

शुक्रार्त्तव दोषनिदानम्

शुक्रं पौरुषमित्युक्तं तस्माद्वक्ष्यामि तच्छृणु ।
यथा हि बीजं कालाम्बुकृमिकीटाग्निदूषितम् ।। १ ।।
न विरोहति सन्दुष्टं तथा शुक्रं शरीरिणाम् ।
अतिव्यवायाद्व्यायामादसात्म्यानां च सेवनात् ।। २ ।।
अकाले चाप्ययोनौ वा मैथुनं चैव गच्छतः ।
रूक्षतिक्तकषायातिलवणाम्लोष्णसेवनात् ।। ३ ।।
मधुरस्निग्धगुर्वन्नसेवनाज्जरया तथा ।
चिन्ताशोकादिविस्रम्भाच्छस्त्रक्षाराग्निभिस्तथा ।। ४ ।।
भयात्क्रोधादभीचाराद्व्याधिभिः कर्शितस्य च ।
वेगाघातात्क्षयाच्चापि धातूनां सम्प्रदूषणात् ।। ५ ।।
दोषाः पृथक्समस्ता वा प्राप्य रेतोवहाः शिराः ।
शुक्रं संदूषयन्त्याशु तद्वक्ष्यामि विभागशः ।। ६ ।।
फेनिलं तनु रूक्षं च विवर्णं पूति पिच्छिलम् ।
अन्यधातूपसंसृष्टमवसादि तथाष्टमम् ।। ७ ।।
वातेन फेनिलं शुक्रं कृच्छ्रेण पिच्छिलं तनु ।
भवत्युपहतं शुक्रं न तद्गर्भाय कल्पते ।। ८ ।।
सनीलमथवा पीतमत्युष्णं पूतिगंधि च ।
दहेल्लिङ्गं विनिर्याति शुक्रं पित्तेश्च दूषितम् ।। ९ ।।
श्लेष्मणा रुद्धमार्गं तु भवत्यत्यर्थपिच्छिलम् ।
स्त्रियमत्यर्थगमनादभिघातात्क्षयादपि ।।

शुक्रं प्रवर्तते जन्तोः प्रायेण रुधिरान्वयम् ॥१०॥
कृच्छ्रेण याति ग्रथितमवसादि तथाष्टमम् ।
इति दोषाः समाख्याताः शुक्रस्याष्टौ सलक्षणाः ॥११॥
स्निग्धं घनं पिच्छिलं च मधुरं चाविदाहि च ।
रेतः शुद्धं विजानीयात्स्निग्धं स्फटिकसन्निभम् ॥१२॥
वातपित्तश्लेष्मशोणितकुणपगन्ध्यनल्पग्रंथिपूति
पूयक्षीणरेतसः प्रजोत्पादने न समर्थाः ॥१३॥
तत्र वातवर्णवेदनं वातेन । पीतवर्णवेदनं पित्तेन । श्लेष्मवर्णवेदनं श्लेष्मणा । शोणितवर्णपित्तवेदनं रक्तेन । कुणपगन्ध्यनल्पं च रक्तेन पित्तेन च । ग्रंथिभूतं श्लेष्मवाताभ्यां पूयनिभं पित्तवाताभ्यां क्षीणं शुक्रं प्रागुक्तं पित्तवाताभ्यां मूत्रपुरीषगंधि सर्ववर्णवेदनं सन्निपातेनेति तेषु कुणपग्रंथिपूयक्षीणरेतसः कृच्छ्रसाध्या मूत्रपुरीषरेतसोऽसाध्याः ॥
आर्तवमपि त्रिभि र्दोषैः शोणितचतुर्थैः पृथग्द्वन्द्वैः समस्तैश्चोपसृष्टमबीजं भवति। तदपि दोषवर्णवेदनाभिर्ज्ञेयम् । तेषु कुणपग्रंथिपूतिपूयक्षीणमूत्रपुरीषप्रकाशमसाध्यम् ॥

इति शुक्रार्त्तवदोष निदानम् समाप्तम् ॥७१॥

मंथरज्वरस्य लक्षणानि ।

ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यतीसारो वमिस्तृषा ।
अनिद्रा मुखशोषश्च तालु जिह्वा च शुष्यति ॥ १ ॥
ग्रीवायां परिदृश्यन्ते स्फोटकाः सर्षपोपमाः ।
घृताशनात्स्वेदरोधान्मंथरो जायते नृणाम् ॥ २ ॥

इति मथरज्वरस्य लक्षणानि समाप्तम् ॥७२॥

अथ स्नायुकनिदानम् ।

शाखासु कुपितो दोषः शोथं कृत्वा विसर्पवत् ।
भिनत्ति तत्क्षते तत्र सोऽन्न स्नायुं*विशोष्य च ॥ १ ॥
कुर्यात्तन्तुनिभं जीवं वृत्तं श्वेतमाकृतिं बहिः × ।
शनैः शनैः क्षताद्याति छेदात् कोपमुपैति च ॥ २ ॥
तत्पाताच्छोथशान्तिः स्यात् पुनः स्थानान्तरे भवेत् ।
स स्नायुकेति विख्यातः क्रियोक्ता त्वविसर्पवत् ॥ ३ ॥
बाह्वोर्यदि प्रमादेन त्रुट्यते जङ्घयोरपि ।
संकोचं खञ्जतां चैव छिन्नतन्तुः करोत्यसौ ॥ ४ ॥
वातेन श्यावरूक्षः सरुगथ दहनात्पीतपीतः सदाहो-
ऽथश्वेतः श्लेष्मणा स्यात्पृथुगरिमयुतोऽथ द्विदोषो द्विलिङ्गी ।
रक्तेनारक्तकान्तिः समधिकदहनोऽथाखिलैः सर्वलिङ्गो,
रोगोऽसाध्यष्टधेत्थं मुनिभिरभिहितः स्नायुकस्तन्तुकीटः ॥५॥

॥ इति स्नायुकनिदानं समाप्तम् ॥७३॥

अथ सोमरोगनिदानम् ।

स्त्रीणामतिप्रसङ्गेन शोकाच्चापि श्रमादपि ।
अतिसारकयोगाद्वा गरयोगात्तथैव च ॥ १ ॥
आपः सर्वशरीरस्थाः क्षुभ्यन्ति प्रस्रवन्ति च ।
तस्यास्ताः प्रच्युताः स्थानान् मूत्रमार्गं व्रजन्ति हि ॥२॥
प्रसन्नाविमलाः शीता निर्गन्धा नीरुजः सिताः ।
स्रवन्ति चातिमात्रं ताः सा न शक्नोति दुर्बला ॥ ३ ॥
वेगं धारयितुं तासां न विन्दति सुखं क्वचित् ।
शिरः शिथिलता तस्या मुखं तालु च शुष्यति ॥ ४ ॥

* 'मांसं,' । × कुर्यात्तन्तुनिभंसूत्रं तत्पिण्डैस्तक्रसक्तुजैः ।

मूर्च्छा जृम्भा प्रलापश्च त्वग्रूक्षा चातिमात्रतः ।
भक्ष्यैर्भोज्यैश्च पेयैश्च न तृप्तिं लभते सदा ॥ ५ ॥
संधारणाच्छरीरस्य ता आपः सोमसंज्ञिताः ।
ततः सोमक्षयात् स्त्रीणां सोमरोग इति स्मृतः ॥ ६ ॥
इति सोमरोगनिदानं समाप्तम् ॥७४॥

अथ शीतलानिदानम् ।

देव्या शीतलयाऽऽक्रान्ता मसूर्यः शीतला बहिः ।
ज्वरयेयुर्यथा भूताधिष्ठितो विषमज्वरः ॥ १ ॥
ताश्च सप्तविधाः ख्यातास्तासां भेदान् प्रचक्ष्महे ।
ज्वरपूर्वा बृहत्स्फोटैः शीतला बृहती भवेत् ॥ २ ॥
सप्ताहाभिः सरत्येव सप्ताहात् पूर्णतां व्रजेत् ।
ततस्तृतीये सप्ताहे शुष्यति स्खलति स्वयम् ॥ ३ ॥
(तासां मध्ये यदा काचित् पाकं गत्वा स्फुटेत् स्रवेत् ।
तत्रा व धूलनं कुर्याद्वनगोमय भस्मना ।
निम्बसत्पत्रशाखाभिर्मक्षिकामपसारयेत् ॥)
वातश्लेष्मसमुद्भूता कोद्रवा कोद्रवाकृतिः ।
तां कश्चित्प्राह पक्केति सा तु पाकं नगच्छति ॥ ४ ॥
जलशूकवदङ्गानि सा विध्यति विशेषतः ।
सप्ताहाद्वा दशाहाद्वा शान्तिं याति विनौषधम् ॥ ५ ॥
ऊष्मणा तूष्मजारूपा सकण्डूः स्पर्शनप्रिया ।
नाम्ना पाणिसहा ख्याता सप्ताहाच्छुष्यति स्वयम् ॥६॥
चतुर्थी सर्षपाकारा पीतसर्षपवर्णिनी ।
नाम्ना सर्षपिका ज्ञेयाऽभ्यङ्गमत्र विवर्जयेत् ॥ ७ ॥
किञ्चिदूष्मनिमित्तेन जायते राजिकाकृतिः ।

एषा भवति बालानां सुखं*शुष्यति च स्वयम् ॥ ८ ॥
कोष्ठवज्जायते षष्ठी लोहितोत्ततमण्डला ।
ज्वरपूर्वा व्यथायुक्ता ज्वरस्तिष्ठेद्दिनत्रयम् ॥ ९ ॥
स्फोटानां मेलनादेषा बहुस्फोटाऽपि दृश्यते ।
एकस्फोटे च कृष्णा च बोधव्या चर्मजाभिधा ॥१०॥

इति शीतलानिदानम् ॥७५॥

अथ कार्श्यनिदानम् ।

वातो रूक्षान्नपानानि लङ्घनं प्रमिताशनम् ।
क्रियातियोगः शोकश्च वेगनिद्राविनिग्रहः ॥ १ ॥
नित्यं रोगोऽरतिर्नित्यं व्यायामो भोजनाल्पता ।
भीतिर्धनादिचिन्ता च कार्श्यकारणमीरितम् ॥ २ ॥
क्रोधोऽतिमैथुनं चैव शुक्रव्याधिस्तथैव च ।
कार्श्यस्य हेतवः प्रोक्ताः समस्तैरपि तान्त्रिकैः ॥ ३ ॥
शुष्कस्फिगुदरग्रीवो धमनीजालसन्ततिः ।
त्वगस्थिशेषोऽतिकृशः स्थूलपर्वाननोमतः ॥४॥
व्यायाममतिसौहित्यं क्षुत्पिपासा महौषधम् ।
न कृशः सहते तद्वदतिशीतोष्णमैथुनम् ॥ ५ ॥

अतिकृशस्य रोगानाह:—

प्लीहा कासः क्षयः श्वासगुल्मार्शांस्युदराणि च ।
भृशं कृशं प्रधावन्ति रोगाश्च ग्रहणीमुखाः ॥ ६ ॥
कश्चिद्दन्यः कृशोऽतीव बलवान् दृश्यते तदा
आधानसमये यस्य शुक्रभागोऽधिको भवेत् ।
मेदोभागस्तु हीनः स्यात्स कृशोऽपि महाबलः ॥ ७ ॥

* 'मुखे'

मेदसोंऽशोऽधिको यस्य शुक्रभागोऽल्पको भवेत्।
स स्निग्धोऽपि सुपुष्टोऽपि बलहीनो विलोक्यते॥ ८ ॥
यथा पिपीलिका स्वल्पा यथा च वरटी बलात् ।
स्वतश्चतुर्गुणं भारं नीत्वा गच्छति सम्मुखम् ॥ ९ ॥
स्वभावात्कृशकायो यः स्वभावादल्पपावकः ।
स्वभावादबलो यश्च तस्य नास्ति चिकित्सितम् ॥१०॥

इति कार्श्यनिदानम् समाप्तम् ॥७६॥

अथ विविधसन्धिवातनिदानम् ।

ये वातव्याधयः सन्धीनाश्रयन्ति शनैः शनैः ।
सद्यो वा शूलशोफाभ्यां सन्धिवाता हि ते मताः ॥ १ ॥
रसवातो रक्तवातो विषवातस्तथापरः ।
जीर्णवातो जरावातः पञ्च स्युस्तद्भिदा इह ॥ २ ॥

रसवातः—

शाखा-त्रिक-कटी-पृष्ठ-ग्रीवादिषु हि सन्धिषु ।
क्वचिच्छोफरुजाकारी सर्वगात्रप्रपीडनः ॥ ३ ॥
अविपाकाऽरुचियुतोऽल्पज्वरो विज्वरोऽथवा ।
रसवातगदः सोऽयमामवातश्च कथ्यते ॥ ४ ॥

रक्तवातः—

रुग्दाहरागयुक् शोथः सन्धौ यः शीघ्रसञ्चरः ।
चरणांगुष्ठमूलादौ रक्तवातः स उच्यते ॥ ५ ॥

विषवातः—

फिरङ्ग–पूयमेहादि विषेणापि तथाविधः ।
जान्वंस-कटिपृष्ठादौ विषवातः स उच्यते ॥ ६ ॥

सन्धिवातः—

संधिवातो भवन् भूयो नानासंधि समाश्रयः ।
निश्चलीकुरुते सन्धीन् जीर्णवातस्तदोच्यते ॥ ७ ॥

जरावातः—

जराजविकृतेरस्थ्नां जरतां कुब्जताकरः ।
पृष्ठवंशाश्रयः प्रायः स जरावातसंज्ञकः ॥ ८ ॥

निदानम्ः—

गुर्वतिस्निग्ध-मिष्टान्न-मत्स्यमांसादिभोजिनाम् ।
मन्दाग्नीनां निश्चलानामजीर्णेऽपि समश्नताम् ॥ ९ ॥
शीतवातादि सम्पर्काद् विबन्धानामुपेक्षणात् ।
सन्धिवाताः प्रजायन्ते हेतुलिङ्गादिभेदतः ॥१०॥
गुरुस्निग्धातिमधुर-भोजनाद्रसदोषतः ।
अचंक्रमणशीलानां रसवातसमुद्भवः ॥११॥
मद्यमांसप्रियाणान्तु विदाह्यन्नाद् विशेषतः ।
अल्पाम्बुपानात् प्रायेण रक्तवातसमुद्भवः ॥१२॥
विषवातनिदानन्तु पूयमेहादिकृद् विषम् ।
वर्धते तत्प्रभावश्च मिथ्याहारविहारतः ॥१३॥
शिशूनां दुर्बलानाञ्च प्रसूतानाञ्च योषिताम् ।
कदाचित् सन्धिवातः स्यात् स प्रायो विषजो मतः ॥१४॥
शोषिणां क्षयजन्यश्च सन्धिवातः कदाचन ।
कुब्जाः सन्धिवाताश्च दृश्यन्ते बहुशो नृणाम् ॥१५॥
जरावातोऽपि दौर्बल्यात् सर्वधातुप्रहाणिजात् ।
षष्टेरूर्ध्वं भवेन् प्रायः पृष्ठवंशादितः क्रमात् ॥१६॥
सन्धिवातास्तु सर्वेऽपि शीतवर्षादि योगतः ।
पक्षान्ते च प्रवर्धन्ते व्यायामस्य च वर्जनात् ॥१७॥

सम्प्राप्तिः लिङ्गानि च—

सामो वायुः श्लेष्मणा सानुबन्धः सर्वाङ्गेषु स्व-स्वलिङ्गैः प्रसर्पन्
कटी-पृष्ठ-त्रिक्-जान्वादिसन्धीन् रुजन्नुबैरामवातं विदध्यात्

सन्ध्यन्तरीयः श्लेष्मा च प्रायेणात्र प्रचीयते ।
नवे तस्मिन्, पुराणे तु क्रमशः स प्रशुष्यति ॥१९॥
शुष्यन्ति सन्धिबन्धन्यः पेश्यश्च तरुणास्थि च ।
रुजामान्द्यं च तेन स्याद् दृढ़ामर्दसहिष्णुता ॥
क्रमशः संहतीभावात् सन्धिनिश्चलता तथा ॥२०॥
अस्थ्यस्थिकीलकाश्चात्र सन्धीनुभयतः स्थिताः ।
अन्तर्बहिश्च दृश्यन्ते तेचोन्मर्दासहिष्णवः ॥२१॥
विदग्धपित्तदोषेण रक्तं सन्दूषितं यदा ।
वातं क्षोभयते घोरं रक्तवातस्तदा भवेत् ॥२२॥
पादांगुष्ठस्य मूलस्थं सन्धिं गुल्फस्थमेव वा ।
मणिबन्धादिसन्धिं वा स चादौ पीडयेद् भृशम् ॥२३॥
रक्तवाते पुराणे तु बहिरंगुलिसन्धितः ।
गुल्फ जान्वादिसन्धेर्वा शुभ्रवस्तु प्रचीयते ॥२४॥
अर्बुदास्तन्मयास्तेन सन्धीनुभयतः स्थिताः ।
कदाचित् कर्णपाल्योश्च पेश्यन्ते ष्वपि कुत्रचित् ॥२५॥
स्फुटन्ति तु कदाचित्ते कृत्वा त्वग्भेदनं ततः ।
शुष्कक्षतानि कुर्वन्ति शुभ्रचूर्णं क्षरन्ति च ॥२६॥
जीर्णवातस्य भेदोऽयं रक्तवातसमुद्भवः ।
अंगुलीवक्रताकारी सर्वकर्माक्षमताहरः ॥२७॥
अस्थिसन्ध्यभिघातोत्थः सन्धिवातः कदाचन ।
सन्धिनैश्चल्यकृत् काले भग्नादेर्दुरुपक्रमात् ॥२८॥

भेदकलिङ्गानि—

तुल्येऽप्यविषजातत्वे रक्तवाताऽमवातयोः ।
शीतोपशयिताद्ये स्यादुष्णोपशयिताऽपरे ॥२९॥

एकसन्ध्याश्रयस्त्वादौ पूर्वोऽन्यो बहुसन्धिगः ।
आद्ये रुग्दाहशूनत्वं मन्दरुक् श्वयथुः परे ॥३०॥

उपद्रवाः—

कदाचिदामवातादौ विषवाते तु भूरिशः ।
जानुसन्धौ भवेद् घोरो व्रणशोथो महारुजः ॥३१॥
लसीकासञ्चयकरश्चिरपाकी च दारुणः ।
क्रोष्टुशीर्षकनामाऽयं खञ्जताकृदुपद्रवः ॥३२॥
वृक्कद्वारेऽथवा बस्तौ सिकता मूत्रसम्भवाः ।
संहत्य गुडिकाः कुर्युर्बहुधा रक्तवातके ॥३३॥
तासु काचित् निरुन्ध्याच्चेद् गवीनीमार्गमञ्जसा ।
तदा घोरं भवेच्छूलं मूत्राघातस्तथा वमिः ॥३४॥
वस्तिस्था मेहनस्रोतो रुन्धानाऽपि तथाल्परुक् ।
अन्येऽप्युपद्रवाः केचिद् रक्तवाते भवन्ति हि ॥३५॥
स्फोटः कण्डूरुदर्दश्च लसीकामेह एव च ।
सर्वाङ्गशोथस्त्वग्रोगाः श्वासो मूत्राल्पता तथा ॥३६॥

सामान्योक्तिः—

अम्लपित्तं रक्तपित्तं रक्तवातमिति त्रयम् ।
काय-धात्वग्निदोषोत्थं प्रायशस्तुल्यहेतुकम् ॥३७॥

इति विविधसन्धिवात निदानम् समाप्तम् ॥७७॥

अथ आगन्तुपूयमेहनिदानम् ।

निरुक्तिः इतिवृत्तञ्चः—

पूयं रक्तं मूत्रणादावभीक्ष्णं
सरुग्दाहं शूनशिश्नः स्रवेच्चेत् ।
तदाऽगन्तुः पूयमेहोऽस्य नूत्नः
पुराणेऽस्मिन् मूत्रशेषेऽणु पूयम् ॥ १ ॥

पूर्वे वर्षचतुःशत्या म्लेच्छस्त्रीपुंसमङ्गमात् ।
सम्प्राप्तो दुष्टरोगोऽयं प्रसृतो भारतेऽधुना ॥ २॥

निदानं सम्प्राप्तिश्चः—

विशिष्टविषजीवाणुर्युग्मबिन्दूपलक्षितः ।
योनौ मूत्रप्रसेके वा क्षतं कृत्वाऽवतिष्ठते ।
तस्मात् क्षरति यः पूयो मैथुने तस्य संक्रमात् ।
अष्टाहात् स्यादुपस्थान्तः पूयासृक्स्रवणो व्रणः ॥ ३ ॥
आगन्तावपि रोगेऽस्मिन् पित्तं वातश्च कुप्यतः।
पूयाधिक्ये कफश्चापि रक्तं रक्तस्रवेऽधिके ॥ ४ ॥
पुंसो मूत्रप्रसेकस्य पूर्वांशाग्रे क्षतोद्भवः ।
नवीने पूयमेहे स्याद् मध्यांशे तु पुरातने ॥ ५ ॥
योषितां पूयमेहस्तु योन्यन्तः क्षतसम्भवात् ।
तज्जः पूयश्चिरं तिष्ठन् श्वेतप्रदर उच्यते ॥ ६ ॥

लिङ्गानिः—

अथ मूत्रप्रसेकान्तः क्षतमुत्पद्यते यदा ।
पूयस्रावस्ततः सासृक् तीव्रदाहरुजान्वितः ॥ ७॥
उपस्थे व्रणशोथश्च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ।
ज्वरस्तृष्णा विबन्धश्च प्रहर्षे चार्त्तिरुल्वणा ॥ ८ ॥
आदौ चिकित्सया तेषु लिङ्गेषूपरतेष्वपि ।
दृश्यते प्रायशः शिश्नात् पूयबिन्दुस्रवः प्रगे ॥ ९ ॥
पूयाख्यमेहे तु पुरातने स्याद्
गूढं क्षतं मेहनमूलपृष्ठे ।
प्रायेण तस्मात् तनुसूत्रयुक्तं
पूयं स्रवेदाविलवारितुल्यम् ॥१०॥

योषितां तु नवे मेहे योन्यन्तः क्षतसंभवात् ।
यथासम्भवलिङ्गानि पुरुषस्य यथा तथा ॥११॥
स्त्रीणां पुराणे खलु पूयमेहे
गर्भाशयद्वार्य्यभितोऽन्तरे वा ।
क्षतात् स्रवेत् पूयमथाल्पमल्पं
प्रायेण नीरुक् तनु चाविलञ्च ॥१२॥

उपद्रवाः—

पूयमेहस्य पूयश्चेद् बस्तौ संक्रमते क्वचित् ।
व्रणशोथस्तदा तत्र बस्तिमेहनतोदयुक् ॥१३॥
रक्तपूययुतं मूत्रं माञ्जिष्ठं वाऽविलं स्रवेत् ।
बस्तिप्रशोथसंज्ञोऽयं दारुणः स्यादुपद्रवः ॥१४॥
अथ चेत् तद् विषं घोरं बस्तेरूर्ध्वं प्रसर्पति ।
तदा गवीन्यौ वृक्कौ च भवेतां विषदूषितौ ॥१५॥
सलसीकं तदा मूत्रं भूरिपूयं स मेहति ।
पूयवृक्काभिधः सोऽयं कादाचित्क उपद्रवः ॥१६॥
अथ गर्भाशयं बीजस्रोतसी च विशेषतः ।
दूषयेच्चेद् विषं घोरं तत्प्रशोथरुजाकरम् ॥१७॥
बीजस्रोतोनिरोधेन बन्ध्यत्वं योषितां तदा ।
असृग्दरश्च सरुजः पूयस्रावश्च भूरिशः ॥१८॥
यदा तु मुष्कौ प्रसरेत्तथाऽधिवृषणीद्वयम् ।
वीर्यस्रोतोयुगं वापि तत्प्रशोथरुजाकरम् ॥१९॥
वीर्यमार्गनिरोधेन तदा वन्ध्यः पुमान् भवेत् ।
अपि मैथुनसामर्थ्ये वीर्यं यस्मान्न सिच्यते ॥२०॥

पूयमेहविषं स्तोकं यस्य रक्ते प्रसर्पति ।
सन्धिवातोऽस्य विषजः प्रायश्च क्रोष्टुशीर्षकः ॥२१॥
पूयमेहविषे घोरे रक्तस्रोतसि सङ्गते ।
भूयिष्ठमात्रेऽभिन्यासः प्रायेणाऽसाध्यकोटिकः॥२२॥
पूयमेहस्य पूयश्चेत् कणामात्रो विशेद् दृशि ।
ततः स्याद् विषजो घोरो नेत्राभिष्यन्द आन्ध्यकृत् ॥२३॥
गर्भिण्याः पूयमेहिन्याः प्रसूतस्य शिशोः स च ।
प्रायेण नेत्रनाशाय परस्यापि क्वचित्तथा ॥२४॥
अथ मूत्रप्रसेकस्य मूलाधारांशगस्य चेत् ।
क्षतरोपेण सङ्कोचाच्छनैर्मार्गो निरुध्यते ॥२५॥
वायौ प्रवृद्धे संकोचोऽभ्यधिकोऽस्य पुनर्भवेत् ।
तदा प्रसेकसङ्कोचसंज्ञः कष्ट उपद्रवः ॥२६॥
निरुद्धमूत्र कष्टात् स दन्तान् खादति वेपते ।
मेहनं मर्दयेद् गाढं मुहुः कूजन् प्रवाहते ॥२७॥
शकृन्मुञ्चति मूत्रन्तु बिन्दुशो नैव वा क्वचित् ।
शल्यतान्त्रिकसाध्योऽयं पुनर्भावी ह्युपद्रवः ॥२८॥
एष रोगः कदाचित् स्यादश्मर्यादिकृतान् क्षतात् ।
काले प्रवयसाञ्चापि पौरुषग्रन्थिवृद्धितः ॥२९॥
इति आगन्तुपूयमेह निदानम् समाप्तम् ॥७८॥

फिरङ्गरोगनिदानम् ।

निरुक्तिः—

फिरङ्गजुष्टस्त्रीपुंस संयोगात् कालयोगतः ।
क्षतं यत् कठिनस्पर्शं शिश्नादौ मण्डलाकृति ॥ १ ॥
द्वि-त्रमासात्ततो यश्च विषवीसर्पकृत्त्वचि ।
विशिष्टक्रिमिजन्यऽसौ स्वकृतः स्यात् फिरङ्गकः॥ २ ॥

मातृरक्ते क्रिमिव्याप्ते यदपत्यं प्रजायते ।
तदपि स्याद् तदाक्रान्तं जीर्ण-शीर्णं स्वलक्षणैः ॥ ३ ॥
जन्मदोषकृतः सोऽसौ फिरङ्गःस्याद् दुरायतिः ।
बीजदोषकृतं केचित्तमेवाहुः फिरङ्गकम् ॥ ४ ॥

इतिहासः—

प्राग् वत्सरचतुःशत्याः फिरङ्गाणां प्रसङ्गतः ।
भारते समभूदेष रोगः क्रिमिविषोद्भवः ॥ ५ ॥
अथ स्त्री पुंससंयोगात् क्रमाद् व्याप्तं विषं हि तत् ।
भारतीयान् परांश्चापि संक्लेशयति सर्वथा ॥ ६ ॥

निदान सम्प्राप्तिश्च:—

आवर्त्तिनी लताशुङ्गा यथा तादृक् स्वरूपतः ।
स्वच्छत्रिपणिमासंज्ञः क्रिमिः सूक्ष्मोऽत्र कारणम् ॥ ७ ॥
क्रिमिजुष्टक्षतावास-योन्यादेः स्पर्शयोगतः ।
मैथुने स क्रिमिः क्षामन्नदृश्यो विशते तनुम् ॥ ८ ॥
प्रसुप्तवदसौ पक्षं द्वि–त्रपक्षानथापि वा ।
क्रिमियुक्पिडकां कुर्यात् क्षतं तूर्णं भवेत्ततः ॥ ९ ॥
दोषाः सर्वेऽथ कुप्यन्ति दूष्यन्ते सर्वधातवः ।
दृश्यन्ते तेन लिङ्गानि त्वङ्मांसाऽस्थिषु भूरिशः ॥१०॥
अथोपशान्तप्रायेषु शनैर्लिङ्गेषु तद्विषम् ।
कुर्यात् सुप्तोत्थितमिव काले कष्टानुपद्रवान् ॥११॥
मातृरक्ते प्रदुष्टे तु यदागर्भः प्रजायते ।
तदा व्यापद्यते भ्रूणा जीवेद् वापि कदाचन ॥१२॥
जातश्च चिररोगी स फिरङ्गक्रिमिसंकुलः ।
विषाक्तरक्तलिङ्गानि काले काले प्रदर्शयेत् ॥१३॥

न वीर्यं नापि वा बीजं गर्भे सञ्चारयेत् क्रिमीन् ।
अमरातु तदाऽक्रान्ता गर्भस्तैः सम्प्रदूयते ॥१४॥

लिङ्गानि दशात्रयविभागश्च:—

तिस्रो दशाः फिरङ्गस्य स्वार्जितस्य भवन्ति हि ।
प्रथमा तु क्षतोत्पत्तेः द्वि-त्रमासांस्ततः परम् ॥१५॥
आ-षण्मासं द्वितीया स्यात् त्वङ्मांसास्थिसमाश्रया ।
वर्षं वर्षद्वयं वा सा न चेत् सम्य गुपक्रमः ॥१६॥
तृतीया त्वतिगम्भीरा दुर्ज्ञेया दुरुपक्रमा ।
वर्षाणां त्रिंशतिं तिष्ठेत् त्रिंशद्वर्षाणि वा क्वचित् ॥१७॥
तासाञ्च कालनियमो विषस्याल्पाधिकत्वतः ।
उपक्रमस्य भेदाच्च बहुधा परिवर्त्तते ॥१८॥

लिङ्गानि (प्रथमादशा):—

मासाद्वा सार्धमासाद्वा पक्षाद्वापि व्यवायतः ।
शिश्नमुण्डे तच्छदे वा भगोष्ठे वा तदन्तरे ॥१९॥
चूचुके वा मुखादौ वाऽप्यंगुल्यां वा गुदेऽपि वा ।
सम्भवेत् पिड़का स्वल्पा स्फुटिता सा क्षतं तदा ॥२०॥
तरुणास्थिसमस्पर्शं मण्डलं स्वल्परुक्-स्रवम् ।
समुन्नतं सगर्तं वा क्रिमियुक् क्विणशोषि तत् ॥२१॥
क्षतसन्निहिते स्थाने लसीकाग्रन्थयस्तु यै ।
ते शूयन्ते न पच्यन्ते चलत्पूगफलोपमाः ॥२२॥
क्षतन्तु सार्धमासान्तः सूपक्रान्तं प्ररोहति ।
प्रथमेयं दशा प्रोक्ता फिरङ्गविषसम्भवा ॥२३॥
द्वितीयायां दशायान्तु द्वित्रमासैः क्षतोद्भवात् ।
प्रसर्पणं विषस्य स्यात् सर्वधात्वाशयादिषु ॥२४॥

आताम्रैः श्यावकृष्णैर्वा प्रायो विषमसीमकैः ।
मण्डलैश्चत्वराभैर्वा व्याप्यन्ते बहुधा त्वचः ॥२५॥
क्वचिन्मसूरिकाकाराः क्वचिद्विस्फोटसन्निभाः ।
पिड़काश्चाऽस्य बहुशो गात्रचर्मस्वकण्डुराः ॥२६॥
चिह्नानि तानि भूम्ना स्युर्जङ्घयोरुदरोरसोः ।
करपादतले चाऽपि न प्रायो मुखमण्डले ॥२७॥
ज्वरश्च विषमस्तस्य निशि तीव्रा शिरोरुजा ।
ज्वरपूर्वं कदाचिद् वा सम्भवेत्त्वाचवैकृतम् ॥२८॥
वंक्षणया गलबाह्वा वा ग्रन्थयोऽन्यत्र वा क्वचित् ।
इहापि शूनास्तिष्ठन्ति कठिनीभवन्ति च ॥२९॥
पतन्ति केशाः वर्धते कृशता पाण्डुता तनोः ।
दन्ताश्चापि विशीर्यन्ते कोथो हन्वस्थनि क्वचित् ॥३०॥
जायन्ते चाथ केषाञ्चित्त्वक् कलासङ्ग मस्थले ।
ओष्ठे गुदे भगे शिश्ने शोणोङ्काः पाण्डुरोन्नताः॥३१॥
शिलीन्ध्रशीर्षकाकाराः श्लेष्मजाश्चिरकारिणः ।
छत्राकार्शांसि नामैते प्रायेण स्युः फिरङ्गजाः ॥३२॥
अस्थीनि सन्धयो वाऽपि प्रशूयन्ते रुजन्ति च ।
विशेषतश्च जङ्घास्थ्नः पुरोगाऽस्थिधरा कला ॥३३॥
तारामण्डलशोथश्च क्षतं वा स्वच्छमण्डले ।
दृष्टेर्विघातकृत् प्रायः शिरो-नेत्ररुजाप्रदम् ॥३४॥
फिरङ्गविषवीसर्पाः सरसानि क्षतानि च ।
रोगसंक्रमणायाऽलं तद्विषक्रिमियोगतः ॥३५॥
नासामूले च कस्यापि पुञ्जमस्थ्नां विशीर्यते ।
नासासेतुविलोपश्च तेन स्यात् पूतिनस्ययुक् ॥३६॥

कस्यापि वाऽथ क्षतमुल्वणं स्यात्
तालवस्थ्नि वा तालुनि कोमले वा ।
विशीर्णमांसास्थि ततश्च गर्त्तं
येनाऽन्नपानादि नसोनिरेति ॥३७॥
कस्यापि शल्कस्तरसंवृतं स्यात्
त्वचि क्षतं मण्डलवत् सचूडम् ।
जीर्णे द्वितीयेऽथ फिरङ्गवेगे
तृतीयके वा शिखरिक्षतं तत् ॥३८॥
द्वितीयेयं दशा प्रोक्ता प्रायो वर्षद्वयावधिः ।
वर्षाद्वर्षार्धकाद्वाऽपि सोपक्रान्ता प्रशाम्यति ॥३९॥
तृतीया तु फिरङ्गस्य दशा वर्षद्वयात् परम् ।
वर्षाणां विंशति यावत्त्रिंशद्वर्षाण्यथाऽपिवा ॥४०॥
विषविस्फोटवास्तत्र विषगण्डकसंज्ञकाः ।
बहिर्वाऽभ्यन्तरे वाऽपि सम्भवन्ति यतस्ततः ॥४१॥
ते केचित् कन्दुकाकारा बदरादिनिभाः परे ।
उत्ताना वाऽथ गम्भीरास्त्वङ्मांसा स्थ्यादि पीडना ॥४२॥
बहिर्भवस्त्वसौ कुर्यात् प्रभिन्नः क्षतमण्डलम् ।
पिच्छागर्भं गभीरञ्च तच्चिरेण प्ररोहति ॥४३॥
अन्तर्भवस्तु प्रायेण कन्दुकाभोऽवतिष्ठते ।
वर्धते चाश्रयाऽशः स विविधं वैकृतं दिशन् ॥४४॥
अथाऽस्मिन् सति कोष्ठान्तर्लिंगं विद्रधिवद् भवेत् ।
फुस्फुसे यकृति प्लीह्नि पृष्ठवंशादिकेऽथवा ॥४५॥
मस्तिष्के वा सुषुम्नायाः काण्डे वा तस्य सम्भवात् ।
सकाङ्गकम्पोऽपस्मारः पंगुतादिश्च जायते ॥४६॥

महाधमन्या मूलेवाऽरोहिभागेऽथवा क्वचित् ।
प्रशोथस्फारता चैव ततो हृद्रोगसम्भवः ॥४७॥
प्रायशो धमनीनाञ्च सूक्ष्माणान्तु विशेषतः ।
कलाऽन्तरीयाशूयेत शनैः स्रोतोनिरोधकृत् ॥४८॥
धमनीभंगुरत्वं वा स्थितिस्थापकताक्षयात् ।
धमनीवृतिषु ह्यत्र सुधाकणकसञ्चयः ॥४९॥
इत्थं मस्तिष्कमूलस्थ-धमनी चक्रसम्भवाः ।
तिस्रस्तिस्रो धमन्यो या मस्तिष्कं तर्पयन्ति हि ॥५०॥
तासामेकतमायर्हि रुध्यते त्रुट्यतेऽथवा ।
तदा संन्यास रोगेण: मृतिः पक्षवधादि वा ॥५१॥

जन्मदोषफिरङ्ग लिङ्गानिः—

जन्मदोषकृतः प्रोक्तः फिरङ्गाख्यगदस्तु यः ।
लिङ्गान्युक्तानि तत्रस्युः क्रमस्तेषां तु भिद्यते ॥५२॥
बालः सजातः स्वस्थोपि प्रायो मासद्वयात् परम् ।
पीनसं श्वासकृच्छ्रञ्च वीसर्पादींश्च दर्शयेत् ॥५३॥
नासास्थिनी च शीर्येते नासासेतुश्च भज्यते ।
गलरोगश्चबाधीर्यं मूकता च ततःक्वचित् ॥५४॥
सृक्कणीच विदीर्येते मुखान्तश्च क्षताकुलम् ।
येनास्मै स्तन्यदायिन्यां फिरङ्गविषसंक्रमः ॥५५॥
ईषच्छोणान्यायतानि स्वल्पोत् सेधानि चास्य हि ।
छत्राकाशांसिजायन्ते यथोक्तानि गुदादिषु ॥५६॥
गात्रेषु विषवीसर्पो विशेषातुनितम्बयोः ।
ऊर्वन्तभोगयोश्चापि ताम्रः श्यावश्चदृश्यते ॥५७॥
यकृत् प्लीह्नोश्च वृद्धिस्यादस्थिप्रान्तेषु शूनता ।

सन्धिशोफश्च सरुजः प्रायोऽस्थ्यस्थिगुटीवृतः ॥५८॥

सार्धवर्षेण वर्षेणलिङ्गान्येतानि भूरिशः ।
अपयान्ति पुनश्चास्य विषं कालात् प्रकुप्यति ॥५९॥

दन्तोद्गमे द्वितीयेतु यौवनारम्भ एव वा ।
तानि तान्येव लिङ्गानि पुनराविर्भवन्ति च ॥६०॥

प्रायशो राजदन्तौ च भवतः कीलका कृती ।
अग्रेऽर्धचन्द्रलूनौवा शीर्यन्ते च नखा अपि ॥६१॥

तारामण्डलगः शोथः क्षतं वा स्वच्छमण्डले ।
अभिष्यन्दश्चनेत्र स्याद् दृष्टिनाशस्ततः क्वचित् ॥६२॥

काले लब्धवयस्कस्य तस्य स्युर्विषगंडकाः ।
प्रायेणाभ्यन्तरास्ते च विषश्चेद्व शिष्यते ॥६३॥

मस्तिष्कसौषुम्निकतन्त्रगं चेद्
विषं विदध्याद् विकृतिं तदन्तः ।
तदा शिशोरप्यनिलोद्भवाः स्यु
रंगेषु वैकल्यकरा विकाराः ॥६४॥

मस्तिष्कान्तः वृतिषु च फिरङ्गक्रिमिसञ्चये ।
मनोव्याधिं पुरस्कृत्य सम्भवन्त्यनिलामयाः ॥६५॥

उन्मादो वातकफजो वाग् जाड्यञ्चौष्ठकम्पयुक् ।
अङ्गा नामवसादश्च शनैः कर्मण्यता क्षयः ॥६६॥

क्वचिद्वाचालता वाऽपि पङ्गुता च भ्रमिः क्लमः ।
यूनां प्रायेण रोगोऽयमायतौ मरणप्रदः ॥६७॥

वृद्धानामप्यसौ रोगः स्वकृते स्यात् फिरङ्गके ।
दुश्चिकित्स्यो मनोनाशी प्रत्याख्ये यश्चिरं स्थितः ॥६८॥

हन्ताऽयं दारुणो रोगो दहन् देहं तुषाग्निवत् ।
कुशलै रनुपक्रान्तश्चिरं क्लेशयते तनूम् ॥६९॥
इति फिरंगरोग निदानम् समाप्तम् ॥ ७९ ॥

अशीति वातरोगनामानि

अशीतिर्वातजा रोगाः कथ्यन्ते मुनिभाषिताः ।
आक्षेपको हनुस्तम्भ ऊरुस्तम्भः शिरोग्रहः ॥ १ ॥
बाह्यायामोऽन्तरायामः पार्श्वशूलं कटिग्रहः ।
दण्डापतानकः खल्ली जिह्वास्तम्भस्तथाऽर्दितम् ॥ २ ॥
पक्षाघातः क्रोष्टुशीर्षो मन्यास्तम्भश्च पङ्गुता ।
कलायखञ्जता तूनी प्रतितूनी च खञ्जता ॥ ३ ॥
पादहर्षो गृध्रसी च विश्वाची चापबाहुकः ।
अपतानो व्रणायामो वातकण्टोऽपतन्त्रकः ॥ ४ ॥
अङ्ग भेदोऽङ्गशोषश्च मिन्मिनत्वं च कल्लता ।
प्रत्यष्ठीलाऽष्ठीलिका च वामनत्वं च कुब्जता ॥ ५ ॥
अङ्गपीडाऽङ्गशूलं च संकोचस्तम्भरूक्षताः ।
अङ्गभङ्गोऽङ्गविभ्रंशो विड्ग्रहो बद्धविट्कता ॥ ६ ॥
मूकत्वमतिजृम्भा स्यादत्युद्गारोऽन्त्रकूजनम् ।
वातप्रवृत्तिः स्फुरणं सिराणां पूरणं तथा ॥ ७ ॥
कम्पः कार्श्यं श्यावता च प्रलापः क्षिप्रमूत्रता ।
निद्रानाशः स्वदेनाशो दुर्बलत्वं बलक्षयः ॥ ८ ॥
अतिप्रवृत्तिः शुक्रस्य कार्श्यं नाशश्च रेतसः ।
अनवस्थितचित्तत्वं काठिन्यं विरसास्यता ॥ ९ ॥
कषायवक्त्रताऽऽध्मानं प्रत्याध्मानं च शीतता ।
रोमहर्षश्च भीरुत्वं तोदः कण्डू रसाज्ञता ॥१०॥

शब्दाज्ञता प्रसुप्तिश्च गन्धाज्ञत्वं दृशःक्षयः ।

चत्वारिंशत्पित्तरोगनामानि ।

अथ पित्तभवा रोगाश्चत्वारिंशदिहोदिताः ॥११॥
धूमोद्गारो विदाहः स्यादुष्णाङ्गत्वं मतिभ्रमः ।
कान्तिहानिः कण्ठशोषो मुखशोषोऽल्पशुक्रता ॥१२॥
तिक्तास्यताऽम्लवक्त्रत्वं स्वेदस्रावोऽङ्गपाकता ।
क्लमो हरितवर्णत्वमतृप्तिः पीतगात्रता ॥१३॥
रक्तद्रावोऽङ्गदरणं लोहगन्धास्यता तथा ।
दौर्गन्ध्यं पीतमूत्रत्वमरतिः पीतविट्कता ॥१४॥
पीतावलोकनं पीतनेत्रता पीतदन्तता ।
शीतेच्छा पीतनखता तेजोद्वेषोऽल्पनिद्रता ॥१५॥
कोपश्च गात्रसादश्च भिन्नविट्कत्वमन्धता ।
उष्णोच्छ्वासत्वमुष्णत्वं मूत्रस्य च मलस्य च॥१६॥
तमसो दर्शनं पीतमण्डलानां च दर्शनम् ।
निःसरत्वं च पित्तस्य चत्वारिंशद्रुजः स्मृताः॥१७॥

विंशतिश्लेष्मरोगनामानि

कफस्य विंशतिः प्रोक्ता रोगास्तन्द्राऽतिनिद्रता ।
गौरवं मुखमाधुर्यं मुखलेपः प्रसेकता ॥१८॥
श्वेतावलोकनं श्वेतविट्कत्वं श्वेतमूत्रता ।
श्वेताङ्गवर्णता शैत्यमुष्णेच्छा तिक्तकामिता ॥१९॥
मलाधिक्यं च शुक्रस्य बाहुल्यं बहुमूत्रता ।
आलस्यं मन्दबुद्धित्वं तृप्तिर्घर्घरवाक्यता ॥२०॥
अचैतन्यं च गदिता विंशतिः श्लेष्मजा गदाः ।

आयुर्वैदिक और एलोपैथिक

पारिभाषिक शब्द सूची

—*—

२. ज्वर-FEVER.

क्षुद्र ज्वर	Febricula, Pyrexia.
अपचन जनित ज्वर	Gastric fever (Alimentary fever)
स्नानोत्तर ज्वर	Bath fever.
रात्रि ज्वर	Bed fever.
प्रतिश्यायज ज्वर	Catarrhal fever.
परिश्रमज ज्वर	Fatigue fever.
सान्निपातिक ज्वर	
तन्द्रिक (वातश्लेष्मज)	Influenza.
प्रलापक (वातपित्तज)	Typhus.
रक्तष्ठीवी (कफपित्तज)	Pneumonic fever.
मन्याज्वर, भुग्ननेत्र, ककच	Cerebrospinal fever.
हारिद्रक	Yellow. ,,
मंथर (आंत्रिक मोतीभरा)	Typhoid. ,,
विषम आन्त्रिक ज्वर	Paratyphoid. ,,
पूय ज्वर	Pyaemia. ,,
गर्भविषज ज्वर	Absorption. ,,
पूतिविषज ज्वर	Septic ,,

सूतिका ज्वर	Puerperal. fever.
शोण ज्वर	Scarlet. ,,
ग्रन्थिक ज्वर	Plague. ,,
रक्तविनाशक ज्वर	Black-water ,,
सेन्द्रियविषज ,,	Septicaemia ,,
आगन्तुक ज्वर	Adventitious ,,
अभिघातज ज्वर	Traumatic ,,
औषधिगन्धज ज्वर	Hay ,,
अभिचारज ,,	Incantational ,,
अभिशापज ,,	Imprecational ,,
अभिषंगज ,,	Infectious ,,
काम ज्वर	Chronic fever due to the lustfulness.
क्रोध ज्वर	Pyrexia due to the mental exitement.
शोक ज्वर	Fever due to the sensitive bereavement.
भय ज्वर	Pyrexia owing to terrification.
भूताभिषङ्गज ज्वर	Fever due to bad feeling of the devil.
विषम ज्वर	Malerial fever.
संतत / विषम प्रकोपी } ज्वर	Malerial remittent fever

सतत ज्वर	Double quotidian ,,
सविराम नियमित ज्वर	Intermittent fever.
सविराम अनियमित ज्वर	Irregular fever.
अन्येद्युष्क (एकाहिक),,	Quotidion fever
तृतीयक ज्वर	Tertion fever
तृतीयक विपर्यय ज्वर	Malignant tertion ,,
चातुर्थिक ,,	Quartan fever.
चातुर्थिक विपर्यय ,,	Double quartan fever
काल ज्वर	Kala Azaror.
,, (जीर्ण)	Cachexial fever.
अन्तर्वेगी घातक ज्वर	Algid pernicious ,,
विशेष ज्वर	Specific fever.
अल्पकालस्थायी ज्वर	Ephemeral fever.
संक्रामक ज्वर	Contagious fever.
आनुषङ्गिक ,,	Symtomatic ,,
अंशुघातज ज्वर	Thermic fever.
सूतिका ज्वर	Puerperal fever.
स्तन्योत्थ ज्वर	Milk fever.
प्रदाहज ज्वर	Inflammatory fever
प्रत्याघातज ज्वर	Reactionary fever.
मूषकदंशज ज्वर	Ratbite fever.
चिंचड़ीजन्य ज्वर	Tick fever.
संधिक ज्वर (आमवातिक)	Rheumatic fever.

दण्डक ज्वर	Dengue fever.
कर्णमूलिक ज्वर	Mumps fever.
श्लैपदिक ज्वर	Filarial fever.
परिवर्तित ज्वर	Relapsing fever.
कण्ठरोहिणी जन्य ज्वर	Diphtherial fever.
कृत्रिम ज्वर	Artificial fever.
अक्षतज ज्वर	Aseptic fever.
अस्थिभंगज ज्वर	Fracture fever.
जीर्ण ज्वर	Continued fever.
प्रलेपक ज्वर	Hectic fever.

३. अतिसार प्रवाहिका, ज्वरातिसार

अतिसार	Diarrhoea.
आमातिसार	Mucous colitis.
अभिषंगज अतिसार	Nervous diarrhoea.
बालातिसार	Infantile „
ग्रीष्मज अतिसार	Summer „
श्वेत अतिसार	Diarrhoea alba.
तीव्र „	Choleraic diarrhoea
पूयमय अतिसार	Diarrhoea chylosa.
अध्यशनज अतिसार	Crapulous diarrhoea.
रक्तातिसार	Dysenteric „
पार्वतीय अतिसार	Hill diarrhoea.
वसातिसार	Steatorrhoea.

शोकातिसार	Diarrhoea due to the bereavement.
प्रवाहिका	Dysentery.
गंधहीनक्षारीय (बेसिलरी)	Bacillary dysentery
अम्लगंधज (एमेबिक)	Amoebic ,,
ज्वरातिसार	Diarrhoea with fever

४. ग्रहणी-Chronic diarrhoea, dysentry.

अन्त्रक्षय	Intestinal tuberculosis
जीर्णातिसारज ग्रहणी	Chronic diarrhoea.
,, (प्रवाहिकासह)	Chronic dysenteric diarrhoea.
रसक्षय	Coeliac disease.
राजग्रहणी– (संग्रहणी, श्वेतातिसार)	Sprue

५. अर्श-Haemorrhoids.

अन्तरार्श	Internal piles.
बाह्यार्श	External ,,
शुष्कार्श	Nonbleeding piles.
रक्तार्श	Bleeding ,,
मांसार्श	Polypus

६. अग्निमांद्य, अजीर्ण, विसूचिका, विलम्बिका

अग्निमांद्य	Loss of appetite or dyspepsia.

अजीर्ण	Indigestion, dyspepsia
वातनाड़ी विकारज	Nervous dyspepsia.
अजीर्ण वातप्रकोपज	Flatulent dyspepsia.
आमाशयप्रदाहज	Catarrhal ,,
भस्मक	Bulimia.
विलम्बिका-रसशेषाजीर्ण	Atonic dilatation of the stomach.
प्रतिरोधज आमाशय-प्रसारण, विलम्बिका	Obstructive dilatation of the stomach
विलम्बिका (बृहदन्त्रप्रसारण)	Idiopathic dilatation of the colon.
विसूचिका	Cholera.
,, अपचनजन्य	Cholera due to indigestion.
विसूचिका ग्रीष्मकालीन	Cholera morbus.
विसूचिका कीटाणु-प्रकोपज, जानपदिक	Asiatic cholera.
विसूचिका शीतकालीन	Winter cholera sicca

७. क्रिमिरोग

चुरव कृमि	Oxyuris vermicularis (thread worm.)
उदरावेष्टा कृमि (कद्दूदाना)	Taeniasis, cestodus (Tape worm)
रूढ धान्यांकुरा कृमि	Trichinella spiralis.

अन्त्रदा कृमि	Ankylostoma duodenale (Hook worm)
पत्राकार कृमि	Trematodes (Fluke)
गण्डूपद ,, (महागुदा, गोल कृमि)	Nematodas Ascariasis (Round worm)

८. पाण्डु, कामला, कुम्भ कामला, हलीमक

पोषणाभावज पाण्डु	Deficiency anaemia.
गर्भवृद्धिज पाण्डु	Anaemia of pregnancy.
रक्तस्रावज पाण्डु	Anaemia due to haemorrhage.
लसीका ग्रन्थिवृद्धिज पाण्डु	Lympho granuloma
सेन्द्रिय विषज श्लैष्मक	Leukaemia.
सान्निपातिक पाण्डु	Pernicious anaemia.
कीटाणु विषज पाण्डु	Anaemia due to toxin
कामला	Jaundice.
अवरोधात्मक कामला	Obstructve jaundice
जन्मजात कामला	Icterus melas, black jaundice.
बाल कामला	Icterus neonatorum.
रक्तविनाशज कामला	Haemolytic jaundice
विषज कामला	Toxic jaundice.
कुम्भ कामला संक्रामक	Febrile Icterus.
कुम्भ कामला	Passive congestion of liver.

हलीमक	Chlorosis
हलीमक कृमिज	Ankylostomiasis.

६. रक्तपित्त-Haemorrhagic diseases.

त्रिदोषज रक्तपित्त	Purpura
गम्भीर	Purpura haemorrha-gica.
सौम्य	Purpura Simplex.
आमवातिक रक्तपित्त	Purpura rheumatica.
वंशागत रक्तपित्त प्रवणता	Hereditary haemorrhagic diathesis.
वंशागत रक्तरोधक शक्ति ह्रासज रक्तपित्त	Haemophilia.
शीताद,कफ रक्तज रक्तपित्त	Scurvy.

१०. राजयक्ष्मा, क्षतक्षीण

राजयक्ष्मा	Phthisis, T.B., Tuberculosis.
राजयक्ष्मा वंशागत (वंशागत क्षयप्रवणता)	Tuberculous diathesis
बाल सौम्य राजयक्ष्मा	Epi-tuberculosis
राजयक्ष्मा पिटिकामय	Tuberculosis miliary
राजयक्ष्मा सौत्रिक	Fibroid phthisis.
राजयक्ष्मा प्रसरणशील	Galloping phthisis.
" अस्थिक्षय	Bone T. T.
" अन्त्रक्षय	Intestinal T. B.

राजयक्ष्मा लसीकाक्षय	Lymph T. B.
,, संधिक्षय	Joint T. B.
उरःक्षत	Pulmonary cavitation

११. कास-Cough

निशाकास	Night cough.
श्वासनलिका प्रदाह (वातिककास ?)	Croupous bronchitis, dry bronchitis.
,, पूयमय	Bronchities purulent.
क्षतज कास	Heamoptysis.
कुक्कुर कास	Whooping cough.
क्षयज कास	Bronchiectasis.
कफज कास (नूतन)	Chronic bronchitis
कफज कास दुर्गन्धमय	Putrid bronchitis.
कफज कास (जीर्ण)	Bronchitis sicca.
पित्तज कास ?	Acute Bronchitis

१२. हिक्का, श्वास

हिक्का	Hiccup, Hiccough.
हिक्का अन्नजा	,, due to the gastric irritation.
हिक्का यमला	Double hiccup.
हिक्का क्षुद्रा	Mild hiccup.
हिक्का गम्भीरा	Serious ,, (Secondary due to the new growths of the mediastinum.)

महा हिक्का	Hiccup due to the cerebral irritation.
महा हिक्का उपद्रवभूत	Hiccup secondary due to the intra-cranial tumour.
हिक्का जनपद्व्यापी	Epidemic hiccough.
श्वास	Dyspnoea.
महाश्वास	Amphoric brething due to the oedema of lungs.
ऊर्ध्वश्वास	Orthopnea due to the iufarction of the lungs.
छिन्नश्वास	Cheyne-stokes respiration.
क्षुद्रश्वास	Breathlessness.
हृदय विकृतिसह क्षुद्रश्वास	Cardiac asthma
वातनाड़ी विकारज ,,	Nervous ,,
अपचनजनित ,,	Gastric ,,
कण्ठमणि विकारज श्वास	Thymic ,,

१३. स्वरभेद-Hoarseness.

प्रसेकमय स्वरयन्त्र प्रदाह	Catarrhal Laryngitis
शोथमय ,,	Oedematous ,,
क्षयज ,,	Tuberculous ,,

फिरङ्गज ,,	Syphilitic ,,
साक्षेप ,,	Spasmodic ,,
उपद्रवभूत ,,	Phlegmonous ,,
चिरकारीगोन्नाकार ,,	Laryngitis sicca.
त्रिदोषज स्वरभेद	Hoarseness due to the new growths of the larynx.

१४. अरोचक-Anorexia.

वातनाड़ीविकारज अरुचि	Anorexia nervosa.
मानसविकारज ,,	Psychopathic anorexia.

१५. छर्दि-Vomiting.

मस्तिष्कविकारज छर्दि	Cerebral vomiting.
अपतन्त्रकज छर्दि	Hysterical ,,
सगर्भा की घातक छर्दि	Pernicious ,,
पित्तप्रकोपज छर्दि	Bilious vomiting of pregnancy.
पुनरावर्तक छर्दि	Cyclic vomiting.
उदरयन्त्रविकारज छर्दि	Stercoraceous ,,
उत्क्लेश (अमका)	Regurrgitation.
हृल्लास	Nausea

१६. तृष्णा

बढीहुई तृषा	Polydipsia.

लक्षणात्मक तृषा	Dipsosis.
मिथ्या तृषा	False thirst.

१७. मूर्च्छा, भ्रम, निद्रा, तन्द्रा, संन्यास

मूर्च्छा	Syncope, Fainting.
हृद्धमनी रोधज मूर्च्छा	,, Anginosa.
साक्षेपस्वरयन्त्रज	Laryngeal syncope.
प्राणवायुरोधज ,,	Local syncope.
जन्मकाल में ,,	Asphyxia neonatorum
बलह्रासज ,,	,, Pallida.
अभिघातज ,,	Traumatic Asphyxia.
आतपाभिघातज ,,	Sunstroke.
भ्रम	Vertigo. Giddiness.
हृद्रोगज भ्रम	Cardiac vertigo.
कर्णरोगज भ्रम	Auditory ,,
मस्तिष्करोगज भ्रम	Cerebral ,,
अपस्मारज ,,	Epileptic ,,
अजीर्ण प्रकोपज भ्रम	Gastric ,,
मानसरोगज ,,	Hysterical ,,
ओजक्षयज ,,	Neurasthenic vertigo.
नेत्ररोगज ,,	Ocular ,,
विषज ,,	Toxic ,,
निद्रारोग	Sleeping sickness.
मादकऔषधज निद्रा	Narcolepsy
तन्द्रा	Drowsiness.

संन्यास	Coma.
शीतांगसह संज्ञानाश	Cataleysy.
मद्यज संन्यास	Alcoholic coma.
मस्तिष्कमें रक्तस्रावज	Apoplectic ,,
शिरपरप्रहारज	Coma due to concussion.
मधुमेहज संन्यास	Diabetic coma
मूत्राघातज ,,	Uremic ,,
त्रिदोषज	Coma vigil
मूढता	Anergic stupor.
सूर्यतापज संन्यास	Heat apoplexy.

१८. पानात्यय-Dipsomania.

मद्दात्यय	Dipsomania.
पानविभ्रम (बढी हुई पेय लालसा)	Alcoholomania.
मद्यविषज विकृतावस्था	Alcoholism.

१९. दाह-Burning sensation.

आमाशयस्थ दाह	Cardialgia.
अम्लोद्गारसह दाह	Pyrosis, waterbrash.

२०. उन्माद-Mania, Insanity.

अपस्मारज उन्माद	Epileptic mania.
अपतन्त्रज ,,	Hysterical mania.
सूतिकाविषज ,,	Puerperal ,,

वंशागत उन्माद्	Hereditary mania
विपरीत ज्ञान	Hallucination
मानस विषाद्	Melancholia
मनोनाश	Dementia.
विकृत व्यापारयुक्त मनोनाश	Katatonia.
त्रिदोषज उन्माद्	Delirious mania.
ज्ञानलोप	Stupor.
मनोभ्रम	Delusional insanity.
अतत्त्वाभिनिवेश	Dementia paralytica.
भ्रमप्रधान मूढता	Paranoia.
आभासप्रधान मूढता	Paraphrenia.
विवेकहीन ,,	Ament.
मद्यज उन्माद्	Delirium tremens.

२१. अपस्मार-Epilepsy.

वातज अपस्मार	Cardiac epilepsy.
पित्तज (आमाशय प्रकोपज अपस्मार)	Gastric epilepsy.
रजोरोधज ,,	Menstrual ,,
अभिघातज ,,	Traumatic ,,
विषप्रकोपज ,,	Toxemic ,,

२२. वातव्याधि

अपतन्त्रक	Hysteria.
अपतानक (धनुस्तम्भ)	Tetanus.
धनुर्वात	,, Anticus.

बालधनुर्वात	Tetanus neonatorum
सूतिकाविषज धनुर्वात	Puerperal tetanus.
आमवातज धनुर्वात	Rheumatic ,,
विषप्रकोपज धनुर्वात	Toxic ,,
अभिघातज ,,	Traumatic ,,
पक्षाघात	Paralysis.
एकांग पक्षाघात	Hemiplagia.
मल्लविषज	Arsenical paraplegia.
मद्यज	Alcoholic paralysis.
मस्तिष्कस्थ	Cerebral ,,
बाहुशोष	Brachial ,,
विश्वाची	Radio-ulnar ,,
पूर्णपक्षाघात	Complete paralysis.
जिह्वास्तम्भ	Glossal palsy.
बालपक्षाघात	Infantile paralysis.
स्वरघात	Laryngyal ,,
अपतन्त्रकज घात	Hysteric hemiplegia.
मांसशोषसह आक्षेपजघात	Spastic ,,
एकांगवध	Monoplegia.
नख भेद	Oonchia.
पेशीउद्वेष्टन	Myotonia
संज्ञानाश	Numbness.
आक्षेपज पार्श्व वेदना	Pleurodynia.

सर्वांगवात	Diplegia.
आध्मान	Tympanitis,meteorism
आनाह	Constipation.
मन्यास्तम्भ	Torticollis, wryneck
मूकत्व	Aphonia, aphasia.
क्रोष्टुकशीर्ष	Septic knee.
आक्षेपक	Convulsions.
रसाज्ञान	Loss of sensibility of taste.
घ्राणनाश	,, ,, smell.
जृम्भा (स्वाभाविक)	Yawning.
निद्रानाश	Insomnia.
प्रलाप	Delirium.
पादहर्ष	Numbness of feet.
हनुग्रह	Trismus, lockjaw.
कलायखञ्ज	Lathirism.
खञ्जवात	Locomotor ataxia.
,, (शिशुओंका)	,, Infantili spastic.
बाह्यायाम	Posticus opisthotonos
अन्तरायाम	Emprosthotonos.
दण्डापतानक	Pleurothotonos.
वाताष्ठीला	Appendicitis or obstructi n in intestine due to stool-balls.

प्रत्यष्ठीला	Ovarities.
ऊर्ध्ववात	Eructation.
तूनी	Stercoral ulcer.
प्रतितूनी	Fissured „
खल्ली	Muscular spasm of hands & feet.
वातकण्टक	Ankle sprain.
सुप्तवात	Anaesthesia.
पूयमेहज संधिवात	Gonorrheal arthritis.
गृध्रसी	Sciatica.
कटिग्रह	Lumbago.
वेपथु	Paralysis agitans.
अर्धाङ्गवात	Hemiplegia.
नृत्यवात	Chorea.
अर्दित	Facial Hemiplegia.
वातनाड़ी प्रदाह	Neuritis.
वातनाड़ी शूल	Neuralgia.

२३. वातरक्त-Gout.

आमवातज वातरक्त	Rheumatic gout.
पित्तज „	Articular „
नागविषज „	Lead „

२४. ऊरुस्तम्भ-Paraplegia.

२५. आमवातRheumatism

आमवातज ज्वर	Rheumatic fever.

२६. शूल, परिणामशूल, अन्नद्रवशूल

शूल	Colic
क्षुद्रान्त्रशूल	Enteralgia.
आमाशय शूल	Gastralgia.
यकृच्छूल	Hepatic colic.
पित्ताशयशूल	Biliary colic.
उपान्त्रशूल	Appendicūlar colic.
वातनाड़ी क्रिया में शूल	Neuralgia.
अन्नद्रवशूल	Colic pain due to the gastric ulcer.
नागविषज शूल	Lead colic.
परिणामशूल(पक्वावस्था)	Colic pain due to the duodenal ulcer.
,, प्रथमावस्था	Gastralgokenosis hunger-pain.

२७. उदावर्त, आनाह

मलनिरोधज उदावर्त (अन्त्रावरोधज)	Intestinal obstruction
उद्गारनिग्रहज उदावर्त	Flatus (gas in the stomach.)
अपान निरोधज उदावर्त	Flatus (gas in the intestine.)
आनाह	Constipation.

२८. गुल्म-Abdominal Tumours.

त्रिदोषज गुल्म	Cancer of the stomach.
रक्त गुल्म	Uterine or ovarian tumour.

२९. हृद्रोग-Diseases of the heart.

वातज हृद्रोग	Cardiodynia due to the gastric flatulence.
पित्तज हृद्रोग	Palpitation of the heart due to the catarrhal gastritis.
कफज ,,	Agitated depression of the heart due to the chronic gastritis
कृमिज हृद्रोग	New growth in heart
हृच्छूल	Angina pectoris.
हृदयवृद्धि	Enlargednent of heart.
हृद् विस्तार	Dilatation of the heart.
हृत्स्पदंनवृद्धि	Palpitation.
घातक हृदयार्बुद	Carcinoma of heart.
हृत्क्रिया रोध	Heart block, heart failure.

रक्तप्रत्यागमन	Regurgitation of the blood.
हृदयावसाद	Heart depression.
स्थानान्तरित हृदय	Heart displaced.
हृदयमें वेदना	Cardiodynia.
हृदयावरणप्रदाह	Pericarditis.
हृदयान्तरकला प्रदाह	Endocarditis.
हृदयापक्रान्ति	Degeneration of the heart.
वाम हृदयखण्डवेपन	Auricular fibrillation.
हृदयताल विकृति	Cardiac arrhythmias
हृदयपेशीप्रदाह	Myocarditis.
वसाच्छादित हृदय	Fatty heart.
अधरा महाशिरामें रक्त पिण्डज अवरोध	Thrombosis of the inferior vena cava
अधरान्त्रिकी शिरा शाखामें रक्त पिण्डज अवरोध	Thrombosis of the mesenteric vein branches.

३०. मूत्रकृच्छ्र-Dysuria.

पित्तज मूत्रकृच्छ्र	Psychic dysuria.
वातज मूत्रकृच्छ्र (आक्षेपज)	Spastic „
त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र	Dysuria due to the prostatic diseases.

अश्मरीहेतुक ,,	Diseases due to the penile alternating calculus.
शनैः शनैः मूत्रत्याग	Stranguria.
मार्गाकुंचनज मूत्रकृच्छ्र	Micturition due to stricture.
क्षतज ,,	Dysuria due to ulcer
औपसर्गिकमेहज ,,	,, ,, Gonorrhoea
बहुमूत्र	Polyuria.

३१. मूत्राघात-Anuria.

वातबस्ति मूत्राघात	Retention of urine.
अश्मरीहेतुक मूत्राघात	Calculous anuria.
विषूचकेषु ,,	Anuria in cholera.
अष्ठीला रोगज ,,	Retention of urine due to prostatic diseases.
गभविषाक्षेपज ,,	Retention due to eclampsia.
वृक्कप्रदाहज ,,	,, due to septic nephritis.
कर्कस्फोटज ,,	Retention due to carcinoma.
वातकुण्डलिका	Spasmodic stricture.
मूत्रातीत	Incontinence of urine

मूत्रजठर	Distended bladder.
मूत्रोत्सर्ग	Stricture of uretha.
मूत्रक्षय	Supression of urine.
मूत्रग्रन्थि	New growth of the bladder.
मूत्रसाद	Cystitis.
विड्विघात	Retention due to vesico-intestinal fistula.
बस्तिकुण्डल	Atony of the bladder

३२. अश्मरी-Calculi urinary.

वाताश्मरी	Uric acid calculus.
पित्ताश्मरी (कठिन रक्तपित्ताश्मरी)	Oxalate calculus
कफाश्मरी	Phosphatic calculus.
शुक्राश्मरी	Spermatic ,,
पित्ताशयाश्मरी	Biliary calculus.
मूत्राशयाश्मरी	Urinary ,,
मूत्राशयाश्मरी मृदु	Cystine ,,
,, रक्तज	Fibrin ,,
,, क्षारज	Mulberry ,,
शर्करा (वृक्काश्मरी)	Renal ..
,, विद्रवणयुक्त	Xanthic ,,
प्रवालसदृश अश्मरी	Coral ,,
शर्करा (छोटा कण)	Gravel

३३. प्रमेह, प्रमेहपिड़का

प्रमेह	Urinary dyscrasias.
उदकमेह	Diabetes insipidus (nervous polyuria.)
क्षारमेह	Highly alkalin urine.
सुरामेह	Phosphaturia.
शुक्रमेह	Spermatorrhoea
लालामेह	Excessive prostatic secretion
लसीकामेह	Albuminuria
सिकतामेह	Lithuria, cystinuria
हारिद्रमेह	Excess of bile in urine
रक्तमेह	Haematuria.
माञ्जिष्ठमेह	Haemoglobinuria.
कालमेह	Melanuria.
औपसर्गिक पूयमेह	Gonorrhoea.
पूयमेह	Piyuria.
अम्लमेह	Highly acid urine.
मधुमेह	Diabetes mellitus.
,, मेदसह	Lipogenous diabetes
इक्षुमेह	Renal glycosuria or pentosuria or hepatosuria.
वसामेह सर्पिमेह	Lipuria, chyluria.

शीधुमेह	Acetonuria.
हस्तिमेह	Anuresis,incotinence of urin.
सान्द्रमेह	Mucus in urine.
प्रमेहपिड़का	Carbuncle & Deep abscesses.
क्षुद्रा जालिनी पिडका	Furuncle.
क्षुद्रा कच्छपिका पिडका	Papule.
विनता पिडका	Carbuncle.
विद्रधिका पिडका	Malignant pustula.

३४. मेदोवृद्धि-Obesity.

अत्याहारज मेदोवृद्धि	Exogenous obesity.
अन्तः स्रावी ग्रन्थि-विकारज मेदोवृद्धि	Endogenous obesity.
आग्नेय स्रावाधिक्यज मेदोवृद्धि	Hyperinsulinar obesity
वृक्कान्तर क्रियाधिक्यज मेदोवृद्धि	Hyper interrenal obesity.

३५. उदररोग

यकृत्प्रदाह	Hepatitis.
यकृद्दाल्युदर	cirrhosis of the liver.
बालपैतिक यकृद्दाल्युदर	Infantile biliary cirrhosis.
यकृत् में रक्तसंग्रह	Congested liver.

पित्तोदर(वर्द्धनशील यकृत्प्लीहोदर)	Splenomegalic cirrhosis.
मृदु यकृत्	Hepatomalacia.
यकृत् में वेदना	Hepatodynia, hepatalgia.
यकृद् विद्रधि	Hepatophyma, suppurative hapatites.
यकृद् वृद्धि	Hepatomeglia.
प्लीहावृद्धि	Enlargement of the Spleen.
प्लीहोदर	Splenic anaemia.
जलोदर	Ascites.
बद्धगुदोदर	Intestinal obstruction.
क्षतोदर	Ulceration of the intestine.
छिन्नोदर (उदर्य्याकलाप्रदाह)	Peritonitis.
सन्निरुद्ध गुद	Stricture of rectum.
छिद्रोदर	Carcinoma of the colon.
छिद्रोदर (गौण)	Regional ileitis.
उदरगुहापतन	Visceroptosis.

३६. शोथरोग

जल (रस) मय शोथ	Anasarca (general-dropsy).
कफज शोथ	Renal dropsy, (anasarca.)
वातज शोथ	Cardiac dropsy.
वातज स्थानिक शोथ	Swelling.
पित्तज विषमय शोथ	Cloudy Swelling
आमवातज शोथ	Rheumatismal Swelling.
पूयमेहज शोथ	Blennorrhagic Swelling.
क्षयज संधि शोथ	White Swelling.
व्रणशोथ वेदनामय	Inflammatory oedema.
अभिघातज शोथ	Traumatic oedema.
सार्वाङ्गिक कठिन शोथ	Myxoedema.
जनपदव्यापी शोथ	Epidemic dropsy.

३७. वृद्धि-Scrotal enlargement.

मूत्रज वृद्धि	Hydrocele.
मण्डमय वृद्धि	Chylous ,,
रक्तज वृद्धि	Haematocele.
मेदज वृद्धि	Elephantiasis Scroti
अण्डकोषमें वेदना	Orchioneuralgia,
,, तीक्ष्ण शूल	Orchiodynia.

वृषणार्बुद	Orchioncus.
अन्त्रवृद्धि (अन्त्रावतरण)	Inguinal hernia,
वृषणशोथ	Orchitis.
औपसर्गिक मेहज वृषणशोथ	Orchitis due to gonorrhoea.
स्थानान्तरित वृषणशोथ	Metastic orchitis.
वर्ध्म	Bubo.

३८. गलगण्ड, गण्डमाल, अपची, ग्रन्थि, अर्बुद

गलगण्ड	Goitre.
गलगण्ड (अर्बुदप्रधान)	Cystic bronchocel
तुंगाक्ष गलगण्ड	Exophthelmic goiter.
भ्रमणशील गलगण्ड	Wandering goiter.
गण्डमाल	Scrofula.
अपची	Ulcerative Scrofula.
नाड़ीग्रन्थि	Glioma.
ग्रन्थि	Enlarged lymphatic gland; or Neoplasm.
उपदंशज अर्श	Condyloma.
अर्बुद	Tumour and carcinoma (Cancer)
हन्वर्बुद	Actinomycosis.
रक्तार्बुद (घातक)	Sarcoma.
तरुणास्थ्यर्बुद	cartilaginous tumour (Enchondroma)

अस्थ्यर्बुद	Osteoma.
अस्थ्यर्बुद किनारे से बाहर	Exostosis.
दंतार्बुद	Odontoma.
रसार्बुद (कृमिजन्य)	Hydatid cyst.
मृदु अर्बुद	Molluscum.
त्वचामयरसार्बुद	Dermoid Tumour (cyst)
नाड्यर्बुद	Neuroma.
तन्तुमय अर्बुद	Fibroma.
नेत्रच्छदार्बुद	chalazion.
रक्तार्बुद	Angioma, hematoma.
मेदोर्बुद	Fatty tumour, lipoma.
मज्जार्बुद	Myeloma.
आच्छादक कलार्बुद	Adinoma.
स्तनार्बुद मृदु	Butyroid tumour.
पिच्छिलार्बुद	Myxoma, gilatinous tumour
लसीकामय अर्बुद	Lymphangioma.
सौत्रिकार्बुद, तांतवार्बुद	Fibroma, inoma.
रक्तार्बुद रक्तस्रावी	Hemorrhagic sarcoma
एकाधिक होनहार रक्तार्बुद	Rous' sarcoma.
असाध्य अर्बुद	Malignant tumour (adenoid cancer)

असाध्य लसीकार्बुद	Malignant lymphoma.
कोथमय कर्कस्फोट	colloma.
हरित अर्बुद	chloroma.
उत्तानस्तारकार्बुद	Epithelioma (Epithelial cancer)
मलमयार्बुद	Fecaloma.
मृदु कर्कस्फोट	Soft cancer (colloid-cancer)

३९. श्लीपद-Elephantiasis.

नेत्रच्छदस्थ श्लीपद	Elephantiasis Oculi.
अण्डकोषस्थ श्लीपद	Elephantiasis scroti.
विस्तृत रसमय ,,	Nevoid eliphantiasis.

४०. विद्रधि-Abscess.

पित्तज विद्रधि	Acute abscess.
वातज विद्रधि	chronic abscess.
त्रिदोषज (कोथमय) विद्रधि	Gangrenous abscess.
कफज विद्रधि	Lymphatic ,,
रक्तमय विद्रधि	Hemorrhagic ,,
अभिघातज विद्रधि	Traumatic ,,
फिरंगज विद्रधि	Syphilitic ,,
कृमिज विद्रधि	Verminous ,,
कण्ठमालज विद्रधि	Scrofulous ,,
रक्तरोधज(गौण) विद्रधि	Secondary ,,

महाप्राचीरानिम्नस्थ विद्रधि	Subphrenic ,,

४१. व्रणशोथ-Inflammation.

व्रणशोथ	Inflammatory oedema
पूयमय व्रणशोथ	Suppurative inflammation.
विषज ,,	Toxic inflammation.
रसमय ,,	Serous ,,
पित्तज आशुकारी ,,	Acute ,,
वातज चिरकारी ,,	Chronic ,,
कफज (रसमय) चिरकारी	Catarrhal ,,
आमवातज ,,	Rheumatic ,,

४२. शारीर व्रण-Idiopathic ulcer.

सौम्य व्रण	Follicular or simple ulcer.
शोथमय व्रण	Inflamed ulcer
क्षयज या असाध्य व्रण	Tuberculous or unhealthy ulcer
रक्तस्रावी व्रण	Haemorrhagic ulcer.
पूति व्रण	Gangrenous sore.

४३. सद्योव्रण-Accidental wounds.

छिन्न	Incised or lacerated.

भिन्न	Excised, penetrating.
विद्ध	Punctured, stabed.
अग्न्यस्त्रज विद्ध	Gunshot wound.
क्षत	Contused or incised
पिच्चित	Crushed, Contused.
घृष्ट	Excorieted.
विषाक्त व्रण	Poisoned wound.

४४. भग्न-Fracture.

संधिभग्न	Articular dislocation
काण्ड भग्न	Fracture.
उत्पिष्ट काण्डभग्न	Fracture dislocation.
विश्लिष्ट	Incomplate dislocation.
विवर्तित संधिभग्न	Lateral dislocation.
तिर्यक् काण्डभग्न	Oblique fracture.
अव्रण अस्थिभङ्ग	Simple fracture, closed.
सव्रण ,,	Compound ,, open.
अवनत ,,	Depressed ,,
अनुप्रस्थ अस्थिभङ्ग	Transverse fracture.
पिच्चित ,,	Complicated ,,
बहुभग्न ,,	Multiple ,,
अस्वाभाविक विचलन	Preternatural mobility.

विषमांगता	Deformity from displacement.
स्थानच्युति	Displacement.
पीड़ित	Compressed.
खण्डित	Interrupted.
प्रक्षुब्ध	Irritated.
कर्कट काण्ड भग्न	Spiral fracture.
अश्वकर्ण ,,	Oblique ,,
मज्जागत ,,	Impacted ,,
खल्लित ,,	Greenstick fracture.
अतिपातित ,,	Complete ,,
विस्फुटित ,,	Avulsion ,,
विचूर्णित ,,	Comminuted ,,
उत्पिष्टित ,,	Compressed ,,
अस्थिच्छल्लित भग्न	Longitudinal ,,
विस्फुटित भग्न	Fissured ,,
अवक्षिप्त	Downward displacement.
पोषणाभावज भग्न	Trophic ,,
प्रदाहरोगज ,,	Inflammatory displacement.

४५. नाडीव्रण-Sinus or fistula.

बाह्यनाड़ीव्रण	External fistula.
अन्तर्गत नाड़ी व्रण	Internal fistula.

आमाशय-प्रग्रहणीगत नाड़ीव्रण	Gastroduodenal fistula.
आमाशय अन्त्रगत नाड़ीव्रण	Gastrointestinal fistula.
गर्भाशय मूत्राशयगत नाड़ीव्रण	Genito-urinary fistula.

४६. भगन्दर-Anal fistula.

त्रिदोषज भगंदर	Blind fistula external
परिस्रावी ,,	,, ,, Internal
उष्ट्रग्रीव भगंदर (अर्धचंद्राकार)	Hoarseshoe fistula.
शतपोनक भगंदर	Multiple ,,
उन्मार्गी ,,	Traumatic ,,
शल्यज ,,	Surgical ,,

४७. उपदंश और फिरङ्ग

कीटाणुजनित उपदंश	Soft or fungating chancre
फिरङ्ग (संसर्गज उपदंश)	Hard chancre, syphilis.
प्रसर्पणशील उपदंश	Serpiginous chancroed.
लिङ्गार्श	Naevus on the penis

४८. शूकदोष

सर्षपिका शूकदोष	Papilla on the penis.

मृदित या स्पर्शहानि	Inflammation of the penis.
मांसार्बुद	New growth on the penis.
मांसपाक शूकदोष	Gangrene or degeneration of the penis.

४९. कुष्ठ-Diseases of the skin.

श्वेतकुष्ठ फिरंगज	Leukoderma c lli.
किलास कुष्ठ	Leukoderma.
महाकुष्ठ श्वेत	Lepra alba.
महाकुष्ठ उदुम्बर	Primary stage of leprosy.
,, मण्डल	Lupus vulgaris.
,, कापाल	Anesthetic leprosy.
,, काकण (गलत) कुष्ठ	Nodular leprosy.
,, ऋष्यजिह्वक	Lupus erythematous
,, सिध्म	Pityriasis
,, अलसक	Lichen ruber.
,, किट्टिभ	Psoriasis or dry eczema.
विचर्चिका	Weeping eczema and pemphigus.
पामा, कच्छु	Scabis, itch.
विस्फोटक कुष्ठ	Impetigo eczematodus

विपादिका	Erythema perneo.
कृमिज विपादिका	Lupus perneo.
शुक दद्रु	Tokelau ringworm.
विचर्चिकासह दद्रु	Oriental ,,
दद्रु	Ringworm.
हस्तिचर्म	Hypertrophy of the skin.
एककुष्ठ	Ichthyosis.
चर्मदल	Erythema nodosum.
शतारु	Rupia.
,, कोथमय	,, escharotica.

५०. शीतपित्त, उदर्द कोठ

शीतपित्त	Urticaria.
शीतपित्त जानपदिक	Epidemic urticaria.
उदर्द	Congelation or maculosa urticaria.

५१. अम्लपित्त-Hyperchlorhydria.

आमाशयक्षतज अम्लपित्त	Hyperacidity due to the gastric ulcer.
शूलज ,,	,, due to the colic.
अम्लपित्त (हृदयाधरिकवेदनाजन्य)	Hyperacidity due to pain in epigastrium.
अम्लपित्त तमाखू वषज	Hyperchlorhydria due to tobaccoism.

५२. विसर्प-Erysipelas

कर्दमक	Cellulitis and phlegmonous erysipelas
आग्नेय	Facial erysipelas.
कोथमय	Gangrenous ,,
घातक	Malignant ,,
क्षतज	Traumatic ,,
पित्तज (सज्वर)	Swine ,,
भ्रमणशील	Wandering ,,
श्वेत	White ,,
शोथमय विसर्प	Oedematous ,,
ग्रन्थिविसर्प	Erythema nodosum.

५३. विस्फोट-Pemphigus.

वातज (आशुकारी) विस्फोट	Pemphigus acutus
पित्तज (कोथमय) विस्फोट	,, Gangraenosus
कफज (सौम्य) विस्फोट	,, Benignus.
त्रिदोषज (घातक) विस्फोट	,, Malignus.
रक्तज विस्फोट	,, Haemorrhagicus
एकाकी पृथक् विस्फोट	,, Solitarius
बाल ,, (शैशवावस्था में)	,, Neonatorum.

कण्डूमय विस्फोट	„ Pruriginosus
फिरंगज „	„ Syphiliticus.

५४. मसूरिका-Smallpox, variola

रक्तस्रावी मसूरिका	Haemorrhagic variola
त्रिदोषज „	Malignant „
संमिलित पिडकायुक्त मसूरिका	Confluent „
टीकाहत मसूरिका	Varioloid „
पृथक् पिडकायुक्त मसूरिका	Discrete „
लघु मसूरिका (मोतिया)	Varicella, chicken-pox.
कोथमय मसूरिका	Varicella gangraenosa.
पूयमय मसूरिका	Varicella pustulosa.
रोमान्तिका	Measles.
रक्तस्रावी रोमान्तिका	Haemorrhagic measles.

५५. क्षुद्ररोग

पलित	Grey hair or canitics.
इन्द्रलुप्त (खालित्य)	Alopecia furfuracea.
दारुणक	„ follicularis or favus of the scalp
इन्द्रलुप्त वंशागत	Hereditary boldness.

इन्द्रलुप्त असामयिक अपकर्षज	Alopecia due to pro-geria.
,, अभिघातज	Traumatic alopecia.
पनसिका	Furuncul.
राजिका	Miliaria
दाहमयरक्त राजिका	Lichen planus & ruber
फिरंगज राजिका	Lichen syphiliticus.
मधुमेहज ,,	,, diabeticus.
कदर	Corn.
कक्षा (कोथमय)	Herpes zoster.
पाषाणगर्दभ	Mumps.
मुखदूषिका तारुण्य पिटिका	Acne vulgaris.
पद्मनीकण्टक	Hard papilloma.
विदारिका (बद)	Bubo.
कुनख	Onychophosis.
चिप्प	Onychia.
नखशूल	Whitlow.
परिवर्तिका	Paraphimosis.
अवपाटिका	Tear in the prepuce.
निरुद्धप्रकाश	Phimosis.
सन्निरुद्ध गुद	Stricture of the rectum
वृषणकच्छू	Eczema of the scrotum.

अहिपूतन	Anal dermatitis infantile.
गुदभ्रंश	Prolapsus ani.
अलस	Chilblain.
पाददारी	Rhagades of the feet
तिलकालक (तिल)	Non.elevated mole.
मशक (मसा)	Worts.
जतुमणि	Naevus flammeus.
न्यच्छ	,, Maternus, lentigo
नीलिका	Blue naevus.
व्यंग	Naevus cutaneous.
जालगर्दभ	Irritable inflammation.
शर्करार्बुद	Sebaceous cyst.

५६. मुखरोग

वातज ओष्ठ भेद	Chapped lips.
सन्निपातज ओष्ठ रोग	Herpes labialis.
मांसज ओष्ठार्बुद	Epithelioma of the lips.
मेदज ओष्ठवृद्धि	Macrocheilia.
ओष्ठ क्षत	Sore of the labia.
दंतविद्रधि	Alveolar abscess of the gums.
शीताद	Spongy gums or scurvy.

दन्तपुप्पुट	Gumboil.
दन्तवेष्ट	Pyorrhoea alveolaris.
,, प्रदाह	Gingivitis.
महाशौषिर	Grangrenous stomatitis or cancrum oris.
खल्लिवर्धन	Extra tooh.
दालन	Toothache or odontodynia.
कृमिदन्तक	Dental caries.
दन्तहर्ष	Odonthemodia.
दन्तशर्करा	Tarter.
दन्तनाड़ी	Sinus in the gums.
श्यावदन्त	Dental necrosis.
वातज जिह्वाकण्टक	Cracked tongue.
पित्तज ,,	Red glazed ,,
कफज ,,	Leukoplakia.
अलास	Sublingual abscess.
उपजिह्विका	Ranula.
तालुपाक	Palatitis or ulceration of the palate.
कण्ठशुण्डी	Elongated uvula.
तालुस्थ रक्तार्बुद	Palatal sarcoma.
मांसतान	Diphtheral inflammation.

कण्ठशालूक	Adenoides.
ग्रसनिकाप्रदाह	Pharyngitis.
अधिजिह्विका	Epiglottitis.
मुखपाक	Stomatitis.
गलौघ	Aphthae.
तुण्डीकेरी	Palatal abscess.

५७. कर्णरोग Diseases of the ear.

कर्णनाद	Otosis.
कर्णग्रन्थि	Herper zoster of the ear.
क्रिमिकर्ण	Worm in the ear.
कर्ण विद्रधि	Otopyorrhoea
परिलेहि	Erysipalus of the ear
कर्णशूल	Otalgia or otoneuralgia.
कर्णशोथ	Otitis.
कर्णपाक	Otitis media purulenta
कर्णस्राव	,, media ,,
मूत्रमयकर्णस्राव	Oturia
कर्णपूय	Otorrhoea.
अन्तर कर्णार्बुद	Otoncus.
कर्णार्श	Otopolypus.
बाधिर्य	Deafness.
कर्णप्रतिनाह	Eczematous otitis

रक्तार्बुद	Haematoma auris.
पूतिकर्ण	Foetid discharge from the ear.
कर्णगुथक	Cerumen.
कर्णमल	Otoconia.
श्रवणाभास	Otosis.

५८. नासारोग-Deasises of the nose.

पूतिनस्य	Suppuration due to cerebral abscess.
नासापाक	,, in the nose.
क्षवथु	Sneezing.
नासाकोथ	Gangrenous rhinitis.
नासास्राव (दुर्गन्धमय)	Offensive discharge from the nose.
,, (रक्त)	Epistaxis, nosebleed.
,, (नासाकलासे)	Rhinorrhoea.
नासाशोथ	Drynes of the nose.
नासाशोफ	Rhinophyma.
पीनस	Ozoena.
प्रतिश्याय नूतन	Acute catarrhal rhinitis.
,, जीर्ण	Chronic ,, ,,
,, दुष्ट	Rhinitis Caseosa.
,, स्रावहीन	,, sicca.
,, आगन्तुज	Anaphylactic rhinitis.

नासार्बुद सौम्य	Papillomata of the nose.
,, वृन्तमय	Fibromata ,, ,,
,, कर्कस्फोट	Carcinomata ,, ,,
नासाक्षय	Butterfly lupus or tuberculosis of the skin of the nose.
नासार्श	Polypus of the nose.
दीप्त	Acne rosacea.
नासासेतु नमन	Saddleback nose.

५६. नेत्ररोग-Diseases of the eye.

लिंग नाश	Cataract.
अभिघातज लिंग नाश	Traumatic Cataract.
नक्तान्ध्य	Retinitis pigmentosa
दिवान्धता	Day blindness.
नकुलान्ध्य	Lagophthalmus.
अव्रण शुक्र (अर्जुन)	Corneal opacities.
अजकाजात	Cyst of Retina or serous cyst of iris.
अधिमांसार्म (वेल)	Pterygium.
कुम्भीका	Ulcers of eyelids.
पिष्टक	Pinguecula.
उत्संगिनी (अक्षिपुटपिटिका)	Furuncles of lids.

वर्त्मबंधक	Oedema of lids.
अक्लिन्नवर्त्म	Ulcers of ,,
अर्शोवर्त्म	Herpes zoster Ophthalmicus.
पोथकी	Trachoma.
शोणितार्श	Molluscum simplex of eyelids.
अंजनदूषिका	Stye, Hordeolum.
स्नाय्वर्म	Tumour of cornea.
वातहतवर्त्म (अक्षिपुट पतन)	Ptosis, Blepharoptosis.
वर्त्मार्बुद	Tumours of eyelid.
पक्ष्मकोप (परवाल)	Districhiasis.
पक्ष्मशात (पक्ष्मधाराप्रदाह)	Margina blepharitis.
पूयालस	Dacryocystitis.
उपनाह (अश्रुजनकपिण्ड प्रदाह)	Dacryo-adenitis
अलजी	Tumours of eyelids.
जन्तुग्रन्थि ?	Pediculi ciliaris of lids
अभिष्यन्द (स्रावयुक्त)	Catarrhal conjuntivitis.
सशोथ नेत्रपाक	Phlyctenuler ,,
अभिष्यन्द पूयमय	Opthalmia.
अर्धदृष्टिक्षेत्रनाश	Hemiopia.

सिरोत्पात	Phlyctenullar pannus.
सफेदी (पोथकी जन्य)	Pannus.
नेत्रपेशीघात (अक्षि आंदोलन)	Nystagsmu.
अश्रुस्राव	Epiphora.
अधिमन्थ	Primary glaucoma.
हताधिमन्थ	Fulminant glaucoma.
वातपर्यय दर्शननाड़ी शीर्ष शोथ ?	Papilloedema or papillitis.
शुष्काक्षिपाक	Xerosis.
आमयुक्त अक्षिपाक	Catarrhal conjunctivitis.
अम्ल ध्युषित अक्षिपाक	Catarrhal ophthalmia.
शिराप्रहर्ष (तारा मण्डल शोथ)	Iritis.
पिटिकाक्षत (कुकूणक)	Phlyctenula.
द्विदर्शन	Diplopia.
नेत्रकोथ	Gangrene of the eye.
नयन जलोदर	Hydrophthalmos.
तृतीयपटलशोथ (दर्पण शोथ)	Retinitis.
दृष्टिनाश	Amblyopia.
मधुमेहज दृष्टिनाश	Diabetic amblyopia.
तमाखू जन्य ,,	Tobacco ,,
लघु दृष्टि	Myopia.

दूर दृष्टि	Hypermetropia.

६०. शिरोरोग-Cerebral diseases

एक या द्विदोषज शिरदर्द	Symptomatic headache.
त्रिदोषज शिरदर्द	Toxic headache.
ज्वरज ,,	Pyrexial ,,
विषज ,,	Toxic ,,
दूषित वातज ,,	Headache due to the gas.
कृमिज (प्रबल) शिरदर्द	Dynamite headache
रक्तसंग्रहज शिरदर्द	Congestive ,,
अर्धावभेदक ,,	Hemicrania.
सूर्यावर्त ,,	Migraine.
पाण्डुजनित ,,	Anaemic headache.
अजीर्णज ,,	Headache in dyspepsia
अपस्मारज ,,	,, in epilepsy.
प्रतिश्यायज ,,	Catarrhal headache.
वृक्कप्रदाहज ,,	Headache due to the nephritis.
अनंतवात ,,	Headache due to the intracranial pressur.
शंखक ,,	Headache due to the cerebral apoplexy.

६१. आर्तवरोग-Menstrual diseases.

असृग्दर (रक्तप्रदर)	Menorrhagia & metrorrhagia.
श्वेतप्रदर	Leucorrhoea.
,, पित्तज	Watery ,,
,, त्रिदोषज (श्लेष्मपूयसह)	Mucopurulent discharge due to the infective disease.
सोम	Metrorrhoea.
पीड़ितार्तव	Dysmenorrhoea.
अनार्तव	Amenorrhoea
आर्तवरोध	Menostasia.
स्थानान्तरित आर्तव	Menometastasis.
तीव्रगति से आर्तवस्राव	Menorrhoea
रजोरोधकाल	Menopause.

६२।६३. योनिव्यापत्, योनिरोग और योनिकंद

योनिरोग	Vaginal diseases.
उदावर्ता	Dismenorrhoea.
वंध्या	Sterile.
कर्णिका	Fibroid or cyst in the uterus.
परिप्लुता	Dyspareunia.
लोहित क्षरा	Menorrhagia.
अत्यानन्दा	Nymphomania.

पित्तला	Vaginitis.
प्रस्रंसिनी	Descensus uteri.
श्लेष्मला	Creamy vulvitis.
अण्डिनी	Frank prolapse or procidentia.
विवृता	Vulva hiance.
ओष्ठसंलग्ना	Synechia vulvae.
सूचीवक्त्रा	Vulva connivens.
योनिकंद	Vaginal polypus.
योनिकण्डू	Pruritus vulvae.
योनिवृद्धि	Vaginal hydrocele.
विप्लुता (गर्भाशयान्तर प्रदाहज)	Endometritis.
परिप्लुता	Vaginismus.
वातला	Vaginodynia.
आनंदचरणा	Leukoplacic vulvitis.
अतिचरणा	Vaginitis.
वंध्यत्व	Sterility, barrenness.
योनिमार्गमें आतवसंग्रह	Hematocolpos.
योनिलिङ्गवृद्धि	Clitorism.
विदारित योनिमार्ग	Lacerated vulva
श्रोणिशोथ	Pelvic cellulitis.
वातप्रकोप गर्भाशयमें	Physometra.
बीजकोष अधःपतन	Prolapse of the ovary.
बीजवाहिनी प्रदाह	Salpingitis.

गर्भाशय नमन	Flexion of the uterus
गर्भाशयावर्तन	Version of the uterus
गर्भाशयपुरोवर्तन	Anteverson „ „
गर्भाशय पश्चाद्वर्तन	Retroverson „ „
गर्भाशय अधःपतन	Downward displacement of the uterus.
अश्मरीरूप गर्भ	Lithopaedion.

६४. मूढगर्भ-Mal-presentation of the foetus

अमरावरोध	Retention of the placenta.
गर्भाशय भेद	Rupture uterus.
गर्भोदक	Liquor amni.
गर्भस्राव	Abortion.
गर्भपात	Miscarriage.
मृत गर्भ	Dead foetus.
पूर्वकालप्रसव, अकाल प्रसव	Prmature labour, Partus immaturus,
दीर्घकाल प्रसव	„ serotinus, postponed labour.
कष्ट मय „	Dystocia.
„ अमरापातन	Placental dystocia.
गर्भविष, स्त्रैजज अपस्मार	Eclampsia of prgnancy.

कील	Obstructed passage with the head, hands and feet of foetus.
परिखुर	Presentation with two hands and two legs.
परिघ	Transeverse presentation.
बीजक	Presentation of the head with one or two hands.
गर्भाश्मक ग्रन्थ	Corpus luteum.
भ्रूणहत्या	Foeticide.

६५.सूतिका रोग-Diseases in the confinement

ज्वर	Puerperal fever.
गर्भविषज आक्षेप	,, eclampsia.
विद्रधि (श्रोणिगुहागत)	Pelvic abscess.
पूतिविकार	Puerperal sepsis.
सिरा प्रदाह	,, phlebitis.
,, सहपादशोथ	White leg.
मक्कलशूल	After pains.
गर्भाशय पेशीकला प्रदाह	Metritis.

६६/६७. स्तनरोग और स्तन्यदुष्टि

स्तन रोग	Diseases of mamma
स्तन प्रदाह	Mastitis.
„ (सूतिकावस्था)	Puerperal mastitis.
कर्कस्फोट	Carcinoma mastitoides.
स्तनकाठिन्य	Hardness of breast.
„ विद्रधि	Mammary abscess.
„ पीड़ा	Mammalgia.
चूचुकप्रदाह	Mammillitis.
स्तन्योत्पत्ति	Lactation.
विषमय स्तन्य (सगर्भावस्थामें)	Toxemic milk in pregnancy.
चिपचिपास्तन्य	Viscid milk.
स्तनार्बुद (स्तन्यपूरित)	Galactocele.
अपोषक स्तन्य	Unnutritious milk.
दुर्गन्धमय स्तन्य	Rotten milk.

६८. बालरोग-Diseases of infancy & childhood.

तीव्र ज्वर	Hyperpyrexia.
कुकूणक	Ophthalmia in infants.
पारिगर्भिक	Pining, malnutrition.

नाभिप्रदाह	Umbilical inflammation.
तालु कण्टक	Palatal polypus
महापद्म विसर्प	Pelvic & phlegmonus cellulitis.
सर्वाङ्गवात	Diplegia.
बालाक्षेप	Infantile convulsions
अर्धाङ्गवात	Hemiplegia.
आक्षेपज ऊरुस्तम्भ	Paraplegia due to convulsions.
रसक्षय	Cealiac disease.
वृक्कप्रदाह	Nephritis.
वमन	Vomiting.
यकृतोदाली	Cirrhosis.
अन्त्रदा कृमि	Hookworm
अतिसार	Diarrhoea.
हिक्का	Hiccough.
कामला	Jaundice.
स्कंद ग्रहार्त (आशुकारी मस्तिष्क पिंगलज्वर प्रदाह)	Acute polioencephalitis.
स्कंदापस्मार ग्रहार्त (कर्णपाकज मस्तिष्क विद्रधि)	Cerebral abscess due to otitis media.
शकुनीग्रहार्त, विस्फोटज विचर्चिका	Impetigo eczematodes or erythroedema polyneuritis.

रेवती ग्रहार्त (पूतिमय रोहिणीज्वर)	Nodal fever (erythema nodosum.)
पूतना ग्रहार्त (रक्तविसर्पसहसंधिवात)	Erythroderma polyneuritica.
अन्धपूतना ग्रहार्त (आमाशय-अन्त्रप्रदाह)	Gastro-enteritis (food poisoning.)
शीतपूतना ग्रहार्त (स्वतन्त्रनाड़ीसंस्थानगत घातकार्बुद)	Neuroblastoma sympatheticum.
मुखमण्डिका ग्रहार्त (वातबलात्मक ज्वर आशुकारी वृक्कप्रदाह)	Acute nephritis.
नैगमेय ग्रहार्त, सुषुम्ना पिङ्गलवस्तुप्रदाह	Cerebrospinal fever.
मस्तिष्क मज्जाप्रदाह	Osteomyelitis.
मस्तिष्क सुषुम्ना पिङ्गलवस्तु प्रदाह	Poliomyeloencephalitis.
सुषुम्ना पिङ्गलवस्तु प्रदाह	Poliomyelitis Infantile paralysis)
शुष्कचर्म	Xeroderma.
अस्थिमार्दव	Infantile ostiomalacia
अस्थिरचनाक्षय	Rickets.
वामनकाय	Dwarfism.
बृहत् काय	Jigantism.
शीर्षजलोदर	Hydrocephalus.
रोहिणीज्वर	Diphtheria.

विस्फोटक	Impetigo.
दारुणक	Alopecia areata.
विसर्पणशील विचर्चिका	Psoriasis.
लघुमसूरिका सहशीतपित्त	Lichen urticatus.
असामयिक जरावस्था	Progeria.
नृत्यवात	Chorea.
जीवनीशक्ति ह्रास	Asthenia.
,, नाड़ी रक्तसंस्थान-विकृतिसह	Neurocirculatory asthenia.
,, पेशीवेदना सह	Asthenia myalgic.

६६. विषरोग

सर्पविष	Snake poisoning.
आखुविष	Ratbite fever or poisoning.
वृश्चिकविष	Scorpionbite poisoning
बन्द आहारज विष (डिब्बेके फल आदि का विषप्रकोप)	Can poisoning.
दूषित भोजनजनित विष	Food ,,
,, दूध ,,	Milk ,,
,, मांस ,,	Meet ,,
नाग (शीशा) विष	Saturnine poisoning
तमाखू विष	Tobacco ,,
विषतन्दुकज विष	Nuxvomica ,,

अन्तर् रचना विनाशक द्रव्यज विष	Corrosive fluid poisoning.
मल्लविष	Arsenic poisoning.
पारदलवण विष	Mercury ,,
रौप्यलवण विष	Silver ,,
वत्सनाभ विष	Aconite. ,,

७०. ध्वजभंग-Impotence

क्लैब्य शिश्नकी विकृत रचनाजनित	Impotence due to malformation of penis.
क्लैब्य शुक्रह्रासज	Impotentia coeundi.
क्लैब्य शिश्नक्रिया ह्रासज	,, Erigendi.
,, जन्मसिद्ध	Congenital impotence
,, मनोह्रासज	Demential ,,
,, मधुमेहज	Diabetic ,,
,, फिरंगज	Syphelitic ,,
,, वृद्धावस्थाजन्य	Senile ,,
,, चिंता जन्य	Impotence due to anxiety neurosis.
,, पाण्डुजन्य	Impotence due to anamia.
,, मद्यविषज	,, ,, alcoholism
,, अहिफेनज	,, ,, opiumism.
,, हस्तमैथुनज	,, ,, Masturbation.

गुदमैथुन	Sodomy, buggery.
पशुमैथुन	Bestiality.
मुखमैथुन	Buccal Coitus.
स्त्रीमैथुन	Copulation, Coitus.
व्यभिचार	Adultery.
शुक्राणुहीन शुक्र	Azoospermia.
न्यून शुक्राणुमय शुक्र	Oligospermia.
मृत शुक्राणुमय ,,	Necrospermia.
वातक्षय	Neurasthenia.
,, ज ध्वजभंग	Sexual neurasthenia.

मथर ज्वर-Typhoid.

(ज्वरप्रकरणमें देखें)

स्नायुक-Filariasis.

शीतला-Smallpox

(मसुरिकामें देखें)

७०. कार्श्य-Marasmus, Emaciation.

शिशुका कार्श्य	Marasmus infantile.
धमनीशोफज कार्श्य	Chlorotic marasmus.
चिंताजन्य	Marasmus due to anxiety.
शोषप्रधानरोगज	,, ,, wasting diseases.

७१. आगन्तु पूयमेह-Gonorrhoea.

बालकोंमें पूयमेह	Gonorthoea in children.
लीन धातुगत या विभिन्न संस्थानोंमें पूयमेह	Metastatic gonorrhoea
रक्तस्रावमय पूयमेह	Black ,,
उपद्रव (मुख्य)	Complicants.
पौरुषग्रन्थिशोथ	Prostitis.
वृषणशोथ	Orchitis.
भगशोथ	Vaginitis.
गर्भाशय शोथ	Metritis.
बीजाशयशोथ	Ovaritis.
बस्ति शोथ	Cvstltis.
मांजिष्ठमेह	Hemoglobinuria.
गवीनी शोथ	Ureteratis.
वृक्कशोथ	Nephritis,
वातरक्त	Gout.
संधिशोथ	Arthritis.
वृषण विद्रधि	Abscess of testis.

७२. फिरंग-Acquired syphilis.

प्रथमावस्था	Primary stage.
जीर्णावस्था	Secondary or generalization stage.
गुप्त फिरंग	Latent syphilis.

तृतीयावस्था	Tertiary „
हृदय और रक्तवाहक संस्थान गत फिरंग	Cardiovascular syphilis.
केन्द्रीय नाड़ी संस्थान गत फिरंग	Syphilis of the central nervous systeem.
जन्मजात फिरंग	Congenital syphilis.

७३. संधिवात-Arthritis.

औपसर्गिक मेहज संधिवात	Gonorrhoeal arthritis.
पूयमेहज संधिवात	Suppurative „
फिरंगरोगज „	syphilitic arthritis.
जन्मार्जित फिरंगज „	Congenital syphilic arthritis.
रक्तस्रावमह संधिवात	Hemophilic „
वातरक्तज „	Gouty „
आमवातज „	Rheumatic „
शोषसह „	Atrophic „
अपक्रांतिकर „	Degenerative „
नाड़ीक्रियाविकारज संधिवात	Neuropathic „
शुष्क „	Arthritis sicca
रचनाविकृतिसह „	„ Deformans
संधिक्षय	White swelling.
संधिशूल	Arthrodynia.
अस्थिसंधिशोथ	Osteo-arthritis.

संस्था का आय व्यय का हिसाब

कृष्णगोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय और उसके अन्तर्गत कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन, दोनों की आय का मुख्य स्थायी साधन औषध पुस्तक बिक्री है। गौण अनिश्चित साधन चन्दे की प्राप्ति है। जमीन की आय या वार्षिक नियमित चन्दा द्वारा कोई आय नहीं है। जो आय नफा प्राप्त होता है, वह सब जनता-जनार्दन की सेवा में और आयुर्वेद की उन्नति में ही लगाया जाता है। इसकी जांच सर्वदा संस्था के सेक्रेट्री और स्वामीजी महाराज द्वारा होती रहती है और प्रतिवर्ष चार्टर्ड आडिटरोंद्वारा हिसाब की जांच भी कराई जाती है। फिर कार्य विवरण प्रकाशित करके बाहर भेजा जाता है।

सेवा-कार्य, व्यवहार की सच्चाई और प्रामाणिकता के हेतु से आपकी यह संस्था उत्तरोत्तर उन्नति कर रही है। सरकार और जनता का सहयोग मिल रहा है। फिर भी जितना अधिक सहयोग मिलेगा, उतना ही सेवाकार्य अधिक व्यापक हो सकेगा।

मन्त्री—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वैदिक धर्मार्थ औषधालय

पो० कालेड़ा कृष्णगोपाल (अजमेर)

भस्म रसायन आदि औषधियां